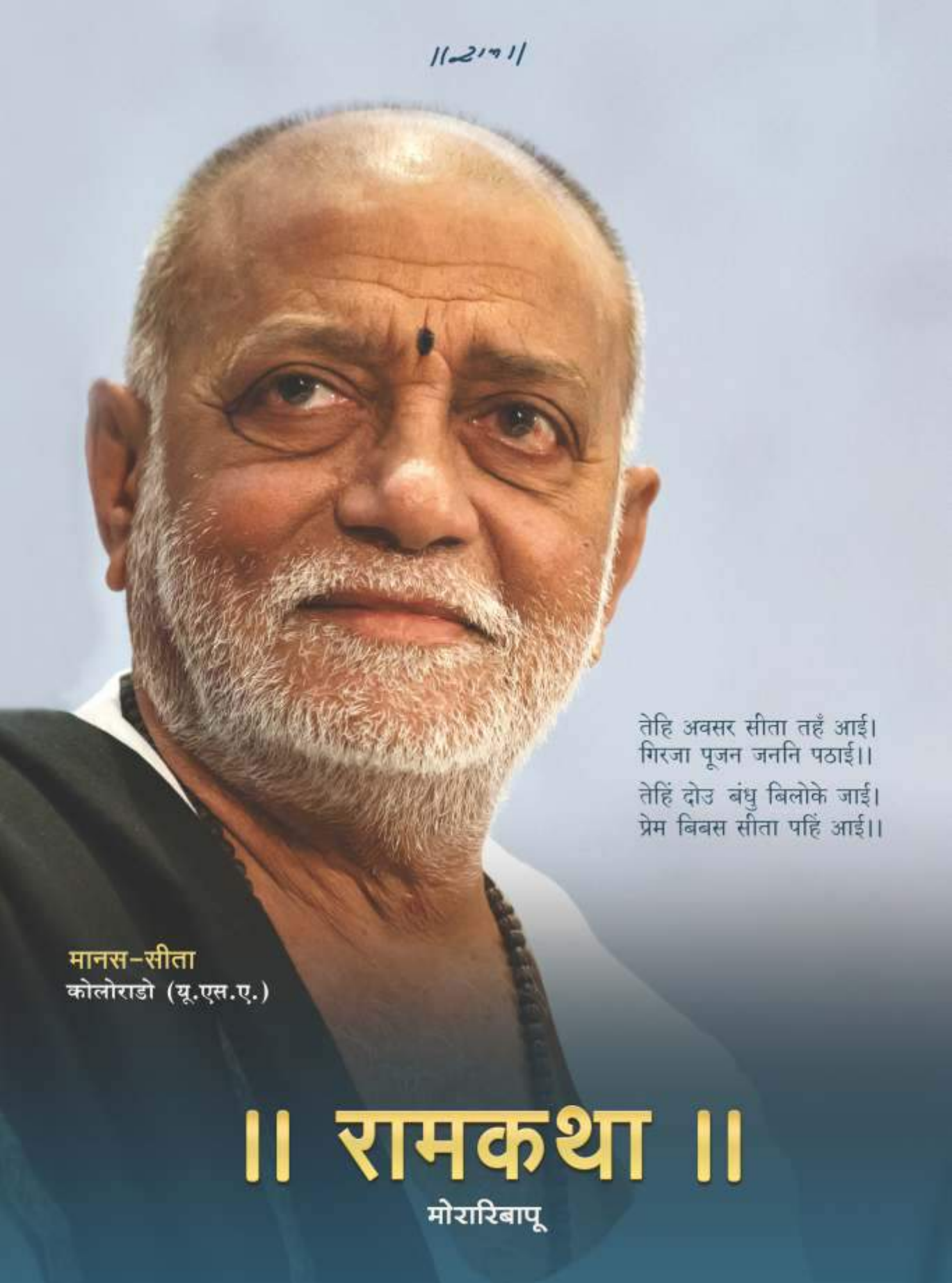

तेहि अवसर सीता तहँ आई।
गिरजा पूजन जननि पठाई।।

तेहिं दोउ बंधु बिलोके जाई।
प्रेम बिबस सीता पहिं आई।।

मानस-सीता

कोलोराडो (यू.एस.ए.)

।। रामकथा ।।

मोरारिबापू

|| रामकथा ||
मानस-सीता

मोरारिबापू
कोलोराडो (यू.एस.ए.)
दिनांक : २४-६-२०१७ से २-७-२०१७
कथा-क्रमांक : ८१४

प्रकाशन :
जनवरी, २०२०

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने दिनांक २४-६-२०१७ से २-७-२०१७ के दिनों में कोलोराडो (यू.एस.ए.) में रामकथा का गान किया। अमरिका निवासी और 'मानस' की श्रोता एवम् अभ्यासी सीतेशरणजी का अपने निवास की रमणीय जगह पर बापू की कथा हो ऐसा सालों से मनोरथ था। जब योग बना तो बापू ने उसका निमंत्रण स्वीकार किया और पूर्वनिश्चित विषय 'मानस-सीता' पर कथा को केन्द्रित की।

'मानस' के मंगलाचरण के एक श्लोक में गोस्वामीजी ने माँ सीता की वंदना की है उसका बापूने विशद विवरण किया। संसार का उद्भव करनेवाली, पालन करनेवाली, लय करनेवाली, क्लेश को मिटानेवाली, सर्वका श्रेय करनेवाली और रामप्रिया माँ सीता का बापू ने सदृष्टांत परिचय दिया।

'मानस' में जितने महत्त्व के पात्र है उसका श्रेय सीता ने किया है, ऐसे निवेदन के साथ बापू ने कहा कि सबसे पहले सुग्रीव का श्रेय सीता ने किया है। सुग्रीव को देखकर रावण द्वारा अपहृत जानकी अपने वस्त्र-अलंकार सुग्रीव पर फ़ेंकती है यह उसके श्रेय का श्रीगणेश है। रावण का श्रेय भी जानकी द्वारा ही हुआ। अंगद का श्रेय भी माँ जानकी ने किया। हनुमानजी पर तो माँ बरस चुकी है। औरों का श्रेय तो किया ही लेकिन रामजी का श्रेय भी सीता ने ही किया है।

सीता के जन्म की भिन्न-भिन्न कथाओं का जिक्र करते हुए बापू ने दो बार रेखा से बाहर आई सीता के संदर्भ में अपना स्पष्ट मत प्रगट किया कि एक रेखा से सीता बाहर आई उसके पीछे ऋषिकृत्य है और दूसरी रेखा से सीता बाहर आई उसमें राक्षसवृत्ति है। राक्षसवृत्ति से पैदा हुई सीता मुझे रास नहीं आती। मुझे रास आएगी सीता जो ऋषि संस्कृति से पैदा हुई। बापू ने सीता के व्यक्तित्व का तात्त्विक दर्शन भी किया और व्यक्ति, विचार, वृत्ति, परमपवित्र विरक्ति और अलौकिक विवेक जैसे सीता के पांच पहलूओं पर भी प्रकाश डाला।

बापू ने 'सीतोपनिषद' के एक मंत्र में निर्दिष्ट सर्ववेदमयी, सर्वदेवमयी, सर्वलोकमयी, सर्वकीर्तिमयी, सर्वधर्ममयी इत्यादि सीता के लक्षणों को उद्घाटित किया। 'मानस' के सात सोपान में सीता के सात रूप को रेखांकित करते हुए बापू का कहना हुआ कि 'बालकांड' में सीताजी का किशोरीरूप है। 'अयोध्याकांड' में सीता का कुलवधू का रूप है। 'अरण्यकांड' की सीता तपस्विनी सीता है। 'किष्किन्धाकांड' की सीता खोजी गई सीता का रूप है। 'सुन्दरकांड' की सीता विरहिणी सीता है। 'लंकाकांड' की सीता है स्वर्णिम सीता, जो अग्निपरीक्षा से कनकपंकज की कली बनकर बाहर आई। 'उत्तरकांड' की सीता महाराणी है।

'मानस-सीता' रामकथा में बापू ने यूं वाल्मीकि, व्यास और तुलसी की आंखों से एवम् अपनी तलगाजरडी आंखों से भी सीता का दर्शन किया।

– नीतिन वडगामा

'मानस' के महत्त्व के पात्रों का श्रेय सीता ने किया है

तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरजा पूजन जननि पठाई।।
तेहिं दोउ बंधु बिलोके जाई। प्रेम बिबस सीता पहिं आई।।

बाप! फिर एक बार अमरिका में रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ। केवल भगवद्कृपा। इन नव दिवसीय भगवत्कथा के प्रथम दिन के प्रारंभ में हमारे आदरणीय मेहमान आये और अपनी प्रसन्नता व्यक्त करके स्वागत किया सबका। मैं भी आपका स्वागत करता हूं और यह पूरे प्रदेश के लिए हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हूं। यह जो स्थान है, इतना सुंदर है; और ओर सुंदर बना रहे। संपन्नता और प्रसन्नता यहां बरसती रहे ऐसी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हुआ यहां की जनता के लिए मेरी बहुत-बहुत शुभकामना और दुवाएं पेश करता हूं। पूज्य स्वामीजी महाराज, पूजनीय सीतेशरणजी, आप सभी मेरे श्रोता भाई-बहन, सभी को मेरा प्रणाम।

चौबीसवीं तारीख अनुसार अषाढ़ शुक्ल प्रथम पदा है। आज से अषाढ़ी नवरात्र शुरू हो रही हैं। इस नवरात्र को हमारे ग्रंथों ने गुप्त नवरात्र माना है। देश में सुबह हो चुकी है। आज रथयात्रा का दिन है। अषाढ़ शुक्ल बीज है। आप सभी को अषाढ़ी नवरात्र और अषाढ़ी बीज, भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा की भुरिशः बधाई, शुभकामना। और रमजान चल रहे हैं; इद भी आनेवाली है। आप सबको बहुत-बहुत मुबारक हो। अषाढ़ नवरात्र की बधाई। इन नव दिनों को भगवान रामदेव को माननेवाले रामदेव नवरात्र भी कहते हैं। हमारे यहां कार्तिक मास से लेकर अश्विन तक पहले नव दिन जो शुक्ल पक्ष के होते हैं वो सभी नवरात्र के माने जाते हैं। प्रसिद्ध और बहुत दिखाइ देनेवाली दो नवरात्र है अश्विन और चैत्र। बाकी प्रत्येक मास के शुक्ल पक्ष के नव दिन नवरात्र ही मानते हैं। प्रत्येक शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को शिवरात्रि ही मानते हैं। लेकिन मूल शिवरात्रि माघ महिने में। तो यह नवरात्र के पवित्र दिन है।

हमारे सीतेशरणजी का सालों पहले निमंत्रण था कि बापू, जिस जगह में मैं निवास करती हूं वह रमणीय जगह पर हम एक कथा करवाना चाहते हैं। और करीब चालीस साल पहले आज ही के दिन मैं अमरिका एर इन्डिया में आया हूं। चालीस साल पहले इस जगह पहली मेरी 'मानस'-यात्रा लेकर आया। और मैंने कई बार यह बात आपके सामने रखी है; पुनः स्मरण करने जी करता है कि योगानुयोग हमारी सीट साथ-साथ थी। इकोनोमी क्लास में बड़े आनंद से मुसाफ़री करते थे। जमाने बीत गए। पहली बार केनेडा जा रहा था। अकेला ही था तो साथ में अच्छा संग मिल गया। पहचान तो नहीं थी लेकिन तिलक देखा, वेश देखा। सबसे बड़ी खुशी तो तब हुई जब खाने का आया तब आपने वेजीटेरियन ओर्डर किया। मैंने देखा ऐसे ही विवेक से। तब आपने छोटी-सी डिब्बी में से तुलसी निकाला और अपनी डीश में डालके आंखें बंद करके 'जय जय सुरनायक जन सुख दायक प्रनतपाल भगवंता।' मैंने कहा, लो, कैसा योग है! वह तो 'मानस' गा रही है! बातचीत हुई। आपने बातें की। फिर मैं न्यूयोर्क उतरा तो मुझे बहुत मदद की। मेरा सामान उठाने में मदद की क्योंकि लोगोंने मुझे बहुत सामान दिया था। तो इतना सामान और मैं अकेला! मुझे बहुत मदद की। एर इन्डिया तो एर इन्डिया! फ्लाइट लेइट हो गई तो मैं टोरन्टो की फ्लाईट मिस कर गया! मुझे कुछ आये ना! न पैसे, न कुछ! अब जाए तो जाए कहां? तो हमारे चंदनबेन पारेख घाटकोपर में रहते हैं उसका बेटा न्यूयोर्क में रहता है तो उसने उसको बताया कि बापू इस तरह न्यूयोर्क पहली बार जा रहे हैं तो ऐसे ही मिलने आये। उसने मेरी नई टिकट टोरन्टो की दी। सीते शरणजी मेरे साथ-साथ देर तक रही। फिर उसकी फ्लाइट थी। तब से चालीस साल पुराना यह राम का नाता। और हिन्दी अच्छा जानती है। 'मानस' पर बहुत काम किया। कथा बहुत साल से सुनती है। अमरिका की तो शायद कोई भी कथा छोड़ती नहीं। आपका निमंत्रण था और मेरे मन में भी था, एक बार सीतेशरणजी को कथा दूंगा लेकिन योग नहीं बनता था।

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।

इस बार योग बन गया इसलिए इस कथा के केन्द्र में, मूल में सीतेशरणजी है। वो तो अकिंचन हालत में है, फ़कीरी हालत में है। फिर जो 'मानस' के प्रति सभी आदर रखनेवाले हैं। किन-किन का नाम लूं? सभी ने कहा कि बापू, हम

सीतेशरणजी के साथ है और सब सेवा बांट लेंगे। सबने बहुत अच्छा आयोजन किया। लेकिन हमारे कुसुमबहन, सुधीरभाई परिवार की उनकी खुद की एक इच्छा थी कि एक कथा करवाएं। ऐसा योग नहीं था, समय नहीं था। फिर संदेश भेजा गया कि बापू, सीतेशरणजी की कथा में यजमान पद मिले तो हमारा परिवार सेवा करने के लिए तैयार है। तो आपके परिवार ने बहुत बड़ी तगड़ी वित्तजा सेवा की है। और वैसे सभी आप यजमान ही है। किन-किन का नाम लूं? युवान लड़के लग गये; मार्गदर्शन देनेवाले सभी मिल गये। इसके फलस्वरूप आज हम यहां है। और मेरे मन में विषय भी निश्चित था, जब यहां कथा करेंगे तो विषय रखेंगे 'मानस-सीता।' सीतेशरणजी का जीवन माँ जानकी में समर्पित है। आपके गुरुजी ने नाम भी सीतेशरण दिया। यजमान परिवार को मैं साधुवाद दूं। हमारे सभी वडीलगण उसमें जुड़ गए। सभी को में साधुवाद देता हूं। सीते शरणजी का मनोरथ पूर्ण होगा। मैं प्रसन्न हूं। मैंने केवल तुलसीपत्र देखकर उसको प्रणाम किया था और वो पूरी तुलसी की कथा ले आई यहां! एक योग होता है। हमारा भी ऐसा योग कि क्रमशः तीनों कथा पहाड़ों में हो रही है। अभी कुछ दिन पहले केदार में थी। फिर पंचगिनी में थी। और फिर यहां। बहुत सुंदर स्थान है; रमणीय स्थान है। तो मैं पहले दिन अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। दूर नगरी है, नजदीक तो नहीं। दुनियाभर के मेरे फ्लावर्स जो व्यासपीठ के प्रति अपनी महक लुटा रहे हैं, जो अपनी खुश्बू है अपने-अपने स्वभाव की, अपने-अपने शील की। इस बहाने सबको मिलना होता है। मैं आप सबको देखकर पुनः एक बार अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। खुश रहो बाप! खुश रहो।

तो इस नव दिवसीय कथा का केन्द्रीय विषय रहेगा 'मानस-सीता।' मुझे स्मरण है 'मानस-मैथिली' कथा हुई है बिहार में। 'मानस-जानकी' विठुर में हुआ है। वाल्मीकिजी ने बहुत स्पष्ट कहा, 'सीतायाः चरितं महत्।' मेरी रामकथा में किसी का चरित महत् है तो वह सीता का ही है, ऐसा वाल्मीकिजी कहते हैं। तो सीता, माँ जानकी इनमें से सीता जो उनका मूल नाम है उसको केन्द्र में रखते इस अषाढ़ी नवरात्र में हम माँ का दर्शन करेंगे। दोनों पंक्तियां जो मैंने 'बालकांड' से उठाई आप सब जानते हैं। सबसे पहला 'सीता' शब्द का प्रयोग तुलसी ने मंगलाचरण में किया। 'सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणौ।।' वहां सीता-राम दोनों को जोड़कर दोनों की कथा है। यद्यपि राम और सीता एक ही है। फिर भी सीता को केन्द्र में रखते हुए संवाद के रूप में सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करेंगे। तो वहां रामजी के संग सीता का नाम जोड़कर जिस के गुणगानरूपी पुण्य अरण्य में विहार करनेवाले हनुमानजी और वाल्मीकि की कथा आप जानते हैं, जो मंगलाचरण में है। लेकिन उसके बाद स्वतंत्र रूप में सीता की वंदना तुलसी ने 'मानस' में की है वहां से शरू करें।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ।।

मंगलाचरण के एक श्लोक में स्वतंत्र रूप से गोस्वामीजी माँ सीता की वंदना करते हैं। कैसी है ये माँ? 'उद्भवस्थितिसंहारकारिणीम्।' संसार को प्रगट करनेवाली, पैदा करनेवाली; फिर पालन करनेवाली। और पालन करते-करते जो अनावश्यक वस्तु जुड़ जाती है तो उसका संहार करनेवाली है। फिर दूसरा उसका लक्षण बताया 'कलेशहारिणीं'; कौन है सीता? क्लेश को हरनेवाली। फिर तीसरी बात लिखी सर्व कल्याण करनेवाली। जगत में कल्याण की जितनी परिभाषाएं होगी वो सब करनेवाली। अथवा तो सबका कल्याण करनेवाली, सबका मंगल करनेवाली। 'नतोऽहं रामवल्लभाम्।' तुलसी कहते हैं, मैं उसको प्रणाम करता हूं। किस सीता को? 'रामवल्लभाम्।' रामप्रिया; राम को अत्यंत जो प्रिया है, वो सीता जो उद्भव करनेवाली, पालन करनेवाली, लय करनेवाली क्लेश को मिटानेवाली है और सर्व का कल्याण करनेवाली है; ऐसी सीता को तुलसी कहे, मैं प्रणाम कर रहा हूं। यह श्लोक 'बालकांड' के मंगलाचरण का। यहां से 'सीता' शब्द का स्वतंत्र रूप में प्रारंभ हो रहा है। और जहां-जहां 'सीता' शब्द है उसके उपर हम केन्द्रित होंगे। और इस सीता का दर्शन करते-करते हम अपने जीवन को विशेष प्रसन्न कर सके; अध्यात्मयात्रा को ओर विशेष आगे ले जा सके, ऐसा कुछ हो नव दिन में तो विशेष प्रसन्नता होगी।

माँ के रूप में सीता को लो तो जननी जो होती है वो प्रगट करती है, पालन करती है। बाप पालन नहीं करता। बाप तो जोब पर जाता है, ड्यूटी पर जाता है, इधर जाता है, वहां जाता है, क्लब में जाता है! मैं कोई खराब रूप में नहीं कर रहा हूं। उनको कई काम है। कथा में भी जाता है। मूल पालन करनेवाला कोई मातृतत्त्व है तो वो माँ है। और खेलते-खेलते बच्चे के शरीर पर अनावश्यक गंदगी लग गई हो तो उसको मिटानेवाली भी माँ ही होती है। बाप थोड़ा नहलाता है? माँ ही नहलाती है। उसको मिटानेवाली भी माँ ही है। एक सामान्य रूप में, एक मौलिक रूप में माता के यह तीनों लक्षण है। सीता तो जगदंबा है, आह्लादिनी शक्ति है परमात्मा की।

दूसरी बात, क्लेशहारिणी; सीता क्लेशहारिणी है। हम बोलते हैं कि हमारे जीवन में कलेश बहुत है। क्लेश मानी कष्ट कह दो। लेकिन यह ठीक भाषांतर पर्याप्त नहीं है। आध्यात्मिक रूप में जो क्लेश है वो बहुत स्पष्ट रूप में भगवान पतंजलि ने विश्व को दिया। क्लेश किसको कहते हैं? अंग्रेजी में क्या कहते हैं, स्ट्रगल? आदमी बहुत समस्याओं से घिरा हुआ है। और 'मानस' में तुलसीदर्शन में क्लेश की बहुत गंभीरता से नोंध ली है। हम और आप सब 'हनुमानचालीसा' करते हैं तब तुलसी क्या कहते हैं?

बुद्धिहीन तनु जानिके सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं हरहु कलेस बिकार।।

तुलसी कहते हैं, मेरे जो विकार और क्लेश है उसको हर दो। यहां माँ जानकी को प्रार्थना नहीं करनी पड़ती है; वो स्वाभाविक क्लेशहारिणी है; क्लेश को मिटा देती है। छोटे-बड़े हमारे संसार के क्लेश भी माँ है तो हटायेगी। लेकिन यहां पतंजलि को ही बीच में प्रणाम करना होगा। पतंजलि ने अपने योगसूत्र में क्लेश की चर्चा की है। और क्लेश है पांच। आप सब जानते हैं लेकिन पतंजलि का स्मरण आया है तो स्मरूं। और जिस महापुरुष ने योगदर्शन दिया; पांतजलि योगदर्शन और अभी इक्कीस जुन को पूरे संसार ने योग दिन मनाया; पूरी दुनिया ने मनाया। हमारे रामदेवजी बाबा ने तो अहमदाबाद में कितने रेकोर्ड स्थापित कर दिये! पतंजलि ग्रंथ में जो योग अभ्यास था वो दुनिया में कितने लोगों तक बाबा रामदेवजी ने पहुंचाया! उसका श्रेय बाबा को जाए तो उसमें कोई शंका नहीं। भगवान पतंजलि ने बहुत बड़ा काम किया; जिसको ओशो आंतरिक वैज्ञानिक कहते थे। ओशो ने कहा, पतंजलि आंतरजगत के वैज्ञानिक है। पातंजलि योगसूत्र उसमें जो क्लेश की व्याख्या है उसमें पंच कलेश है। एक है राग। दूसरा द्वेष। तीसरा अविद्या। चौथा अस्मिता। अस्मिता क्लेश है। वैसे प्यारा शब्द है; हम 'अस्मितापर्व' मनाते हैं। लेकिन अस्मिता मूलतः क्लेश है। अस्मिता का सीधा अर्थ होता है गौरव लेकिन गौरव कब गर्व में टर्न हो जाए वो कहना मुश्किल है। यह बहुत ध्यान रखना पड़ता है। गौरव बहुधा गर्व का रूप ले ही लेता है। बहुत सावधान रहना पड़ता है। तो अस्मिता पतंजलि का एक कलेश है। और जिजीबिषा।

माँ सीता का स्मरण स्वाभाविक क्लेश को मिटानेवाली है। राग, द्वेष, अविद्या, अस्मिता, जिजीबिषा ये सब क्लेश माँ कैसे-कैसे मिटाती है? किस-किसके मिटाये हैं सीता के रूप में? उसकी चर्चा गुरुकृपा से, शास्त्रों की कृपा से, संतों की कृपा से, आप सबकी शुभकामनाओं से, अंतःकरण की प्रवृत्ति से, भजन के भाव से, जो कहो, मैं आपके साथ करूंगा माँ सीता को केन्द्र में रखते हुए।

पूरे जगत का श्रेय करती है माँ सीता। यदि हम 'मानस' को केन्द्र में रखते हुए कहे तो हर एक पात्र में, जो प्रधान-प्रधान पात्र है 'मानस' में उसका श्रेय प्रत्यक्ष या परोक्ष सीता ने ही किया है। पूरे जगत में न जाऊं लेकिन 'मानस'जगत का थोड़ा दर्शन करें। 'मानस'जगत में महत्त्व के पात्र हैं उसका गुप्त रूपे या प्रगट रूपे सीता ने ही श्रेय किया है।

आप सोचिए, सबसे पहले 'मानस' में एक बड़ा पात्र आता है सती। सती ने सीता का रूप लिया, आप जानते हैं। यद्यपि भगवान शिव ने उसका त्याग कर दिया। सत्तासी हजार साल वो दुःख में रही। फिर दक्षयज्ञ में उसको जलना पड़ा। फिर जाके हिमालय की पुत्री बनके जन्म लेती है और फिर महादेव को पुनः एक बहुत बड़ा अनुभूति का अद्भुत अनुभव लेकर पार्वती के रूप में तपस्या करके वो शिव को प्राप्त कर लेती है। उपर-उपर से देखो तो सीता का रूप लेने से शिव से बिलग होना पड़ा, दक्ष के यज्ञ में जलना पड़ा, आदि-आदि जो कष्टवाले प्रसंग है। लेकिन सती जैसी एक स्त्री, तत्त्वतः तो जगदंबा ही है लेकिन लीलाजगत में 'सती' शब्द लगाया। तो सीता का वेश लिया उसके कारण बुद्धि का श्रद्धा में परिवर्तन हुआ।

आप कल्पना कीजिए, सती सीता का रूप न लेती, किसी ओर का रूप लेती तो राम का यह प्रसंग किस रूप में आता? अब सीता का रूप लिया तो शिव ने

'मानस' में जितने महत्त्व के पात्र हैं उसका श्रेय सीता ने किया। सबसे पहले सुग्रीव का श्रेय सीता ने किया है। सुग्रीव को देखकर रावण द्वारा अपहृत जानकी अपने वस्त्र, अलंकार सुग्रीव पर फेंकती है यह उसके श्रेय का श्रीगणेश है। रावण का श्रेय भी जानकी द्वारा ही हुआ। अंगद का श्रेय भी माँ जानकी ने किया। हनुमानजी पर तो माँ बरस चुकी है। सबसे बड़ा हनुमानजी का श्रेय यह किया कि तुम पर राम बहुत प्रेम करेंगे। कुंभकर्ण का श्रेय किसने किया? सीता के स्मरणमात्र से पता न लगे ऐसे कुंभकर्ण का श्रेय किया। तो सर्व का श्रेय करनेवाली सीता है। औरों का श्रेय तो किया ही लेकिन रामजी का श्रेय भी सीता ने ही किया है।

सोचा, सीता तो मेरी माँ है, राम मेरे पिता है; उसके नाते उसका त्याग कर देते हैं। लेकिन सीता के बदले दूसरा कोई रूप लेना कल्पना करना मुश्किल है। एक बात चोक्कस है, ओर कोई भी रूप लेती तो श्रेय होता कि नहीं, प्रश्नचिह्न लग जाता। जलगाजरडा की दृष्टि में लगता है कि सीता का वेश लिया तो नरी बौद्धिकता, सूखी बौद्धिकता, हर बात में तर्क, तर्क, तर्क! इसके सिवा जिसके जीवन में कुछ है ही नहीं! कितने महान सत्संग की गंगा बहती थी वहां सती कोरी रह गई! केवल सूखी बौद्धिकता के कारण इतना बड़ा महान पुरुष, जिसके चरणों में बैठकर भगवान शिव भगवद्कथा सुनने के लिए तैयार हुए वहां सती बिलकुल घाटे का सौदा कर गई! चुक गई! यह बिलकुल खोखली बौद्धिकता! आदमी ज्यादा चतुर हो; 'कुशल' शब्द का प्रयोग नहीं करूंगा। 'कुशल' शब्द अच्छा है चतुर से। आश्रमों में जब कुश जो तीक्ष्ण होते हैं उसको चुनने की बात होती थी। छात्रों कुश के तिनके तोड़ते थे तब कहीं भी उसको खुन न निकले, उस पर से यह शब्द आया 'कुशल।' आज आदमी चतुर बहुत हो गया है! होना चाहिए लेकिन केवल बौद्धिकता क्या परिणाम लाएगा?

किसी वैज्ञानिक ने अखबारों में कोमेंट की है; आप लोगों ने पढ़ा होगा कि यह पृथ्वी केवल बौद्धिकता के कारण सौ साल ही रह सकती है। एक वैज्ञानिक का यह निवेदन है। पृथ्वी के लोगों को नये ग्रह की खोज करनी होगी। मानव जात समाप्त हो जाएगी। तर्क केवल तर्क! कोई भीगापन नहीं, एक यंत्रवत्। आदमी बहुत चतुर हो गया। सयाना नही; समझदार नहीं। सती चुक गई लेकिन सीता का वेश लिया। और साहब! बड़े लोगों का वेश बनाने में भी बहुत लाभ हो जाता है। थोड़ा-थोड़ा वेश बना लो। और सती भले झुठा वेश लेकिन 'धरी सीता रूप।' आध्यात्मिक फायदा हो गया। सीता का वेश लेने के कारण जो खोखली बौद्धिकता थी वो समाप्त हो गई, जल गई और एक ही श्रद्धा प्रगट हो गई। शरणागत श्रद्धा का जन्म हुआ तो यह श्रेय। केवल चतुराई आदमी को क्या देगी? मैं देखता रहता हूं, कई लोग हैं बड़े बद्धिमान लेकिन रूखे-सूखे; अपना काम निकालने में चतुर!

आज पहले ही दिन किसीने चिठ्ठी लिखी, बापू, नव दिन मैं प्रसन्न चित्त से कथा सुनूं ऐसी कृपा करना। यह अच्छा है, प्रसन्न चित्त से कथा सुनना। सती का श्रेय हुआ। इतनी बड़ी शरणागत हो कर प्रगटी। 'रामचरितमानस' में शरणागति का प्रसंग आता है तो एक टाइटल-सा बन गया है, विभीषण शरणागति। सबसे शिखर की शरणागति भवानी की हुई है।

जन्म कोटि लगि रगर हमारी।
बरउं संभु न त रहउँ कुआरी।।

कोटि- कोटि जन्म तक मेरा यह व्रत है, मैं प्राप्त करूंगी तो शिव को ही। वरना जनम-जनम कुंआरी रहूंगी। ये बहुत बड़ा शरणागत का लक्षण है।

तो मुझे लगता है, सीता का वेश लिया तो सती का श्रेय हो गया। ऐसे आप 'मानस' के पात्र देखते जाओ तो 'मानस' जगत में जितने महत्त्व के पात्र हैं उसका श्रेय सीता ने किया। सुग्रीव एक पलायनवादी आदमी, विषयी आदमी, अत्यंत भोगी आदमी, अत्यंत स्वार्थी आदमी। सुग्रीव का जो चरित्र है वो बहुत प्रसंशनीय नहीं माना गया 'रामचरितमानस' में। ऐसे सुग्रीव का श्रेय हो गया। यद्यपि 'हनुमानचालीसा' में तो वो श्रेय हनुमानजी को मिल गया।

तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा।
राम मिलाय राजपद दीन्हा।।

लेकिन सबसे पहले सुग्रीव का श्रेय किया है तो गुरुकृपा से मुझे लगता है, वो सीता ने किया है। इसी सुग्रीव को देखकर रावण के द्वारा अपहृत जानकी अपने वस्त्र, अलंकार सुग्रीव पर फेंकती है यह उसके श्रेय का श्रीगणेश है। सुग्रीव पर ही क्यों ड़ाले? वहीं से उसके कल्याण का आरंभ हुआ। सीता कहती हैं, मैंने पार्वती को प्रार्थना की तो उन्हों ने मुझे केवल एक फूल की माला दी। लेकिन आज मैं सुग्रीव को मेरे महत्त्व के वस्त्र, अलंकार प्रसन्नता से डालती हूं। तो सुग्रीव का श्रेय ठीक से देखें तो सीता के द्वारा ही हुआ है। रावण के पास आओ; रावण का श्रेय किससे हुआ? यह सीता का भगत बना इसलिए उसका श्रेय हुआ।

एहि के हृदयँ बस जानकी जानकी उर मम बास है।
मम उदर भुअन अनेक लागत बान सब कर नास है।।

रावण का श्रेय भी जानकी के द्वारा ही हुआ। अंगद का श्रेय किसके द्वारा हुआ? यद्यपि उपर की दृष्टि से लगता है, अंगद ने सीता को जुआ में रख दी। लेकिन जानकी ने सोचा होगा, क्या भरोसा होगा उसको? उसने मुझे भी जुए में डाल दिया! अंगद का पैर इतने लोग उठाने की कोशिश करते हैं लेकिन पैर कोई उठा नहीं पाया इसका मतलब अंगद ने बहुत शक्ति से अपना पैर दबाया होगा। रावण तो ऐसे ही निकल गया। यह शक्ति कौन? सीता को हुआ होगा कि यह पैर उठ जाएगा तो मैं खतरे में हूं। वो परम शक्तितत्त्व जानकी ही तो है। अंगद उसी समय श्रेय का भागी हो गया। एक बहुत बड़ा विश्वास करनेवाले आदमी के लिस्ट में अंगद का नाम आ गया। अंगद का श्रेय भी माँ जानकी ने किया।

हनुमानजी; हनुमानजी पर तो माँ बरस चुकी है। 'सुन्दरकांड' में जो आशीर्वाद की वर्षा कर रही है। सब से बड़ा हनुमानजी का श्रेय यह किया कि तुम पर राम बहुत प्रेम करेंगे। यह सबसे बड़ा श्रेय था। कुंभकर्ण का श्रेय किसने किया? वो राम की बात तो ठीक है लेकिन कुंभकर्ण ने क्या कहा? सीता का ही स्मरण किया। सीता के स्मरणमात्र से पता न लगे ऐसे कुंभकर्ण का श्रेय किया। तो सर्व का श्रेय करनेवाली सीता है। 'मानस' के जो पात्र है उससे ही श्रेय है। जरा ज्यादा कहूं तो राम का श्रेय भी सीता ने ही किया। रावण का तो करे ही करे; अंगद का तो करे ही करे; सुग्रीव का तो करे ही करे। यह तो 'मानस' में कथा नहीं है। रावण नहीं मरता है तब राम दुर्गापूजा करते हैं। परम शक्ति ने ही भगवान राम को जिताया।

यह आह्लादिनी सीता कौन है? चाहे कोई भी रूप में हो। औरों का श्रेय तो किया ही लेकिन रामजी का श्रेय भी सीताजी ने ही किया है। क्लेश हरनेवाली, सर्व का श्रेय करनेवाली, उद्भवस्थितिसंहार करनेवाली जो सीता है उसको तुलसी मंगलाचरण में कहते हैं, माँ, तुम्हें प्रणाम करता हूं; मैं तुम्हें नमन करता हूं।

सीता को केन्द्र में रखकर माँ जानकी का दर्शन हम विशेष रूप में करेंगे। पंक्ति मैंने वहीं ले ली जहां से सीता स्वयं सक्रिय हो रही है। सीता परम आह्लादिनी शक्ति एक नारीरूप लेकर, एक ब्रह्मरूप नारीरूप लेकर जो सक्रिय हुआ 'रामायण' में वो यहां से हुआ है। इसलिए उसी पंक्ति से हम 'मानस-सीता' का आरंभ करेंगे।

तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरजा पूजन जननि पठाई।।
तेहिं दोउ बंधु बिलोके जाई। प्रेम बिबस सीता पहिं आई।।

तो बाप! इन दोनों पंक्तियों के आधार पर 'रामचरितमानस' में सीता का पूरा रूप देखने की गुरुकृपा से कोशिश करेंगे। बाकी आप जानते हैं, इस ग्रंथ का रूप क्या है? सात सोपान में आबद्ध यह 'मानस' सद्ग्रंथ 'बाल', 'अयोध्या', 'अरण्य', 'किष्किन्धा', 'सुन्दर', 'लंका' और 'उत्तर।' 'बालकांड' में सात श्लोक में मंगलाचरण है। यह परंपरा है, इसका निर्वहण कर रहा हूं।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

वाणी और विनायक की वंदना की; शिव और पार्वती की वंदना की; गुरु के रूप में भगवान शिव की वंदना की। 'उद्भवस्थितिसंहारकारिणीम्' उसकी चर्चा की, वंदना की; रामजी की वंदना की। और इस सद्ग्रंथ का हेतु बताया कि मेरे अंत:करण के सुख के लिए इस ग्रंथ का

उद्घाटन कर रहा हूं। लोगमंगल के लिए, श्लोक को लोक तक पहुंचाने के लिए, गार्गीतत्त्व को मार्गीतत्त्व तक पहुंचाने के लिए यह अवतरण हुआ। और हम जैसे साधारण मानव समझ सके ऐसी देहाती भाषा में तुलसी ने पूरा 'रामचरितमानस' का सर्जन किया।

पांच सोरठे में तुलसी पंच देव की स्मृति करते हैं। सूर्य की, गणेश की, दुर्गा की, भगवान शिव की, और विष्णु की स्मृति की। पंचदेव की आराधना हमारी परंपरा में संवाद के रूप में बहुत की है। लेकिन पांचवें सोरठे में गुरुवंदना इस शास्त्र में है।

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरुवंदना में पहला प्रकरण 'रामचरितमानस' का आप सब जानते हैं। कुछ पंक्तियों का गायन कर लें-

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरल अनुरागा।।
गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।

जिसको व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' कहती है वो प्रकरण 'मानस' का पहला प्रकरण है जिसमें गुरुवंदना की महिमा है।

पहले तो कहा, 'बंदउँ गुरु पद पदुम परागा। गुरुपद को उसने पद्म कहा है; कमल कहा। ऐसा ही कोई बुद्धपुरुष है जो कमल की तरह असंग है। कमल का कोई फल नहीं है। गुरु कौन है? न तुमको कोई फल दे, न उन्हें कोई फल चाहिए। उनकी कोई फलाकांक्षा नहीं होती। तुम एक फल चढ़ाओ; तुम पैसे दो; तुम वाह-वाह करो; तुम जय जयकार करो। परिणाम नहीं चाहिए उसको। और असंग। गुरु एक विचार भी हो सकता है। मैं बहुत सूक्ष्म दृष्टि से गुरु के बारे में सोचता हूं। एक विचार पर्याप्त है गुरुपद के लिए। और अध्यात्म जगत में कई लोग यात्रा करके खोज करते-करते खो गए; इनमें कई यात्री ऐसे मिलेंगे जो केवल विचार पकड़कर चलते हैं; कोई सेन्टेन्स, कोई एक शब्द लेकर निकले थे। गुरु मानी कोई एक युनिफोर्म, एक गणवेश हो ठीक है; सब की अपनी-अपनी एक वेशभूषा होती है लेकिन धोती-कुर्ता में गुरु समाते नहीं। आसमां भी उसको छोटा पड़े। एक शब्द गुरु बन सकता है। एक पद, एक कविता, एक शेर, एक गज़ल, संगीत का एक प्यारा राग गुरु बन सकता है। एक अच्छा वाक्य गुरु बन सकता है। एक अच्छा नाटक गुरु बन सकता है। गांधी ने हरिश्चंद्र का नाटक देखा, आदमी विश्व का बाप बन गया। अध्यात्मयात्रा ठीक से करनी हो मेरे भाई-बहन, तो सूग मत रखो किसी से। लेने के लिए सब में कुछ न कुछ पड़ा है यदि हम ले पाए। लेकिन हम लेते हैं जो जरूरी नहीं!

कल एक आलोचना हुई। दो मिनट की कोमेन्ट को पकड़ लेते हो! मेरे 'रामचरितमानस' की चौपाइयों को कब पकड़ोगे? मैं इतनी सालों से गा रहा हूं। इनमें से कोई चौपाई तुम्हें समझ में नहीं आई? तुम्हें अनुकूल न पड़ी ऐसी कोमेन्ट करो! यह मेरी फ़ितरत है, है तो है!

वो नहीं मेरा, मगर उससे मुहब्बत है तो है।
ये अगर रश्मों रिवाजों से बगावत है तो है।

आदमी कैसा सोचता है? मैं तो तटस्थ भाव से बोल रहा था। मुझे क्या लेना-देना है? कोई भी वस्तु हमारा गुरु बन सकती है। केवल व्यक्ति के रूप में गुरु बहुत प्रश्न खड़े करेंगे। विचार गुरु बन सकता है। ऐसे गुरुपद की वंदना गोस्वामीजी ने की। गुरु की रजमात्र से मेरी दृष्टि पवित्र करके मैं रामकथा गाने जा रहा हूं। आंख शुद्ध हुई तो सब वंदनीय दिखने लगे। पूरे संसार को सीया राममय समझ करके आंख शुद्ध हो गई।

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

फिर सबकी वंदना कमशः तुलसी ने की है। माताओं, दशरथजी, जनकराय की वंदना की। और करीब-करीब एक नियम सा हो गया है, पहले दिन हनुमानजी की वंदना तक जाते हैं; कथा को विराम देते हैं। मेरी दृष्टि से यह पात्र परिचय है, यह वंदना भी है। यह पूरा प्रकरण है।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।

श्री हनुमानजी की वंदना की। हम भी एक-दो पद का गायन कर लें फिर आज की कथा को विराम दें।

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल-अमंगल-मूल-निकंदन।।
बंदौं राम-लखन-बैदेही।
जे तुलसीके परम सनेही।।

गोस्वामीजी हनुमानजी महाराज की वंदना करते हैं। उसको आवश्यक मानी गई है। राममित्रों की वंदना है। उसके बाद सीताराम का परिचय है; सीताराम की वंदना करते हैं। उसके बाद रामनाम की वंदना और रामनाम की महिमा का गायन। उसको क्रमशः आगे बढ़ायेंगे।

सीता ऋषि संस्कृति से पैदा हुई है

जो विषय हमने चुना है इस कथा के लिए, उसके बारे में कुछ जिज्ञासाएं है। यथावकाश, यथामति मैं कोशिश करूंगा। सबसे पहले कुछ बातें हमारी जानकारी में रहे, आप जरा प्रसन्न चित्त से सुनिएगा कि जिस मातृशक्ति का हम दर्शन करने जा रहे, उसका मूल नाम सीता है। ये सीता नाम तीन लोगों का दिया हुआ है। एक तो जनक के कुलपुरोहित महर्षि शतानंदजी ने सीता नाम रखा है। हमारे यहां कुलगुरु, कुलपुरोहित नामकरण संस्कार करते रहे, ऐसी एक परंपरा-सी रही। एक मत के अनुसार महामुनि अष्टावक्र के विग्रह को, उनके शरीर की वक्रता को देखकर हंसने लगे और अष्टावक्र ने एक चूटकी भी भरी कि जनक, मैंने सोचा था कि तुम्हारी सभा में विद्वान पंडितगण बैठते हैं, लेकिन मुझे लगता है, तुम्हारी सभा में तो चर्मकार बैठे हैं, जो चमड़ी को देखते हैं, आत्मा को नहीं। ऐसी आलोचना की। कहीं लिखा है, कुंभकार बैठे हैं, ऐसा बोलते हैं। अष्टावक्र ने कहा, जनक, तू प्रश्न पूछ मुझे उसके उत्तर में हो सकता है, तेरी प्रज्ञा जाग उठे। और मेरी दैहिक वक्रता ओर है, आत्मिक सरलता ओर है, उसका भेद तू समझ पाएगा? लेकिन तेरे घर में जो कन्या प्राप्त हुई है, वो मुझे समझ सकेगी। और उसका नाम बिना पूछे मैं सीता रखता हूं। तो एक नाम सीता अष्टावक्र कथित है। एक अभिप्राय है कि एक गृत्समद नाम का ऋषि हुआ, उसने जनक कन्या का नाम सीता रखा है।

तो मूल नाम सीता है। जनक कन्या के नाते हम उसे जानकी कहते हैं। विदेह की पुत्री के कारण हम उसे वैदेही भी कहते हैं। मिथिला की राजकुमारी के नाते हम उसे मैथिली कहते हैं। पृथ्वी की बेटी के नाते हम उसे 'धरणीसुतां', 'महिजा', 'भूमिजा', 'पृथ्वीजा', 'पृथ्वीवल्लभा' कहते हैं। अष्टोत्तर शत नाम सीता के हैं ग्रंथों में। एक सौ आठ नाम है सीता के। जैसे रामपंथी महात्मा होते हैं, वैसे एक समय में सीतापंथी महात्मा भी रहे, जो केवल सीता के उपासक थे। उन्हों ने सीता के विशेष बारह नाम की सृष्टि की है। अवनिसुता भी कहते हैं। लेकिन मूलनाम जो है वो सीता है। इसलिए गोस्वामीजी उसके मूल नाम से ग्रंथारंभ करते हैं-

सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारीणौ।

और मुझे अच्छा लगा कि यहां 'सीतायण' भी लिखा गया है। नीनु मजमुदार साहब ने 'सीतायण' लिखा। तो हमारे खयाल में रहे कि मूल नाम सीता है। उसको 'सीया' भी कहते हैं, 'सीय' भी कहते हैं।

'सीता' शब्द के बहुत अर्थ होते हैं। 'भगवद्गोमंडल' में 'सीता' के अर्थ है, उसमें 'सीता' का सबसे पहले अर्थ होता है, हलकी नोंक के द्वारा किसी खेत में खिंची गई रेखा को सीता कहते हैं।' उस रेखा को गुजराती में 'चास' कहते हैं। 'चास' 'सीता' का सगोत्री शब्द है। उसे 'चीला' भी कहते हैं, लेकिन 'चीला' अर्थ करने में एक परंपरा का भय लगता है। फिर घटना चीलाचालु हो जाती है। आप जानते हैं, मैं प्रवाही परंपरा में रुचि रखनेवाला आदमी हूं। 'रामचरितमानस' में सीता के जन्म की कथा तुलसी ने नहीं लिखी। तुलसी मुझे इसीलिए प्रिय है कि तुलसी ने किसी के जन्म के बारे में, किसी के कार्यकाल के बारे में जहां-जहां विवाद है, ऐसे प्रसंग को निवारा है; केवल संवाद स्थापित किया है।

सीता के जन्म की कथा में बहुत-से वाद-विवाद है; बहुत-सी बिलग-बिलग कथाएं प्राप्य है। तुलसी उस में नहीं जाते हैं। आशा तो की जाती थी कि रामजन्म के वर्णन की जैसे बृहदकथा लिखी, वैसे सीता के जन्म की कथा लिखनी चाहिए थी। लेकिन नहीं लिखी। 'मानस' में तो नहीं है। सीता दो बार रेखा से बाहर आई। एक जनक ने खेत में हल से जो रेखा की और जो घड़ा निकला उसमें से सीता निकली। और एक लक्ष्मण ने जो रेखा खिंची उस में से सीता बाहर आई। अब रेखा से बाहर आना अच्छा है कि बुरा इन दोनों का तुलनात्मक अभ्यास करना चाहिए। एक रेखा से

जानकी बाहर आई उसके पीछे ऋषिकृत्य है। और दूसरी रेखा से सीता बाहर आई उसमें राक्षसवृत्ति है। ऋषिकृत्य इसलिए कि कृषिकार को भी हम ऋषि कहते हैं। मेरे देश के सभी ऋषि कृषिकार रहे। इसलिए हमारे यहां प्रास में बोलते हैं, हमारी ऋषि संस्कृति, हमारी कृषि संस्कृति और तीसरा प्रास लगाया कुर्सी संस्कृति!

राक्षसवृत्ति से पैदा हुई सीता मुझे रास नहीं आती। मुझे रास आएगी सीता जो ऋषि संस्कृति से पैदा हुई। क्योंकि विवादास्पद बातें कई लोग कहते हैं कि सीता रावण की बेटी है। मैं आजतक ऐसे प्रसंगों में गया नहीं। सीता को कोई भी शक्ति पैदा कर सकती है लेकिन वो ऋषिशक्ति होनी चाहिए, राक्षसशक्ति नहीं। ऋषिशक्ति समर्पण की पक्षधर है और राक्षसशक्ति अपहरण की पक्षधर है।

तो सीता की उत्पत्ति के बारे में कई कथा है। मेरी दृष्टि में सीता एक व्यक्ति तो है ही। सीता का व्यक्ति के रूप में दर्शन कर रहे हैं। 'तेहि अवसर सीता तहं आई।' पैर है, नूपुर पहने हैं, हाथ में कंकन पहने हैं। एक स्त्री है, पात्र है, एक व्यक्ति है। तो सीता एक दैवी व्यक्ति तो है ही, लेकिन इस कथा में सीता एक वैश्विक विचार भी है। क्यों तुलसी कहते हैं, 'सीया राममय सब जग जानी।' ये पूरा जगत सीता-राममय है। सीता एक विचार है, इसी विचार को केन्द्र में रखकर हम संवाद कर रहे हैं।

दूसरा दृष्टिकोण; मेरे विचार में सीता एक व्यक्ति नहीं है, एक वृत्ति है सीता। वृत्तियां बहुत प्रकार की होती है। पंचभौतिक शरीर हम धारण करते हैं तो वृत्तियों से मुक्त होना बड़ा कठिन है। पंचभौतिक शरीर है तो वृत्तियां आती है। इसलिए सीता भी कभी-कभी लक्ष्मण के सामने दुर्वचन बोलती है, मर्मवचन बोलती है। जो कल्पना न कर सको ऐसी मांग सीता करती है राम के पास, 'मुझे मृग का चर्म ला दो।' ये वृत्तियों का आना-जाना है। इसलिए सीता एक व्यक्ति तो है, एक विचार भी है, लेकिन सीता एक वृत्ति भी है।

तीसरी वस्तु, सीता एक शुद्ध-बुद्ध परमपवित्र विरक्ति का नाम है। इससे ज्यादा कोई परमपवित्र विरक्ति नहीं हो सकती, जो सीता की है। विवेकानंदजी का एक वाक्य है, राम कई होते हैं, कई बार आते हैं, सीता एक ही होती हैं। राम मत्स्य भी हो सकता है। राम कच्छप भी हो सकता है। राम नृसिंह भी हो सकता है; वामन भी हो सकता है; परशुराम भी हो सकता है; कृष्ण, बुद्ध, कल्कि हो सकता है। सीता एक है। वाल्मीकि ठीक कहते हैं, सीता का चरित्र ही महान है।

तो सीता है एक विचार। तो हम उसी रूप में सीता का दर्शन करेंगे, चीलाचालु रूप में नहीं। सीता है एक वृत्ति। सीता है बिलकुल शुद्ध विरक्ति। सीता है अलौकिक विवेक। तो पांच वस्तु के रूप में सीता को देखना चाहूंगा। व्यक्ति के रूप में, विचार के रूप में, विरक्ति के रूप में, वृत्ति के रूप में और विवेकरूपा सीता के रूप में।

सीता पुष्पवाटिका में आई; राम के दर्शन किए; एक दूसरे ने एक दूसरे का दिल दे दिया; पार्वती की स्तुति की; पार्वती ने वरदान दिया; धनुष्य तोड़ दिया फिर सीता-राम मिले, ये अद्‌भुत कथा है। लेकिन ये त्रेता की कथा है। वर्तमान में जिस सदी में हम जी रहे हैं, उसमें सीता हमें किस रूप में उपयोगी होगी? विचार के रूप में। व्यक्ति के रूप में सीता हमें नहीं मिल पाएगी। व्यक्ति के रूप में नाम रख दो, अच्छा है। लेकिन वृत्ति के रूप में हम सीता को देखते हैं; विरक्ति के रूप में, विवेक के रूप में देखते हैं। तो ऐसे तत्त्व का हम दर्शन कर रहे हैं।

तो सीता का पहला अर्थ है पृथ्वी पर खिंची गई रेखा। जो किसी लोहे के ओजार से खिंची गई रेखा को सीता कहते हैं। लक्ष्मण ने बाण की नोक से रेखा खिंची; अपहरण हुआ। जनक ने हल की नोक से रेखा खिंची तो विश्व के लिए समर्पण हुआ। तुम बाण का उपयोग करना चाहते हो कि हल का उपयोग ये निर्णय करो। इक्कीसवीं सदी में हम बाण की नोक से जगत में बिलग-बिलग रेखा खिंचते हैं या हल की नोक से, ये एक गंभीर आपत्कालीन स्थिति है। कैसे निर्णय करें?

सीता का दूसरा अर्थ है खेतपैदाश। आप किसानी करके जो भी पैदाश करो; जो खेती से उत्पन्न हुआ माल है, उसको भी सीता कहते हैं। कपास, गेहूं, बाजरी, नारियेली कुछ भी लो, जो जमीन में बीज बोकर, जमीन में पैदा हो, उस सभी पैदाश को सीता कहते हैं। तीसरा अर्थ है सीता का धान्य की देवी। हमने प्रत्येक के देवता कुबूल किए हैं। वृक्ष के देवता, अन्न के देवता। 'अन्नं ब्रह्मेति।' तो अन्न के देवता को सीता कहते हैं। सीता का चौथा अर्थ; सीता को दुर्गा कहते हैं। ये सब शब्दकोश के अर्थ है। सीता का एक अर्थ है लक्ष्मी; एक अर्थ है श्री; एक अर्थ है रमा। 'जय राम रमा रमणं शमनं।' राम की स्तुति करते हुए राम को कहते हैं, 'रमा रमणं', आप रमा के रमण है। परशुराम भी रमा कहते हैं सीता को। सीता का एक अर्थ है शांति। 'सीता शांति' शंकराचार्य ने कहा है। मिथिला प्रदेश में एक पेड़ होता है, उसको भी सीता कहते हैं। सीता का एक अर्थ है, चंद्र की चांदनी। अब 'सी' को आप ह्रस्व करो तो 'सिता' याने चंद्र और दीर्घ करो तो 'सीता' याने महिमा है। सीता का एक अर्थ होता है कपूर।

तो कई रूपों में हम सीता को देख सकते हैं। अब प्रश्न ये है कि सीता की उत्पत्ति की कथा तुलसी ने क्यों नहीं लिखी? हनुमानजी की उत्पत्ति की कथा भी तुलसी नहीं लिख रहे हैं; वाल्मीकि लिखते हैं। छिल्के, गोटले, घब्बे सब निकालकर तुलसी ने चाहा कि मैं विश्व को केवल नगद रस दूं। 'हरिपद रति रस बेद बखाना।' तुलसी कहते हैं, 'छओ शास्त्र सब ग्रंथन को रस।' एक 'रामायण' का नाम है 'अद्‌भुत रामायण।' मैं तीन 'रामायण' की बात कहना चाहता हूं। एक 'अद्‌भुत रामायण', एक 'आनंद रामायण' की बात और एक 'देवी भागवत' की बात, जहां सीता की उत्पत्ति के बारे में कुछ बातें आई। लेकिन मैं इससे सहमत नही हूं। अथवा तो सहमत तब होऊंगा जब मेरे अनुभव में उसका पक्ष बिलग हो।

'अद्‌भुत रामायण' ये नाम ही अद्‌भुत है। इसलिए इसमें सब प्रसंग अद्‌भुत है, जो मन से कुबूल करना मुश्किल है। तो एक अद्‌भुत कथा होती है, जिसमें वाह के सिवा कुछ नहीं। एक अनुभूत कथा होती है, जिसमें वक्ता स्वयं अनुभव से गुजरकर स्नान करता है। केवल कल्पना नहीं, वास्तविकता। अनुभव, कल्पना नहीं। गांधी कहते हैं, सवाल है अनुभूति का, सवाल है चरित्र का। कभी-कभी भगवे रंगवाली कथा मेरी समझ में आती है तो लगता है, कथा अवधूत होती है। फ़कीरी लेकर कथा आती है। भस्मांगा बनकर कथा आती है। वैराग्य की आत्मा लेकर कथा आती है। कथा लौकिक भी होती है, कथा अलौकिक भी होती है, कथा ऐतिहासिक भी होती है। कथा के कई भेद है।

'अद्‌भुत रामायण' की एक कथा सीता उत्पत्ति की। उसमें ऐसा लिखा है कि रावण ने बहुत त्रास किया संसार में। रावण ने आतंक फैला दिया तो ऋषि-मुनि और संत-महात्माओं का खून लेकर उसने घड़ा भरा। और ये ऋषि-मुनिओं का खून कालांतर में विष का रूप धारण कर लेता है। लहू विषाक्त हो गया और वो घड़ा वो लंका ले गया। ये कथा अद्‌भुत है। इतना समझ लो, हकीकत न भी हो। घटा भी हो, न भी घटा हो। फिर ये गृत्समद ऋषि को लक्ष्मी ने कहा, मैं आपके घर पुत्री के रूप में आना चाहती हूं। 'सीता' ये 'लक्ष्मी' का पर्याय है। गृत्समद ऋषि ने मना किया कि मैं त्यागी महात्मा हूं, बेटी के रूप में आप महालक्ष्मी मेरे यहां आओ, मैं आपको बड़ी करूं? आप तो लक्ष्मी, आपकी कितनी चिंता करनी पड़े! आप चंचल है, और मैं ठहरा महात्मा। तो बोली, मैं आपके आश्रय में आई हूं। बेटी के रूप में मुझे आपके यहां आना है। तो महात्मा ने वनस्पति का दूध इकठ्ठा किया और एक घडे में वो भरा और गृत्समद महात्मा ने लक्ष्मी को कहा कि आप इसमें रहो। समयांतर में रावण को भी खबर मिली। रावण जैसी जिसकी वृत्ति होती है, वो खोज ही करते हैं, कहां कुछ नया आविष्कर हुआ है? या तो मैं उसकी खोज करूं या फिर न कर सकूं तो छिन लूं। ये उसकी वृत्ति होती है। राक्षस में दो शक्ति बहुत प्रबल होती है, तामसी शक्ति और दूसरी रजोगुणी शक्ति। सात्त्विक शक्ति बिलकुल न के बराबर होती है। तो वो घडे भी वो ले आया। गृत्समद ऋषि ने घड़े के दूध में जो लक्ष्मीतत्त्व को आरोपित कर दिया था वो घड़े को महात्माओं के रुधिर में मिला दिया। दोनों को एक कर दिया।

मंदोदरी और रावण में सदा अनबनी रहती थी। सोने की लंका हो तो भी कलह अपने आप आता है। इतनी समृद्धि लेकिन रावण वेद विपरीत आचरण करता था। सुबह में वेद पढ़ता था और फिर वेदविरुद्ध आचरण करना ये मंदोदरी को रास नहीं आता था, तो दोनों में खट्टे-मिठ्ठु होती रहती थी। सबके जीवन में खट्टे-मिठ्ठु होती है। तो रावण के वेद विरुद्ध आचरण के कारण मंदोदरी ने कई बार आत्महत्या करने का प्रयास किया। मैं समाज को प्रार्थना करूं कि परिवार में कभी भी अनबन हो, कभी कुछ कलह हो जाए; होना नहीं चाहिए लेकिन हो जाए तो आदमी को ईतनी हद तक नहीं जाना चाहिए

कि आत्महत्या करे। आजकल युवानी में ये बीमारी आ गई है। कभी-कभी ये आत्महत्या का प्रयास! उसमें कभी-कभी स्त्री चरित्र होता है, या फिर पुरूष चरित्र होता है। तो अनबन हो जाए, कलह हो जाए लेकिन आत्महत्या तक नहीं जाना चाहिए। युवान भाई-बहन, जब दुनिया का दांपत्य बिगड़ता जा रहा है, ऐसे समय में मैं आपसे प्रार्थना के रूप में निवेदन करता हूं, त्याग की स्पर्धा करो। जीवन मूल्यवान है कि जिद्द मूल्यवान है? अहंकारी जिद्द को मूल्यवान समझता है। मैं कैसे पीछे हटूं? ये जिद्द छोड़ो।

तुम जिद्द क्यों कर रहे हो, हम क्या तुम्हें सुनाए?

नगमें जो खो गए हैं, उसे कैसे गुनगुनायें?
लाज़िम नही कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिये नाकामियों के साथ।

एक कथा से पवित्रता और प्रसन्नता न आई तो एक कथा ओर। आगे बढ़ो। हम 'मानस' न पढ़े तो चिंता नहीं। मैं जिद्द नहीं करूंगा कि तुम रोज 'मानस' पढ़ो, 'गीता' पढ़ो। पढ़ो तो मैं प्रणाम करूं। तुम तिलक न करो तो में कभी भी आग्रह न करूं। न करो, कोई चिंता नहीं। मानवता का यज्ञोपवित पहनो। लेकिन अपने परिवार में एक-दूसरे से कपट न करो। पति पत्नी से कपट कर रहा है! पत्नी पति से कपट कर रही है! साधन तो मिल जाएंगे, शांति का क्या? लक्ष्य क्या है? जिद्द? मूढ़ता? अहंकार? नहीं, जीवन मूल्यवान है। जीवन महिमावंत है। तो होती है अनबन। ऐसे समय में जो जिम्मेवार लोग है उसका कर्तव्य होता है, उसका धर्म होता है कि उसमें कैसे रास्ता निकाले? हाथ उपर उठा लो, ये ठीक नहीं। पूर्ण शरणागति हो तो बात ओर है। तुम्हारा हरि करेगा। जहां से छटक जाना, वहां हाथ उपर उठा दो और जहां अपना हो, वहां शरणागति की ऐसी-तैसी ये नहीं चले। कपट-कलह छोड़ो। राम ने 'मानस' में इतना ही कहा, 'जिन्ह के कपट दंभ नही माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया।' वाल्मीकि कहे, जहां कपट न हो वहां राम बसे। वाल्मीकि ने कहा, जहां कपट न हो, दंभ न हो, वहां तुम बैठो, जहां पर्दावाद न हो वहां तुम बैठो। राम न तिलक चाहता है, न गणवेश चाहता है, न राम माला घुमाओ ऐसा चाहता है। राम कहते हैं, तुझ में कपट न हो, दंभ न हो, आडंबर न हो। कितने पाखंड में हम जीए जा रहे हैं!

कितना प्यारा जीवन है! मेरी समझ में नही आता कि लोग क्यों बिगाड़े जा रहे हैं? तुम्हारी मुठ्ठी में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष है। क्या बाकी है? कलियुग ने क्या नहीं दिया है? अस्तित्व ने क्या वरदान नहीं दिया

है? एक-दूसरे के लिए त्यागो। बीमार, रुग्ण चित्त छोड़ो। 'हम थक गए हैं', ये क्या है? थके हमारे दुश्मन! अध्यात्म के मार्ग में आप हसीन हो, खूबसूरत हो। कथा में आनेवाले बूढ्ढें नहीं होते, जवान ही होते हैं।

तो रावण और मंदोदरी में अनबन होती थी। रावण द्वारा जो संतों का खून इकठ्ठा किया था वो और गृत्समद ऋषि ने जो दूध में लक्ष्मी को आवास दिया था वो दोनों एक कर दिए थे। तो मंदोदरी ने सोचा, मैं पी जाऊं और मर जाऊं। तो उसने पीया। लेकिन महात्माओं का खून जो विष का रूप धारण कर चुका था, वो ही पीती तो शायद मर जाती, लेकिन महात्माओं का दूधवाला हिस्सा था, वो पीने से उस में चिकीत्सकीय गुण पैदा हो गए थे, जो उसने बचाए रखा और उसे पीने से एक कन्या का जन्म हुआ। 'अद्‌भुत रामायण' कहती है, वो कन्या जब मंदोदरी ने देखी तो उसे लगा, रावण तो मार देगा; ये रावण की कन्या नहीं है। फिर कहते हैं, इस कन्या को लेकर मिथिला प्रदेश में भूमि में गाडने का कह दिया। और अकाल का समय आया। उस समय हल जोतने का प्रारंभ किया तब लक्ष्मी का जिसमें वास था और ऋषि-मुनियों का खून था इसी में से सीता प्रगट हुई। राक्षसी शक्ति से सीता प्रगट नहीं होती, ऋषिशक्ति से सीता प्रगट होती है। मेरी रुचि, मेरा रस राक्षसी शक्ति से तत्त्व पैदा हो उसी में नहीं, ऋषिशक्ति से जो तत्त्व पैदा हो उसी में है।

'देवी भागवत' में ऐसी कथा है कि मंदोदरी सुंदरी थी। रावण ने इससे शादी करना चाहा तो सावधान कर दिया गया कि इस स्त्री से एक कन्या प्रगट होगी, ये कन्या तेरे नाश का कारण होगी। तो ब्याह न करो। रावण ने अनसुना कर दिया और फिर ब्याह हुआ। उस में से एक शक्तितत्त्व प्रगट हुआ, जो नियति के कारण हुआ। और हर प्रसंग में है कि फिर कुंभ वहां गाढ़ दिया। फिर उसमें से हल जोतते समय जो प्रगट हुआ वो सीता है।

'आनंद रामायण' में एक प्रसंग है वेदवती कन्या का। सीता का एक नाम वेदवती भी है। सीता का मूल जो स्वरूप है वो वेदवती है। वेदवती एक पैर खड़ी होकर कड़ी तपस्या कर रही थी। रावण स्वतंत्र घूमता रहता था। रावण ने वेदवती को तपस्या करती हुई देखा और उसके साथ बोलचाल में अभद्र व्यवहार किया। वो तपस्विनी आक्रोश में आ गई और अपनी चेतना को एक घड़े में विलीन कर देती है। और रावण को डर लगा कि इस घड़े को मैं लंका ले जाऊं और घड़े लंका ले गया। कुतूहलवश मंदोदरी ने सोचा कि ये तो शक्ति स्वरूप है। फिर मंदोदरी को लगा कि रावण तो इसे मार डालेगा। तो ये कलश मिथिला भिजवा देती है। ऐसी-ऐसी कुछ कथाएं प्राप्त होती है। लेकिन इस में रावण की बेटी है कि मंदोदरी की बेटी है उसी पक्ष में मेरी व्यासपीठ नहीं है। मेरी व्यासपीठ केवल इसी पक्ष में है कि ये ऋषिचेतना है, ये लक्ष्मीचेतना है, ये दुर्गाचेतना है। फिर तो उसका विस्तार भी हुआ, क्योंकि मूल कथानक को लेकर अन्य धर्मावलम्बी लोगों ने मनघडित कथाएं जोड़ दी।

परिश्रम से निकले वो शक्ति सही है, चमत्कार से निकले वो शक्ति नहीं। जनक ने किसानी की, परिश्रम किया और सीता प्राप्त हुई। तो मेरी रुचि इसी में है कि परिश्रम से जो सत्य प्रगट हो वो सही है। तो एक विचार के रूप में सीता का दर्शन करें; एक वृत्ति के रूप में, एक विरक्ति के रूप में, एक विवेकप्रज्ञा के रूप में सीता का दर्शन करें।

तो बाप! सीता की उत्पत्ति के बारे में तुलसी मौन है, क्योंकि तुलसी को पता था, मैं जो कह दूंगा, वो शास्त्र बन जाएगा, फिर कहीं गलत बात लोगों के दिल में न जाए। इसलिए विवादित बातों में तुलसी न गए। वरना सीता की उत्पत्ति की कथा क्यों न लिखे तुलसी? हनुमानजी की उत्पत्ति की कथा भी क्यों नहीं लिखी? क्योंकि हनुमानजी के जन्म की कथा भी ऐसी है। 'शंकरसुवन', एक जगह कहा, वो शंकर का बेटा है। दूसरी जगह कहा, 'केसरीनंदन', केसरी का बेटा है। फिर कहा, 'अंजनीपुत्र', अंजनी का बेटा है। 'पवनसुत नामा', पवन का बेटा है। तुलसी कहे, 'हनुमानचालीसा'में लिखूं, बाकी उसका स्वतंत्र निरूपण मैं करनेवाला नहीं हूं।

तो इस परमशक्ति का मूल नाम सीता है। 'सीता' शब्द के कई अर्थ है और सीता की उत्पत्ति के बारे में कई कथाएं है। लेकिन इन कथा में, विवादों में मत जाना। बस एक साधक के परिश्रम से जो चेतना प्रगटी, उसी का नाम है सीता, जिसने ही 'उद्‌भवस्थितिसंहारकारिणी' का रूप लिया, 'क्लेशहारिणी' का रूप लिया, 'सर्वश्रेयस्करं' सबका श्रेय करने का संकल्प किया, 'नतोऽहं रामवल्लभां।'

तो 'मानस-सीता' का विचार लेकर हम और आप संवाद कर रहे हैं। उसी संदर्भ में आपकी जो जिज्ञासाएं है, उसको में यथावकाश कोशिश करूं। एक प्रश्न, 'बापू, आपने दो हजार पंद्रह में वर्जिनिया में 'पुन्यपुंज' शब्द पर कथा की थी, तो दूसरे दिन की कथा में सुख और दु:ख के बारे में संवाद किया था। आपने बताया था कि आप समय आने पर बताएंगे कि कृष्ण भगवान और दुर्योधन की बेटी लक्ष्मणा के बीच में संवाद हुआ था। दु:ख को सुख में कैसे परिवर्तित किया जाए? और सुख को दु:ख में कैसे परिवर्तित किया जाए? उसके बारे में कुछ कहे।' मूल वस्तु है, दु:ख को सुख में परिवर्तित करने के या तो सुख को दु:ख में परिवर्तित करने के दो ही साधन है। दु:ख को यदि सुख में परिवर्तित करना है तो विवेक चाहिए। और सुख को दु:ख में परिवर्तित करना है तो अविवेक चाहिए। हम और आप विवेक के अभाव में अविवेक के कारण सुख को दु:ख में परिवर्तित कर देते हैं। घर में सब सुख हो, सुंदर-संस्कारी पत्नी हो, घर आनंदपूर्ण हो, मिठाई भोजन सब बनते हो, घर में प्रतिदिन शंकर की आराधना होती हो, साधु-संतों का आतिथ्य होता हो, उसको 'धन्यो गृहस्थाश्रम' कहा। ऐसा हो फिर भी अविवेक के कारण, मूढ़ता के कारण हम सुख को दु:ख में परिवर्तित कर देते हैं। और कई लोग विवेक के कारण दु:ख को सुख में परिवर्तित कर देते हैं। कितनी भी पीड़ा हो, दूसरों की पीड़ा से तुलना करने लगते हैं विवेक से। क्षीर-नीर न्याय खोजने लगते हैं और लगे कि मेरे पर क्या दु:ख है? नरसिंह मेहता ने यही सिखाया है-

सुख-दु:ख मनमां न आणीये रे घट साथे रे घडियां।
टाळ्यां ते कोईना नव टळे, रघुनाथना जडियां।

सुख और दु:ख सापेक्ष है। एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। विवेक-अविवेक के कारण बाजी सुधरती है-बिगड़ती है। 'सुख आप किसको कहते हो?' उसका भी एक स्पष्ट जवाब है, मन के अनुकूल परिस्थिति का नाम सुख है। आपकी इच्छा हो ऐसा अच्छा भोजन मिल जाए, अच्छी जगह मिल जाए, अच्छा संग मिल जाए जो मन में हो, तो कभी दु:ख की शिकायत करोगे ही नहीं। तो मन के अनुकूल परिस्थिति का नाम सुख है और मन की विपरीत परिस्थिति का नाम दु:ख है।

सीता तत्त्व में नव प्रकार की शक्ति समाहित है। उसे कहते हैं सीता। नवों शक्ति की एकरूपता का नाम है सीता। कई रूप में हमें 'एकम् सद्' को देखना पड़ेगा। जैसे नवदुर्गा होती है, वैसे सीता नव शक्ति का समुच्चय है; एक जगह ठहर जाना है। केवल नाम समझ लीजिए। १. योगशक्ति; सीता परम योगशक्ति का नाम है। तंत्र में जाना मत। रुचि हो तो जान लेना लेकिन तांत्रिक साधनाओं में जाना मत, ऐसी मेरी व्यक्तिगत राय है। उसमें कुंडलिनी जागृति की जो बात है, वो कुंडलिनी का पर्याय बताते हैं सीता। तो कुंडलिनी जागृत करने की तंत्र परंपरा की विधि है उसी तत्त्व को मेरी व्यासपीठ योगशक्ति कहती है। जानकी का बैठना एक योगासन है। सीता एक प्रकार का योगासन 'निज पद कमल दिए मन रामचरण मंह लीन।' योगविधावालें उसी जानकी की छबी को देख़कर पूरा योग प्रस्तुत करते हैं। क्या अर्थ है? जानकी इस मुद्रा में बैठी है और क्रमशः रावण आया, गया; राक्षसियों ने थोड़ा भय दिखाया; त्रिजटा ने समझाया; जानकी का दु:खी होना; उसी समय हनुमततत्त्व का नीचे आना ये पूरी योग प्रक्रिया है। जरा कठिन है साहब! में बोला नहीं हूं, सोचा है बहुत। कैसे बैठना, क्या-क्या विघ्न आते हैं, ये सीता बताती है। एक अकेली सीता, रावण इतना समर्थ और तिनका दिखाकर रावण का अपमान कर देती है। और रावण स्वयं कहता है, हे सीता, तुने मेरा अपमान किया है। फिर भी रावण मृत्युदंड नहीं देता। अवधि दे देता है लेकिन तत्क्षण मारता नहीं, क्योंकि वो भी जानता है, जानकी ऋषिचेतना है। आज अपहृत करके जिसे लाया हूं उसके बारे में उसकी स्मृति आती है। इसलिए ये आदमी रुक जाता है। मंदोदरी क्यों रोक लेती है कि खबरदार, मारे तो! दोनों को स्मृति आती है कि ये सीतातत्त्व क्या है?

तो माँ सीता योगशक्ति है। सीता का ताराओं की ओर देखना, उपर चढ़ना फिर हनुमान का नीचे आना, पूरी यौगिक प्रक्रिया है। वहां शाक्ततंत्र और शिवतंत्र का मेल है। सीता शाक्ततंत्र के प्रयोग में है और हनुमान शिवतंत्र के प्रयोग में। और बीच में शाक्त और शिवतंत्र का मिलन होना है। और जब मिलन हो जाएगा तो वोही शाक्ततत्त्व जो ज्यादा बलवान है वो शिवतत्त्व को वरदान देता है, 'अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।' तो जानकी योगशक्ति है, उस में पूरी योग की प्रक्रिया है। सीता को मैं इसलिए योगशक्ति कहता हूं कि सीता अयोनिजा है। सीता भोग का फल नहीं है, सीता योग का फल है।

२. ब्रह्मशक्ति; जिसको ब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति कहते हैं। कृष्ण अवतार में राधा और राम अवतार में सीता। ३. वियोगशक्ति; वियोग के लिए भी शक्ति चाहिए। जैसे योग पचाना मुश्किल वैसे वियोग पचाना भी मुश्किल है। योग पचाना शायद आसान भी हो जाए, लेकिन वियोग कठिन है। एक तो कन्या ब्याहती है तो वात्सल्य से भरा परिवार का वियोग। फिर जानकी ससुराल में आई तो राज और परिवार का वियोग। फिर जानकी का अपहरण हुआ। तो उसका वियोग फिर यद्यपि तुलसी नहीं लिखते हैं, कई लोग स्वीकारते भी नहीं है कि सीता का दूसरी बार निष्कासन हुआ ये वियोग। तो सीता वियोगशक्ति है। ४. ईच्छाशक्ति; सीता की ईच्छाशक्ति गजब है। हां, थोड़ी वृत्ति के रूप में डांवाडोल होती है लेकिन ईच्छाशक्ति गजब है। थोड़ी डांवाडोल होती थी तो ईच्छाशक्ति दृढ़ कर दी माँ भवानी ने। ५. क्रियाशक्ति; 'उद्भवस्थितिसंहारकारिणी'; ये है क्रियाशक्ति। ६. ज्ञानशक्ति; परमज्ञान का स्वरूप है माँ जानकी। ७. विवेकशक्ति; चित्रकूट के बन में माता-पिता को मिलने के लिए रात को सीता जनक की शिबिर में गई। उसकी विवेकशक्ति तो देखो! थोड़ी देर हुई तो तुरंत कहा, मेरी सास, माँ कौशल्या यहां हो तब मैं यहां नहीं रह सकती। मुझे कुटिया में जाना हैं। ये है सीता विवेकशक्ति। सीता की माता का नाम है सुनयना। सीतातत्त्व प्रगट होती है सुदृष्टि से। पावन दृष्टिकोण से सीतातत्त्व प्रगट होता है। ८. विद्याशक्ति; तमाम विद्या का भंडार है सीता। ९. लोकशक्ति; मुझे नववीं शक्ति ज्यादा प्रिय है। लोगों की माँ है सीता। हिन्दुस्तान में ज्यादा से ज्यादा राममंदिर दिखते हैं। और सीता लोगों का आधार है, क्योंकि खिली है लोकक्रिया खेती से; किसानी से। इसलिए नववीं शक्ति का नाम है लोकशक्ति।

तो इन नवों शक्ति का समुच्चय रूप वो है।

कल कथा के क्रम में हमने हनुमंत वंदना की। उसके बाद पहले सीताजी की वंदना, फिर रामजी की वंदना, फिर दोनों का अभिन्न रूप प्रस्तुत करते हुए तुलसी ने वंदना की। उसके बाद नाम वंदना, नाम महिमा है। परमात्मा के नाम की महिमा अतुलनीय है। तुलसी कहते हैं, कलियुग का प्रधान साधन है नाम संकीर्तन, नाम सुमिरन, नामजप। तुलसी का, सभी संतों का, शास्त्रों का मत है कि कलियुग में हम जैसों के लिए आधार नाम है। चारों वेद में नाम की महिमा है। चारों युग में नाम की प्रतिष्ठा है। कोई भी नाम लो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अल्लाह, ईश्वर क्या फ़र्क पड़ता है? लेकिन नाम जपे, आपकी रुचि में जो नाम आए वो। तो कलियुग के समान कोई युग नहीं है। बड़ा अच्छा युग है। विवेक हो तो अच्छा युग है, अविवेक हो तो सत्जुग को भी आप कलियुग बना दो! विवेक हो तो कलियुग को भी सतजुग बना सकते हैं। केवल नाम से परमात्म तत्त्व का अनुभव कलियुग की देन है।

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू।
राम नाम अवलंबन एकू।।

तो प्रभु का नाम लो, जिस में आपकी रुचि है। सबसे महिमावंत नाम है रामनाम। इसका मतलब कोई अन्यथा न ले कि ओर कोई नाम नहीं। लेकिन सामान्य रीत से आप देखो, कोई भी बोलेगा तो कहेगा, 'रामनाम सत्य है।' मिलते हैं तो 'राम-राम' बोलते हैं। आखिरी बिदाई में 'राम-राम।' बहुत व्यापक अर्थ में रामनाम रहा। आदि-अनादि काल से रामनाम की महिमा है। और सरल है रामनाम। 'मरा' कहनेवाला भी तैर गया। तो प्रभुनाम ये कलियुग का सफल, सरल, सबके लिए सुलभ है।

सीता के जन्म की कथा में बहुत–से वाद–विवाद है; बहुत–सी बिलग–बिलग कथाएं प्राप्य है। सीता दो बार रेखा से बाहर आई। एक जनक ने खेत में हल से जो रेखा की और जो घड़ा निकला उसमें से सीता निकली। और एक लक्ष्मण ने जो रेखा खिंची उस में से सीता बाहर आई। एक रेखा से जानकी बाहर आई उसके पीछे ऋषिकृत्य है। और दूसरी रेखा से सीता बाहर आई उसमें राक्षसवृत्ति है। राक्षसवृत्ति से पैदा हुई सीता मुझे रास नहीं आती। मुझे रास आएगी सीता जो ऋषि संस्कृति से पैदा हुई। सीता को कोई भी शक्ति पैदा कर सकती है लेकिन वो ऋषिशक्ति होनी चाहिए, राक्षसशक्ति नहीं। ऋषिशक्ति समर्पण की पक्षधर है और राक्षसशक्ति अपहरण की पक्षधर है।

बुद्धपुरुष के चरणों में प्रेम बढ़े तब अंदर एक रोशनी होती है

'मानस-सीता', जिसका दर्शन हम सब मिलकर के संवादी सूर में कर रहे हैं। कुछ आगे का संवाद हो।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।।

हमारी पावनी और प्रवाही परंपरा में सर्जन, पालन और विसर्जन के लिए तीन देवताओं को नियुक्त किया गया है। जिसका नाम हम सब जानते हैं- ब्रह्मा, विष्णु, महेश। इन तीनों के बीच में उद्भव, स्थिति और संहार का वर्गीकरण किया है। लेकिन ये तीनों एक साथ यदि कोई करता है तो वो सीता है। सीता ही ब्रह्मा है, सीता ही विष्णु है, सीता ही शिव है। और ये तीनों मिले हुए हैं, और हम केवल बुद्धि से सोचे तो आखिरी सूत्र पर जरा संदेह हो सकता है कि प्रगटीकरण-उद्भव तो समझ में आता है; शुभ है कोई नयी वस्तु प्रगट हो। और जो प्रगट हुआ है उसका जतन हो वो भी समझ में आता है; लेकिन संहार समझ में नहीं आता। इतना प्यारा प्रगटीकरण; इतना शुभ परिपालन फिर उसका संहार क्यों? विश्व का कोई चिंतन शायद इस तरह नहीं सोचेगा जो भारतीय चिंतन की दिशा है। क्योंकि हम केवल उद्भव को ही शुभ नहीं मानते; हम केवल पालन को ही शुभ नहीं मानते; हम संहार को भी शुभ दृष्टि से देखते हैं। यही है भारतीय चिंतन की ऊंचाई।

हम जनम को तो बधाई के रूप में महोत्सव मनाते हैं। 'नंद घेर आनंद भयो।' पलने में बच्चें को झुलाकर हम पालन करते हैं। पालन पर से आया है 'पलना' या पलने से आया पालन। उसको भी लोरी सुनाते हैं; लेकिन एकमात्र देश है भारत जो संहार के गीत भी गाता है। जिसको उद्गाता परम योगेश्वर कृष्ण कहते हैं, अमृत भी मैं हूं, मृत्यु भी मैं हूं। कोई कहकर तो देखे, मैं मृत्यु हूं। और कृष्ण है यदि मृत्यु तो कृष्ण शुभ है। तो विनाश को, नाश को, संहार को भी मंगलमय दृष्टि से देखना ये भारतीयों की ऊंचाई है। और उसमें सर्जन करनेवाला ऊच्च, पालन करनेवाला मध्य, संहार करनेवाला निकृष्ट ऐसा नहीं है। सर्जन पालन में समाहित है; पालन संहार में समाहित है; संहार पुनः सर्जन में समाहित है। हम माँ सीता का दर्शन कर रहे हैं तब ये तीनों एक ही तत्त्व कर रहा है। उस तत्त्व का नाम है सीता। 'उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं' ये तीनों करती हैं सीता। और सीता हमारे पंचक्लेश का हरण करती है। पंचक्लेश जिसको हो उसीका तो हरण करती हैं। लेकिन उसके बाद सर्व का श्रेय करती है। ऐसी सीता को मैं प्रणाम करता हूं, जो राम प्रियतमा है, 'नतोऽहं रामवल्लभाम्'।

तो 'मानस-सीता', उसके बारे में और कल की कथा के बारे में बहुत-सी जिज्ञासा है लेकिन मैं आज की मेरी कथा का आरंभ संवाद के रूप में; हमारे यहां अथर्ववेदीय शाखा में एक उपनिषद आया 'सीतोपनिषद'। वैसे हमारे यहां १०८ उपनिषद की बात है। १०८ की गिनती में ये छोटे-छोटे उपनिषद आते हैं। प्रधान बारह या तो चौदह जो उपनिषद है। जो शांकरीय परंपरा में उसको स्वीकृति मिली है। उसमें ये सब उपनिषद की गणना नहीं है। जैसे रामतापनीय उपनिषद, रामरहस्य उपनिषद ये सब उपनिषद है, जिसमें राममंत्र की बड़ी विशाल महिमा है; 'राम' शब्द का बहुत बड़ा अर्थ विशेष प्रगट हुआ है। सभी उपनिषद तो नहीं है लेकिन 'सीतोपनिषद' उपलब्ध है। सीता के नाम का एक पुण्य उपनिषद है, उस 'सीतोपनिषद' से एक थोड़ा लंबा मंत्र जिसमें सीता का परिचय है। आई वॉन्ट टु रीड। मैं अपेक्षा करता हूं कि आप सभी भी उसका उच्चारण करेंगे।

सीता की बड़ी लंबी पहचान। और इस लंबी पहचान में सब कुछ आ जाता है। जैसे मैंने भूमिका बनायी कि यहां सर्जन-परिमार्जन और विसर्जन ये तीनों के लिए तीन विभाग बनाये गये। वो तीनों विभाग एक में समाहित, उसीका नाम है माँ सीता। तो 'सीतोपनिषद' कहता है कि सीता क्या है? इतनी सरल संस्कृत में है।

'सीता सर्ववेदमयी...' कौन है सीता? सर्ववेदमयी। त्रिवेद उसमें समाहित है। मूल तो त्रिवेद है। चौथा तो बाद में संस्करण आया है। 'सीता सर्ववेदमयी।' और क्या शब्द चुनाव करता है वेद का ऋषि! 'देवमयी', सर्वदेवमयी और आगे का सूत्र देखो। पहेले 'सीता सर्ववेदमयी', अब 'सीता सर्वदेवमयी'; और तीन प्रधान देव ब्रह्मा, विष्णु, महेश; त्रिदेव। तो सीता सर्व वेदमयी; सर्व देवमयी; सर्व लोकमयी; त्रिलोक। ये सब तलगाजरडी व्याख्या है। ये त्रिलोक-स्वर्ग, मृत्यु, पाताल। सीता सर्व लोकमयी है। सीता सर्वदेवमयी है। सीता सर्ववेदमयी है। सर्वकीर्तिमयी; तीन प्रकार की कीर्ति। पहले मंत्र बोल लूं-

सा सर्ववेदमयी सर्वदेवमयी सर्वलोकमयी सर्वकीर्तिमयी सर्वधर्ममयी सर्वाधारकार्यकारणमयी महालक्ष्मीर्देवेशस्य भिन्नाभिन्नरूपा चेतनाचेतनात्मिका ब्रह्मस्थावरात्मिका तद्गुणकर्मविभागभेदाच्छरीररूपा देवर्षिमनुष्यगन्धर्वरूपा असुरराक्षसभूतप्रेतपिशाचभूतादिभूतशरीररूपा भूतेन्द्रियमनः प्राणरूपेति च विज्ञायते। -इति 'सीतोपनिषद।' एक मंत्र पर एक कथा हो सके ऐसा ये मंत्र है। अद्भुत मंत्र है, छोटा-सा उपनिषद है। कभी हाथ में आये पढ़िएगा। जरा जटिल भी है, लेकिन इन जटिल सूत्रों में से मैंने बिलकुल जितना सरल हो ये खोजा।

क्या है सीता? संक्षिप्त में थोड़ा इस मंत्र दर्शन कर लें। 'सीता सर्ववेदमयी।' मैंने पहले दिन कहा था। हमारे यहां वैरागी साधु में रामपंथी वैरागी भी होते हैं। सीतापंथी वैरागी होते हैं। सीतापंथी वैरागी होते हैं वो केवल सीता की मूर्ति रखते हैं। किशोरीजी बस। और एक ही मूर्ति की वो पूजा करते हैं। सीता में यद्यपि सबकुछ आ जाता है, लेकिन वो एक सीता की मूर्ति रखते हैं और महसूस करते हैं कि हमारे आश्रम में, हमारे पूजागृह में, पूजास्थान में मूर्ति नहीं है, सीता के रूप में सर्ववेद बिराजित है। 'सीता सर्ववेदमयी।'

आज एक बहन ने पूछा है, 'बापू, आपको कुछ सालों से सुन रही हूं। आपके मुख से कथा सुनने में बहुत आनंद आता है। आप जो-जो सीख देते हैं उसको फोलो करने का प्रयत्न करती हूं। कभी कुछ गलत सोच या कार्य के पहले आप की आवाज़ कानों में गुंज ऊठती है और मैं तुरंत सावधान हो जाती हूं। बापू, आपसे एक शिकायत है, आप सदा सास-बहु के रिश्ते को नेगेटिव बताते हैं लेकिन मैं बताना चाहती हूं, मेरी सास एक देवी है। उसके जैसा नेक और अच्छा व्यक्ति मैंने नहीं देखा। उसकी सराहना करने लगूं तो बहुत टाईम लग जाएगा। इच्छा है कि अगले जनम उसकी बेटी बनकर जन्म लूं। थेन्क यू बापू, फोर एवरी थिंग। -आपकी फ्लावर।' आपकी सास बहुत देवी की तरह है ये आपका सद्भाग्य है। लेकिन हर जगह तो ऐसा नहीं होता। और कोई नेगेटिव बात करने की मेरी कोई वो नहीं। लेकिन बहुधा संसार में देखते हैं हम। उसमें अब तो थोड़ा कम हो गया है। लेकिन फिर भी सास अभी भी सास बनी रही है कहीं-कहीं! अल्लाह करे, आपके समान सास सबको मिले।

'मानस' लेकर क्यों मैं गा रहा हूं? घूम रहा हूं? क्योंकि 'मानस' ने संतुलन किया। तुलसी ने बेलेन्स किया; तुलसी ने संतुलित किया। रामराज्य स्थापित हुआ; तुलसी ने पहले ये लिखा कि रामराज्य में सभी पुरुष एक पत्नीव्रत थे। हमारे यहां कहा गया, स्त्री एक पतिव्रत; स्त्री पतिव्रता हो। तुलसी स्पष्ट लिखते हैं, एक नारीव्रत। प्रत्येक पुरुष एक नारी में अपना समग्र सुख निहारता था। पहला दायित्व पुरुष का था। जो पुरुष लंपट नहीं होता उसकी स्त्री स्वैरविहारिणी कभी नहीं हो सकती। और जो स्त्री स्वैरविहारिणी होगी उसका पति भी स्वैरविहार करेगा। दोनों का दायित्व है। तुलसीदासजी क्यों कहते हैं, 'बंदउ सीता राम पद।' सीता और राम पति-पत्नी है; दोनों के चरणों की वंदना; दोनों को एक समान बात। ये अपनी पत्नी में एक पत्नीव्रत देखे रामराज्य में। और एक स्त्री अपने पति में एक पतिव्रत देखे; दोनों को कहा है। अन्य ग्रंथों में केवल माताओं को कहा है, तुम आदर्श।

जो लोग तुलसी को नारी निंदक कहते हैं उसको पहले एक बार शांति से 'रामचरितमानस' का पाठ कर लेना चाहिए। फिर धीरे-धीरे अंदर ऊतरना चाहिए। आप गंगा के तट पर जाओ। ठंड में आप स्नान न करो तो जल के छिंटे शरीर पर लगाओ तो आदर तो हो गया लेकिन भीग नहीं पाओगे। भीगने के लिए तो 'मानस सर' में डूबकी लगानी पड़ेगी। डूबोगे नहीं तो भीगोगे नही; अंदर ऊतरना चाहिए। अब कुछ सालों से कथाएं चल रही है वो अंदर डूबने की प्रक्रिया है। अब वक्ता-श्रोता जरा नहाए। सास-बहु का संतुलन रामकाल में देखो; जानकी-कौशल्या संतुलन देखो; पति-पत्नी का संतुलन देखो; भाई-भाई का संतुलन देखो; इसलिए गांधीजी भी कहते हैं कि रामराज्य होना चाहिए तो एक पुरुष अपनी स्त्री में अपना पूरा संसार समाहित कर दे, तो इस पुरुष में इस व्रत का तेज शरू हो जाता है। एक स्त्री अपने पुरुष में अपना पूरा सुख समाहित कर देती है उस स्त्री में एक तेज आता है।

'मानस' की एक पंक्ति बताउं। आनंद समाता नहीं है! हमारे भाग तो जुओ! चोपाईयां गा-गा करके क्या मौज़ कर रहे हैं! और दुनिया को यही तकलीफ़ है, ये लोग मौज़ क्यों कर रहे हैं? व्यासपीठ के समान विश्व में कोई न संपन्न है; न प्रसन्न है। मेरी व्यासपीठ प्रेममार्गी है, मोक्षमार्गी नहीं है। क्या है मोक्ष? किससे मुक्त होना है? इतनी प्यारी दुनिया को छोड़कर मुक्त होना है? प्रेम करो; प्यार करो, बशीर बद्र की एक गज़ल है-

खुद को इतना भी मत बचाया कर।
बारिशे हो तो भीग जाया कर।

अपने आप को मत बचाओ। थोड़ी बारिश होती हो तो थोड़ा नहा लो; एन्जोय कर लो। ये दुनिया जीने जैसी है। शे'र सुनिये-

चांद लाकर कोई नहीं देगा,
अपने चेहरे से जगमगाया कर।

और अपना चेहरा जगमगाना हो तो बाप की सेवा करो; बेटे की सलाह को इक्कीसवीं सदी में समझो। सास बहु को प्यार करे; बहु सास की सेवा करे; पति-पत्नी एक दूसरे व्रतधारी बनकर तेज बढ़ाए।

दर्द हीरा है दर्द मोती है।
दर्द आंखों से मत बहाया कर।

ये आंसू दर्द के आंसू ये हीरा है, ये मोती है।

तमे रांकना छो रतन समां, न मळो हे अश्रुओ धूळमां,
जो अरज कबूल हो आटली, तो हृदयथी जाओ नयन सुधी।
दिवसो जुदाईना जाय छे, ए जशे जरूर मिलन सुधी।

मारो हाथ झालीने लई जशे, मुझ शत्रुओ ज स्वजन सुधी।

तो बाप! 'दर्द हीरा है दर्द मोती है। दर्द आंखों से मत बहाया कर।' बहुत प्यारा शे'र है; सीधा सादा सरल; माँ के दूध की तरह; बिलकुल सरल। जरा नोटी शे'र है-

काम ले कुछ हसीन होठों से,
बातों बातों में मुस्कुराया कर।

मुस्कुराया कर। तुम्हारे इतने हसीन होठ है तो उससे कुछ काम ले और काम यही लेना, मुस्कुराओं। ये पेड़-पौधें मुस्कुरा रहे हैं। हतभाग्य इन्सान है जो मुरझाया बैठा है!

दर्दने गाया विना रोया करो।
प्रेममां जे थाय ते जोया करो।

-कैलास पंडित

शे'र सुनिये आखिरी-

कौन कहता है दिल मिलाने को?
कम से कम हाथ तो मिलाया कर।

मैं आपसे निवेदन करना चाहूंगा कि गंगा पवित्र नदी है, इस में तो कोई दो राय नहीं है। लेकिन गंगा का पानी यदि गंदा है, बहुत गंदा है। मानो जैसे आजकल हमने गंगा की दशा कर रखी है! दुनियाभर का कचरा उसमें हम डाल देते हैं! करोड़ों-अबजों रूपये की योजनायें बनी है। अभी उसका परिणाम आयेगा जरूर। लेकिन अभी दिखता नहीं हैं। जिम्मेवार लोगों को मैं अक्सर पूछता रहता हूं। तो गंगा बहुत पवित्र है। लेकिन उसमें बहुत गंदा पानी बहता है। तो कभी-कभी आदमी को नहाने का जी नहीं करता है। है तो पवित्र। दर्शन से हम पवित्र हो जाते हैं। लेकिन नहाने का जी न भी करे; हो सकता है। और यदि कोई अपनी श्रद्धा से नहा भी ले तो गंदा पानी होने के कारण अपना शरीर भी गंदा हो सकता है। श्रद्धा का विषय ओर है। लेकिन गंदा पानी होने के कारण कुछ केमिकल्स अंदर मिल गये हैं। कुछ गंदगी डाली है; कुछ शब डालें गये हैं; पूजा की सामग्री डाली है। श्रद्धा की बात ओर है। निर्मल जल होना चाहिए। रामकथा क्या है? 'सकल लोक जगपावनी गंगा।' ये गंगा है। लेकिन इस रामकथारूपी गंगा में यदि पानी गंदा बहे तो? किनारे पर बैठेंगे, श्रद्धा से देखेंगे।

रामकथा गंगा है बाप! लेकिन उसमें निर्मल जल माँ सीता है। राम की सेवा करने में जिस सीता के चेहरे पर तेज है सतीत्व का जिसको तुलसी कहते हैं-

सती सिरोमनी सीय गुन गाया।
सो गुन अमल अनुपम पाया।

रामकथा की गंगा में सती शिरोमनी सीता की कथा ये निर्मल जल है; अमल है। मेरे गोस्वामीजी कहते हैं, इस रामकथा में जो अमृत जैसा जल बहता है ये है सीता; ये है 'मानस-सीता'। सीता सर्व वेदमयी, सर्व देवमयी। ये सीता है। तो सती अपने सतीत्व के कारण तेजस्वी बनती है। पुरुष पूरा संसार अपनी मर्यादा में एक जगह ड़ालने से तेजस्वी बन जाता है। ऐसे अच्छे सुर लगाने में बजानेवाले के चेहरे पर तेज आता है। अच्छे वादक के चेहरे पर तेज आता है। अच्छे गायक के चेहरे पर तेज आ जाता है; यदि रमत न करे तो! खेल करो तुम्हारे स्वभाव की कुटिलता के कारण तो बात ओर है। भागवतकार कहते हैं, स्वभाव त्यागना बहुत कठिन है। हम कितने लाभ से वंचित रह जाते हैं अपने कुटिल स्वभाव के कारण! सोचो, अवसर पर मूढ़ आदमी भी प्रवेश करे तो पंडित हो जाता है। और बिना अवसर पंडित झूठी एन्ट्री मारे तो मूर्खो में गिनती हो जाती है।

पुष्पवाटिका में पहले राम की एन्ट्री, बाद में सीता की एन्ट्री। रंगभूमि में पहले राम की एन्ट्री, बाद में सीता की एन्ट्री। महान हो वो बाद में आते हैं। दोनों जगह हमारी माँ बाद में आती है। रंगभूमि में जब हमारी सीता प्रवेश करती है, 'पगूधारी।' पगूधारी के दो अर्थ; सीता ने पग धारण किया, रंगभूमि में जैसे मंडप में प्रवेश किया, रंगभूमि में प्रवेश किया, बगीचे में प्रवेश किया। लेकिन तुलसी ईष्ट तो राम, इसलिए राम को छोड़ नहीं पाते। दोनों एक है। राम की लीला की सहचरी सीता है और सीता की लीला के सहचर राम है। एक-दूसरे के सहसर-सहचरी का सुभग मिलन है। बोले, अकेली सीता नहीं आयी। जिस राम के सीने में भृगुऋषि के चरणचिह्न है वो राम भी आ चुके हैं। 'देखिय रूप मोहे नरनारी।' तो जैसे सीता आयी तो रूप देखकर नरनारी मोहित हो गये। अरे यार! नारी के रूप में नर मोहित हो ये स्वाभाविक प्राकृतिक आकर्षण है लेकिन नारी के रूप में नारी मोहित हो जाये ये जरा विचित्र-सा लगे। यद्यपि होती है। छोटी कन्या बहुत सुंदर हो तो एक स्त्री भी कहती है, बड़ी सुंदर कन्या है। तो नारी को भी नारी में आकर्षण होता है। लेकिन तुलसी तो 'उत्तरकांड' में कहते हैं, 'मोह न नारि नारि कें रूपा।' नारी को नारी के रूप में मोह नहीं हो सकता। तो 'रूप देखी मोहे नर नारी।' तो यहां नर-नारी क्यों मोहित हुए? पगूधारी राम को देखकर मिथिलानी नारी आकर्षित हो गई। और सीय को देखकर मिथिलानी पुरुष मोहित हो गये। तो जनक ने सुअवसर देखकर सीता को बुलाया। 'सकल सखी आयी।' और कैसी है सखियां? सुंदर है सब। उत्तमों में से सर्वोत्तम का चुनाव होता है। जो सखियां जानकी के संग आई वो सखियां कोई ऐसी-वैसी नहीं थी। सब सुंदर सखी है। बड़ी संख्या में है। और सब जानकी को लेकर आई। उसी समय जानकी ने देखा मंच पर राघव को, 'रामहि चितव भायँ जेहि सीया।' मर्यादा है साहब! पुष्पवाटिका में तो ऐसे ही देख लेते थे दोनों। एक-दूसरे को समर्पित हो गये। लेकिन यहां तो रंगभूमि है। राजे-महाराजे बैठे हैं; सुंदर-सुंदर सखियां इर्द-गिर्द में है। और तुलसी कहते हैं-

रामहि चितव भायँ जेहि सीया।
सो सनेहु सुखु नहिं कथनिया।।

देखो, ये तुलसी कहते हैं। मैं आपसे निवेदन करूं, लौकिक अथवा अलौकिक दोनों रूप साहब! लौकिक रूप का अनादर नहीं करना। क्योंकि लौकिक प्रेम से ही अलौकिक प्रेम प्रदेश में प्रवेश किया जा सकता है, भूलना मत।

लौकिक प्रेम या अलौकिक प्रेम उसकी गहराई में जब आदमी जाता है उस समय न तो आप लौकिक गहराईयों का वर्णन कर सकते हैं, न अलौकिक का वर्णन। ये मनोविज्ञान है; ये मानसशास्त्र है। हमारी सीता यही तो सिखाती है। भवानी के दर्शन से पूर्व वो झरने के बहाने, पेड़-पौधों के बहाने, पीछे मुड़-मुड़ कर राम का दर्शन कर लेती है। ये सब बहाने हैं। ज्ञात का हाथ पकड़कर अज्ञात के पास जाया जाता है। आओ, मैं तुझे उसको मिला दूं। ऐसा कोई कहे तो ये हमारा परिचित है। इसलिए ऐसा कहता है। परिचित का हाथ पकड़कर हम जिसका परिचय नहीं पा चुके उसका परिचय हो सकता है। स्वयं सीता इस सुख का वर्णन नहीं कर सकती कि मुझे क्या हो रहा है? सीता स्वयं इस स्नेह की कथा नहीं कह सकती और तुलसी भी नहीं कह सकते। जब आप इतना गहराई में जाओगे तो तुम्हारी वाणी कुछ कथन नहीं कर पायेगी। स्वयं सीता सर्ववेदमयी, सर्वदेवमयी वो सीता उस सुख और स्नेह को कथन नहीं कर पाई। कवि याने तुलसी और सीता माने माँ, दोनों का यहां पराजय है। लेकिन ये पराजय नहीं है, हकीकत का स्वीकार है। कई लोग कहते हैं न, कई लोगों के पास जाते हैं तो कुछ बोल नहीं पाते! कुछ समझ में नहीं आता!

तो जानकी सुअवसर में प्रवेश करती है उस समय सीता रंगभूमि में आई। वहां सीयाजु का जो प्रवेश है और पुष्पवाटिका प्रवेश है; दोनों में बहुत अंतर है। पुष्पवाटिका में तो तुलसी दूर चले गये। इवन लक्ष्मण भी उसमें विक्षेप नहीं करते हैं, लेकिन रंगभूमि में तो क्या कहना? फिर तुलसी कहते हैं, ये जगदंबा है; जगत की माँ है; ये रूप-गुन की खान है। उसकी सराहना कौन कर सके? तो कुछ अनुभूतियां है जो कहना मुश्किल है। ऐसी सीता सर्ववेदमयी है, सर्वदेवमयी है।

'अव्यक्त परमात्मा में अपना चित कैसे एकाग्र करे?' वो व्यक्त नहीं है। अव्यक्त में चित्त एकाग्र नहीं हो पाता है इसलिए हमारे देश में मूर्तिपूजा आई। जिस मूर्ति पर हमारा प्यार होता है उस में थोड़ा हम एकाग्र हो सकते हैं। अव्यक्त में चित्त एकाग्र नहीं होता इसलिए हमारे यहां बुद्धपुरुष की परंपरा आई। हमारे काल में जैसे कभी बुद्ध रहे, कभी महावीर रहे, कभी नानक रहे, कभी कबीर रहे। तो समकालीन जो बुद्धपुरुष है उसी में चित्त एकाग्र करना क्योंकि वो व्यक्त है। अव्यक्त ब्रह्म का व्यक्तरूप है बुद्धपुरुष। 'गुरुर्ब्रह्मा'; तो ये उपाय है। और कई-कई संप्रदायवालें अपने-अपने पंथोंवालें बिलग-बिलग चित्त एकाग्रता के लिए प्रयास भी कराते हैं। यहां चित्त लगाओ; यहां भृकुटि पर दृष्टि रखो; नाशाग्र दृष्टि रखो। ये सब प्रयास है; सब थकावट है। व्यक्त जो जीवित चेतना हैं उसके चरण में अनुराग करो, चित्त अपने आप एकाग्र हो जाएगा। एक माँ बालक में प्रेम करने के लिए, एकाग्र होने के लिए, बालकमय होने के लिए कोई ध्यान, धारणा, यम, नियम, आसन, प्राणायाम कुछ नहीं करती। चित्त उसी में लगा रहता है। क्योंकि प्यार है; प्रीत है। प्रेम में ऐसी व्यवस्था है कि केवल चित्त क्या, 'मन बुद्धि चित अहमिति बिसराई।' तुलसी कहते हैं, पूरा अंतःकरण न के बराबर हो जाता है प्रेमदशा में। तो बाप! मेरी समझ तो यह है कि व्यक्त से अव्यक्त की यात्रा; लौकिक से अलौकिक की यात्रा; इसी को हम समझें।

दूसरा प्रश्न, 'आज के कलिकाल में धर्म श्रद्धा का ही विषय है?' बिलकुल धर्म श्रद्धा का विषय है लेकिन

अंधश्रद्धा का नहीं। धर्म श्रद्धा का ही विषय है, अश्रद्धा का तो है ही नहीं। 'श्रद्धा बिनु धर्म नहीं होई।' मेरे तुलसी ने लिख दिया है, तुझे कुछ नहीं करना पड़ेगा। 'आदौ श्रद्धा।' श्रद्धा मिन्स ये परचा, ये चमत्कार, ये दोरा, ये धागा, ये फलां नंग, ये फलां नंग, ये फलां पूजा, ये फलां नहीं! एक बहुत बड़ा विज्ञान है श्रद्धा। श्रद्धा सामान्य चीज़ नहीं है। आप की श्रद्धा रही होगी कि शायद व्यासपीठ से मुझे तसल्ली हो ऐसा जवाब मिले। इसलिए आपने ये प्रश्न पूछा होगा। बिना श्रद्धा आप प्रश्न भी नहीं कर सकते। श्रद्धा को अवैज्ञानिक मत समझो, प्लीज़। अंधश्रद्धा को अवैज्ञानिक समझो; वो तो वैज्ञानिक है ही नहीं; टोटली अवैज्ञानिक है। श्रद्धा तो वैज्ञानिक है। श्रद्धा पार्वती है। और वैज्ञानिक किसी चीज़ को उत्पन्न करता है। वैज्ञानिक किसी चीज़ को सुरक्षित करता है। वैज्ञानिक उसका नाश भी करता है। और श्रद्धा कौन है? भवानी। इसलिए तुलसी कहते हैं कि 'भव भव बिभव पराभव कारिणी, विश्व विमोहिनी स्वबस।' श्रद्धा स्ववश है, परतंत्र नहीं। दोरे-धागे के आधार में श्रद्धा नहीं पलती; परचा-चमत्कार में श्रद्धा पलती नहीं। श्रद्धा स्ववश विहारिणी है। मैंने आपको कहा था 'गीता' के न्याय से कि कभी भी ये बुरा आदमी है कि अच्छा आदमी है, ऐसा निर्णय देना ही मत। आदमी न बुरा है, न अच्छा है। आदमी कैसा है? जैसी उसकी श्रद्धा। श्रद्धा मेरी दृष्टि में परिपक्व विज्ञान है। अंधश्रद्धा विज्ञान है ही नहीं। ये भ्रम है, ये धोखा है, ये पाखंड है, ये फरेब है, ये दुकान चलाने का धंधा है! ये करूं, ये करूं, ये कर लूं! कभी-कभी एक मंच से हम ऐसी बातें सुनते हैं तो अदब भी रखनी पड़ती है। साधुता बीच में आती है। सुनना भी पड़ता है। और ऐसे रीच मंच से भी कई लोग ऐसी अंधश्रद्धा की बातें करते हैं तब दया आती है! खुद का जीवन तो धोखे में कर रहा है। और सुननेवालों को भी धोखे में डाल रहा है। श्रद्धा है परम विज्ञान।

'बापू, सद्गुरु के चरणों में प्रीति बढ़े इसके लिए क्या करें?''नाह-नेह नित बढ़त बिलकत।' तुलसी कहते हैं, अपने प्रियतम के चरण में सीता का नेह अपनी ओर नाह माने पति, ईश्वर, उसका नेह बढ़ता देखकर दिवस में जैसे चकवी सुख में रहती है वैसे जानकी रोज खुश रहती थी। वैसे बुद्धपुरुष के चरणों में प्रेम बढ़ने के लिए क्या करें? कुछ करो मत। प्रेम किया नहीं जाता, हो जाता है। प्रेम कैसे बढ़े? शिकायत मुक्त प्रेम है तो बढ़ेगा; अपेक्षामुक्त प्रेम है तो बढ़ेगा; दंभमुक्त प्रेम है तो बढ़ेगा। प्रेम तो बढ़ेगा। आड़ निकालो। पानी बह रहा है; बीच में कुछ आड़ पत्थर आ गए हैं उसको हटाओ। 'कामना रहितं अविच्छिनं' नारद कहते हैं, 'प्रतिक्षण वर्धमानं।' 'गुण रहितं'; नारद भक्तिसूत्र के सभी सूत्र है। लेकिन मैं आपको एक कुंजी बताऊं।

तीन वस्तु तुम्हारे और मेरे जीवन में बढ़े तो समझना बुद्धपुरुष में हमारा प्रेम बढ़ा है। एक, जब किसी बुद्धपुरुष के सामने जाते ही हृदय आंदोलित होने लगे। आंदोलित तरंगे बढ़े, हृदय में ऊर्मियां बढ़े। कभी न सोचा हो ऐसा एक अनुभव जो कथन से बाहर है। और ये सब हम अनुभव करते हैं। कभी ऐसे महापुरुष के पास पहुंचते हैं तो दिल में आंदोलन होता है। दिल आंख की परवाह नहीं करता। दिल हाथ की परवाह नहीं करता, पैर की परवाह नहीं करता, शरीर के किसी अंग की परवाह नहीं करता। दिल कहता है, मैं नाच लूं। मुझे मौका मिला है, मैं नाचूं। मैं नाचुंगी; जैसे मीरां का दिल आंदोलित होता है। तीन ही सूत्र मेरी समझ में; अनुभव में। मैं मेरे दादाजी के सामने जब रामकथा पढ़ता था इतना ही नहीं, दादा को जब चाय देने जाता था; दादा के चरण दबाता था; दादा का सामीप्य जैसे ही मिलता था, दिल नाचने लगता था कि मैं तलगाजरडा में नहीं हूं, मैं त्रिभुवन में हूं। ये मेरा अनुभव है।

बुद्धपुरुष के चरणों में प्रेम बढ़ रहा है उसका पहला प्रमाण है दिल का आंदोलित होना। लेकिन दूसरे कदम की प्रतीक्षा करे। और कदम ऊठाईए भी। केवल दिल आंदोलित हो, पर्याप्त नहीं है। उसके बाद बुद्धपुरुष को देखने के बाद दिल आलोकित बने। आलोकित होना; जब प्रेम बढ़ता है बुद्धपुरुष के चरणों में तब अंदर एक रोशनी-सी होने लगती है। दिल आलोकित होता है। अब मैं बहुत सबल और सटीक प्रमाण दूं। विवेकानंद ठाकुर के पास गये तो पहले विवेक का दिल आंदोलित हुआ; भौर भयो; एक उजाला हुआ। परम आश्चर्य से साधक भरने लगता है। ये कहां से ऊघाड़ हुआ? ये किस की कृपा है? दिल का आलोकित होना बुद्धपुरुष के वचन से भी होता है; दिल का आलोकित होना बुद्धपुरुष की एक करुणामयी दृष्टि से भी होता है; आलोकित होना; जैसे लगे कि साम्राज्य पा लिया। थोड़े में राजी मत होना। छांदोग्य उपनिषद की श्रुति है, 'न अल्पे सुखम् अस्ति।' थोड़े में हमें संतोष नहीं हैं; हमें पूरा मिले। इसलिए कबीर कहते हैं, 'कह कबीर मैं पूरा पाया।' मेरे तुलसी कहते हैं, 'पायो परम विश्राम।'

मैं मेरे साधक को खास कहूं, थोड़े में राजी मत होना। सद्गुरु को खूब लूटो, खूब खाओ। ओशो का एक शब्द है, बुद्धपुरुष को भोगो। ये तो कोई भी शब्द बेधड़क लगाते! लेकिन मेरी व्यासपीठ की एक वो है कि 'भोग' शब्द का गलत अर्थ कोई साधक अंधश्रद्धावालें, घेलछावालें कहीं कर न ले और अध्यात्म को कहीं दाग़ न लग जाये। आलोकित हो, ऊजियारा हो। लेकिन उससे भी राजी मत होना। तीसरा और अंतिम आखिरी चरण; बुद्धपुरुष के चरण में प्रेम की ओर बढ़ोतरी का आखिरी गौरीशंकर, आंदोलन का पता न रहे। आलोक-अंधेरे का कोई फर्क़ न रहे। गज़ल का एक बड़ा प्यारा शे'र है-

वो करम करते हैं कि सितम करते हैं।
हमने उस नज़र से उन्हें कभी देखा ही नहीं।

मेरा बुद्धपुरुष हम पर करुणा करता है कि जुल्म करता है; हम पे बुद्धपुरुष क्या करता है वो हमने देखा ही नहीं। बड़ी प्यारी गज़ल। दुनिया, संसार, मित्रता न के बराबर हो जाते हैं जब दिल आलोकित हो जाये। और जब आखिरी दशा में साधक पहुंचता है; बाकी जब तक हम उसी कक्षा में नहीं जाते तब तक ठीक है दुनिया। लेकिन दुनिया को मिटाना नहीं है, दुनिया सामान्य लगती है। क्योंकि पूरा पाया। थोड़े में हम राजी नहीं होंगे। आलोकित होना। लेकिन तीसरा चरण जो मैं कहने जा रहा हूं वो न आये तब तक राजी मत होना। दूसरी सीढ़ी पर अपना विश्राम कक्ष मत बना लेना। विश्राम कक्ष तो आखिरी सीढ़ी है। और वो तीसरा अनुभव का शब्द है, आनंदित होना। आनंद ही आनंद बरस रहा है। बलिहारी ऐसे सद्गुरु की। न सुख का पता, न दुःख का पता; न राग का पता, न द्वेष का पता; न अंधेरा का पता, न उजाले का पता; न कुछ होने का पता, न कुछ भी न होने का पता। केवल आनंदित होना है।

तुम्हारा प्रेम बढ़ेगा तो दुश्मन भी तुम्हारे लिए दुआ करेगा। अस्तित्व साथ में आ जाएगा। 'रामचरितमानस' में सीताराम की वंदना में लिखा है, मैं सीता-राम दोनों के चरणों मे प्रणाम करता हूं, जिसको खिन्न प्रिय है। खिन्न मिन्स दीन-दुःखी। इसका मतलब ये मत करना सीता-राम को दीन-दुःखी प्रिय है इसलिए हम दीन-दुःखी हो जाये। तुम समर्थ रहो। लेकिन परमात्मा की सहाय करने की ये रीत है। आप दीन है, दुःखी है तो सहाय करेंगे। आप समर्थ हो गये तो आपको स्वतंत्र छोड़ देते हैं कि बेटा, तू समर्थ है। अपने आप खेल। यदि तू दीन है तो मैं प्रेम करूं, तुझे बचाउं, तेरी रक्षा करूं। और तू समर्थ हो तो तुम्हें छोड़ दूं। तू स्वतंत्र अपने ढंग से खेल।

इक्कीसवीं सदी में ऐसे निराशावादी लब्ज़ बंद करने चाहिए। मैं कैसा भी हूं, तेरा हूं। शंकराचार्य ये हमको सिखा गये। 'मत् समः पातकी नास्ति।' माना, कुबूल, मेरे समान कोई पापी नहीं। लेकिन तू भी तो तेरा पद संभाल; तुम्हारे समान पाप से मुक्त करनेवाला भी कोई नहीं। और फिर भी तुझे कुछ करना ही है तो 'यथायोग्यम् तथा कुरुम्।' कृष्ण कहतै है, तू मेरा है। भगत तो परम शौर्य का नाम है। भगत तो नरसिंह होता है। इसलिए भगत शिरोमणी नरसिंह है, नृसिंह हैं। नरसिंह पंचानन है। पांच विचार; वैचारिक पंच मुख जिसको है उसको मैं नरसिंह मेहता कहता हूं। अभी मैं नरसिंह मेहता युनिवर्सिटी में बोल रहा था तो छात्रों को और प्रोफेसरों को मैंने कहा कि नरसिंह मेहता नृसिंह है। और सिंह को हम पंचानन कहते हैं। चार हाथ और पांचवां मुख; ये पांच मुख है उसके। शेर के पंचानन। पांच प्रकार की वैचारिक मुखाकृति है नरसिंह मेहता की इसलिए आदमी शौर्यवान है, भीखमंगा नहीं। उसको पता है, उसकी श्रद्धा है, 'देवा रे वाळो नथी दूबळो, मारो भगवान नथी रे भिखारी।'

मैंने अभी-अभी कुछ कहना शुरू किया कि अपने यहां कहा जाता है कि 'साधु तो चलता भला।' ये अधूरा है। 'साधु तो चलता भला।' इतना पर्याप्त नहीं। 'साधु तो चलता भला', 'चरैवेति' होना चाहिए लेकिन 'साधु तो जागता भला।' कई लोग नींद में चलते हैं! आदमी नींद में चलता है! तो साधु हो गये? नको। 'साधु तो चलता भला।' दूसरा सूत्र है, तलगाजरडी सूत्र, 'साधु तो जागता भला।' लेकिन जागता हो इतना ही नहीं। 'साधु तो भजता भला।' जो भजन करता हो, जो हरिस्मरण करता हो वो साधु; तीन सूत्रीय साधु। उसकी चर्चा कल करेंगे।

तीन वस्तु तुम्हारे और मेरे जीवन में बढ़े तो समझना बुद्धपुरुष में हमारा प्रेम बढ़ा है। एक, जब किसी बुद्धपुरुष के सामने जाते ही हृदय आंदोलित होने लगे। उसके बाद बुद्धपुरुष को देखने के बाद दिल आलोकित बने। जब प्रेम बढ़ता है बुद्धपुरुष के चरणों मे तब अंदर एक रोशनी–सी होने लगती है। तीसरा और अंतिम आखिरी चरण; आंदोलन का पता न रहे। और वो तीसरा अनुभव का शब्द है, आनंदित होना। न सुख का पता, न दुःख का पता; न राग का पता, न द्वेष का पता; न अंधेरा का पता, न उजाले का पता; न कुछ होने का पता, न कुछ भी न होने का पता। केवल आनंदित होना है।

सीता त्रिधर्ममयी है

बाप! आज के दिन की कथा के आरंभ में पुनः एक बार आप सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। 'मानस-सीता', जिसकी संवादी चर्चा हो रही है उसमें कुछ ओर दर्शन करें। पूज्यपाद गोस्वामीजी रामवल्लभा सीता को प्रणाम करते हैं जो उद्भव, स्थिति, संहार करनेवाली है; आश्रित जीवों के क्लेश को हरनेवाली है और सर्व का शुभ करनेवाली है। ऐसी सीता 'सीतोपनिषद' में सर्ववेदमयी है; सीता सर्वदेवमयी है। कल के सूत्रों को याद करें। सीता सर्ववेदमयी, सर्वदेवमयी; यहां आप हर शब्द के आगे 'सीता' लगा सकते हैं। क्योंकि उपनिषद का मूल पाठ क्या है 'सा सर्वदेवमयी।' 'सा' को मैंने सीता कर दिया है। सा मानी संकेत है सीता की ओर क्योंकि ये 'सीतोपनिषद' का मंत्र है। लेकिन 'सा सर्ववेदमयी।' मूल सूर, सा, रे, ग, म, प, ध, नी, सा; 'सा सर्ववेदमयी।' यद्यपि 'सा' सर्व सूत्र के आगे नहीं है। 'सा' प्रारंभ में ही है। लेकिन विशेष सरलता के लिए 'सा सर्वलोकमयी।' 'सा सर्वकीर्तिमयी।' 'सा सर्वधर्ममयी।' 'सा सर्वद्धार।' 'सा कार्यकारणमयी।' 'सा महालक्ष्मीदेवस्य।' 'सा भिन्नाभिन्नरूपा।' 'सा चेतनाचेतनात्मिका।' 'सा' मानी तलगाजरडा उसका ये अर्थ करता है कि सा= सीता सर्वदेवमयी। आप कहेंगे कि आपको क्या अधिकार है? पहले मंत्र का आप परिवर्तन कैसे कर सकते हैं? ये ऋषि का अधिकार है। आप हस्तक्षेप क्यों करते हैं? ऋषि नहीं कह सकता, आप कह सकते हैं, क्योंकि ऋषि जानता है कि तलगाजरडा बराबर कर रहा है। लेकिन आप मना कर दे!

'सीतोपनिषद' में तो 'सा सर्वदेवमयी', वैसे 'सा, सा, सा' सब जगह 'सा' लगाकर बुलाया गया आप से। कल मैंने कहा वो 'सा' के बदले 'सीता सर्ववेदमयी।' मैं इसलिए स्पष्टता करता हूं। मेरे श्रोता इतने अभ्यासु और खोजी बनते जा रहे हैं कि किसी ग्रंथ का नाम दूं तो कभी न कभी वो ग्रंथ को खोलकर स्वाध्याय करते हैं। ये मुझे अच्छा लगता है। और तब ग्रंथ में केवल आप 'सा' देखो और मैंने तो 'सीता' बुलवाया तो आप को लगेगा कि बापू की चूक है; या फिर उन्होंने कोई गलती कर दी है। गलती हो सकती है जिह्वा से। क्योंकि निरंतर चार घंटे बोलना ये तो अल्लाह बचाये! ये बहुत कठिन है साहब! मैं आज रात को जाग रहा था। यज्ञ के पास थोड़ी देर बैठा फिर झूले पर बैठा तो मुझे मेरी एक चूक पकड़ में आ गई कि पहले दिन मैंने निवेदन किया था कि आषाढ़ी नवरात्र है। और उसमें मैने चूक से कह दिया कि ये रामदेवपीर के नवरात्र है। रामदेवपीर के नवरात्र भाद्रपद में होते हैं लेकिन मैंने पहले दिन आप को आषाढ़ कहा। आज रात को मुझे स्मरण आया। तो कुछ बातें ऐसी न हो जाए कि गलतफहमी बन जाए। एक ही बार 'सा' आता है पूरे मंत्र में और आज तो मैंने 'सा, सा, सा, सा' सब जगह लगाया! और कल तो मैंने 'सा' हटा दिया! 'सीता' सर्ववेदमयी।' ये कृपा के केनवास पर प्रेम की पींछी से भरा हुआ रंग है। तो ये रंग पुरने की छूट दे देता है।

तो वेदमयी है माता। और सीता वेदमयी है। तीनों वेद। सीता के गुणगान वेद भी नहीं गा पाते। वेद का क्रिया-कांड़ सीता में है। वेद का उपासना-कांड़ सीता में है और वेद का ज्ञान-कांड़ भी सीता में है। राम की लीला में उसकी सहचरी बनकर क्रिया-कांड़ बताया है। वेद का ज्ञान-कांड़ सीता ने जब अग्नि प्रवेश की बात आयी तो मुस्कुराते हुए समझदारी के साथ प्रेम के साथ कि ये तो सब लीलामात्र है, नाटकमात्र है। समझ के साथ उसने अग्नि में प्रवेश किया। वहां जानकी ज्ञान-कांडमयी है। और निरंतर अपने प्रियतम के स्मरण में अपने पैर के तलवे पर निगाहें ड़ालकर निरंतर राम का स्मरण करने का स्वरूप सीता का ये उसकी उपासनामयी कांड़ का स्वरूप है। सीता सर्ववेदमयी। और ब्रह्मा सर्जन करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और शिव संहार करते हैं। तो 'उद्भवस्थितिसंहारकारीणिम्।' ये तीनों का काम सीता अकेली करती है इसलिए 'सा सर्वदेवमयी।' तीन देवमयी सा सीता। तो सिद्ध होता है कि सीता सर्वदेवमयी है।

प्रत्येक इन्द्रिय के देवता होते हैं। माँ सीता में सर्व देव समाहित है। सा अथवा सीता। अथवा कुछ नहीं। लोकमयी। तीन लोक; सब तीन-तीन की गिनती है यहां, स्वर्ग, मृत्यु, पाताल, सीता तीनों जगह है। पाताल में दुर्गा के रूप में है। मैंने एक दिन पहले कहा कि सीता के जो रूप है उसमें एक रूप दुर्गा का भी है और एक रूप लक्ष्मी है। कीर्ति भी है, श्री भी है। सीता पाताल में है। सीता पृथ्वी पर भी है। पृथ्वी की तो बेटी है; पृथ्वी में समाई है।

तुलसीदासजी ने 'रामाज्ञा' एक ग्रंथ लिखा छोटा-सा। उसमें सीता के दो विवादास्पद प्रसंगों का वर्णन किया है। सीता की अग्निपरीक्षा और सीता का भूमि प्रवेश। उसमें तुलसी कहते हैं कि सीता की अग्निपरीक्षा जो है ये शुभ है, शुकन है, ये मंगलमय है। ये जगत के लिए वरदान है अग्निपरीक्षा। लेकिन सीता का पृथ्वी प्रवेश ये अमंगल है। कोई बुद्धपुरुष जगत में आये तो उसकी अग्नि कसौटी विश्व के सगुन है लेकिन जब वो बुद्धपुरुष चला जाए तो ये जगत के लिए अमंगल है।

तुलसीदास एक प्रसंग को सगुन कहते हैं, एक प्रसंग को असगुन कहते हैं। नरसिंह मेहता का हारमाला का प्रसंग सगुन है। अपने को पीड़ा हो जाए कि नरसिंह मेहता को ऐसा हुआ। लेकिन ये हमारे लिए सगुन है कि ऐसे-ऐसे महत्तम व्यक्तियों की भी अग्निकसौटी हुई तो हम और आप तो किस खेत की मूली? ये हमारे लिए सगुन है, ये ढ़ाढ़स है। लेकिन बुद्धपुरुष की बिदाई! जिसस जब गये, सुकरात जब गये, बुद्ध जब गये, अमंगल बताया है। जब कृष्ण ने प्रयाण किया तो गोमती नदी मुंह छिपा गई कि मुझ से ये नहीं देखा जाएगा। गांधी गये और अनगनित आंखें रोई थी। बुद्धपुरुषों का जाना हमारे लिए घाटा है। इसलिए लगता है कि ये पल क्यों आई? हमारे समय में ये पल क्यों आई? संत की दृष्टि कितनी विलक्षण होती है! ये तो 'रामाज्ञा' का भाव है। एक प्रसंग को सगुन और एक प्रसंग को असगुन बताया है।

तो सीता त्रिलोकमयी है। वाल्मीकिजी सीताजी की बाललीला की कोई चर्चा नहीं करते। लेकिन उसके अवतरण की चर्चा जरूर करते हैं इसी रूप में कि वेदवती उतरती है। और शिरध्वज की कन्या है। आई आसमां से है क्योंकि सर्व लोकमयी है। और फिर हिमालय में आकर वो वेदवती शिरध्वज कन्या तप करती है। बहुत सुंदर है। और रावण तो स्वच्छंद विचरण करता था। इतने वरदान और इतना शक्ति संपन्न आदमी था कि उसे कोई प्रतिबंध नहीं। तो वेदवती को देख गया। वो वेदवती तपस्या में लीन है। और वो रावण उसके प्रति आकर्षित हुआ। किसी के सौंदर्य के प्रति आकर्षित होने के पीछे तीन परिबल काम करते हैं। राम को पुष्प वाटिका में देखकर माँ जानकी आकर्षित क्यों हुई? देखते ही भावमयी क्यों हो गई? जिस स्त्री को राम के नाम तक का पता नहीं इसलिए नाम नहीं बता पाई।

देखन बागु कुअँर दुइ आए।

न नाम का पता, न गाम का पता और जेसा कहते हैं कि पहली नज़र का प्रेम।

दादा ने मुझे एक-एक शब्द पिलाया है साहब! वो एक-एक शब्द की गहराई तक ले जाते थे। कोई प्रसंग या एक-एक शब्द को लेकर मेरे तीन-तीन दिन का अभ्यास निकल जाता था। क्योंकि वो कहते कि बेटा, यहां ऐसा क्यों कहा? ऐसा क्यों कहा? उसमें तीन दिन निकलते थे! बड़ी महत्ती कृपा हुई। एक बात बीच में कह दूं। मैंने रामजी के हाथ से धनुषबाण क्यों ले लिए? उसका बीज कहां था? मैं छोटा था। हम खेलते थे रामजी मंदिर के ओटे पर। हमारे साधु के बच्चे मेरी उम्र के सब। तो गांव में कोई खिलौने नहीं होते थे उस समय। मिलते थे जन्माष्टमी के मेले में। तो पैसे नहीं थे। तो खेलना कैसे? मेरे साथ खेलनेवाले सब सावरणी की सली के धनुषबाण बनाते थे। साधुओं के बालक जो हम सब थे तो उसका ही धनुषबाण बनाते थे। मैंने अभी बनाया नहीं; मैं देख रहा था। तो दादा आ गये। मैं सली पकड़कर बैठा था और मैं देख रहा था कि मैं भी बनाऊं। और उसी समय दादा ने मेरे हाथ से सावरणी की सली उठायी और कहा कि 'खोटुं खोटुं ये शस्त्र न बनावाय साधुना दीकराओने।' ऐसे सली तोड़ दी और निकल गये। ये बीज बचपन में बोया था, उसी विचार बीज ने रामजी मंदिर में राम के हाथ से धनुष उतरवा दिये। खबर नहीं पड़ती अज्ञात चित्त में कि कब क्या बो दिया है और कब क्या पनपता है? वरना राम के हाथ से धनुषबाण उतार लेना! ये तो गुरु कृपा है। बाकी तो कई धर्मगुरुओं को तकलीफ़ हुई! बोले नहीं ये उसकी उदारता है। कई साहित्यकारों को तकलीफ़ हुई! वो बोले नहीं ये उसका विवेक अथवा तो जरा बोले तो मुस्कुराते हुए ताना मार कर बोले कि बापू को कौन समझाये? गांधीजी के हाथ से चरखा ले-ले तो कैसा लगता है! ऐसा भी लोग बोलते हैं, लेकिन मैंने सब पचा लिया। बहुत समय के बाद ये स्मृति ताजी हुई कि मेरे मन में ये क्या आया? वैसे शस्त्र की बात तो स्वभाव में ही नहीं है।

तो वेदवती के रूप की ओर रावण आकृष्ट हुआ। और किसी के रूप के प्रति आकर्षित होने के पीछे तीन परिबल काम करते हैं। क्यों जानकी राम के प्रति आकर्षित हुई? क्यों राम जानकी के प्रति आकर्षित हुए पुष्पवाटिका में? आकर्षण के पीछे तीन कारण होते हैं मेरे भाई-बहन; सोचिएगा। एक आकर्षण, एक खिंचाव वासनाप्रेरित होता है। कोई सुंदरता, कोई मनभावन चीज

जब आदमी देखता है तो उसके प्रति वो आकर्षित होता है। एक कारण इसको मनोवैज्ञानिक कारण कहो अथवा तो कोई खूबसूरत शब्द न भी लगाओ, केवल जीवन की अनुभूति को तलाशो; वासना प्रेरित आकर्षण होता है। एक आकर्षण होता है उपासना प्रेरित। जैसे आप को ध्यान मैं रुचि है कि मुझे ध्यान करना है। और शिवजी की मूर्ति है, उसके पास आप बैठ गये हैं। कोई अच्छा पेड़, अच्छी नदी देखी और आप को लगा कि मैं यहा बैठकर ध्यान करूं तो वो आकर्षण आप का उपासना प्रेरित है। समंदर के किनारे बैठ गये। जैसे स्वामी विवेकानंद छलांग मारकर कन्याकुमारी के दरिये में कूद कर ये विवेकानंद रोक पर बैठ गये। ये उपासना प्रेरित आकर्षण है। मैं 'रामायण' के पास बैठतां हूं तो मुझे आनंद आता है। ये उपासना प्रेरित है। मैं शिवजी का अभिषेक करूं तो ये मेरा उपासना प्रेरित आकर्षण है कि मैं कब शिव को जल चढ़ाऊं? कब मेरे शालिग्राम को मैं तुलसी चढ़ाऊं? ये उपासना प्रेरित खिंचाव है। और तीसरा ऐसा भी होता है कि न वासना है, न उपासना है, केवल नियति प्रेरित है। एक नियति के कारण कोई किसी से खींचा जाय। न उपासना है, न वासना भी है। कुछ नहीं है। लेकिन नियति खींच लेती है।

तो मेरे भाई-बहन, सीता त्रिलोकमय है; वेदवती है जो उपर से आयी है। जो शिरध्वज की कन्या है। रावण घुमने निकला है, स्वच्छंद घुमता रहता है। और उसके रूप को देखकर उसे वासना प्रेरित आकर्षण हुआ है, उपासना प्रेरित नहीं। और रावण उसके पास जाकर उसकी तपस्या में विक्षेप करता है। चलो, विक्षेप हो गया, उसने आंखें खोली और रावण उसके साथ थोड़ा अभद्र बोलने लगा, कुछ व्यवहार करने लगा। और वेदवती तपस्विनी थी। तप की एक शक्ति होती है। उससे जगत में बहुत अच्छा काम भी हो सकता है। और तप की शक्ति यदि कुछ विलग रूप में जाती है तो श्राप देकर विनाश भी कर सकती है। और वेदवती ने एकदम अपने शरीर को योगअग्नि में जला दिया। तुने मुझे छुआ है, मैं नहीं जीवित रहूंगी। मेरी तपस्या विष्णु की दासी बनने के लिए मैं कर रही थी। मैं उपर से इसलिए उतरी कि मेरे जीवन का लक्ष्य था कि मैं विष्णु किंकरी बनूं; मैं विष्णु की शरणागत बनूं। इसलिए मैं तप कर रही थी। तुमने विक्षेप किया। और इससे एक असुर का स्पर्श हुआ। वो जल कर भस्म हो जाती है। वो तो योग अग्नि में खतम लेकिन चमत्कारिक घटना कहो या तो जो भी हो, एक कमल के फूल के रूप में वो प्रगट हो गई; वेदवती जो आसमां से उतरी है। और रावण इस कमल के फूल को लेकर लंका आया। मंदोदरी ने कहा कि ये आप क्या ले आये? मुझे ठीक नहीं लग रहा है। ज्योतिषी को बुलाया; मर्मज्ञ को बुलाया। और उसने कहा कि इसे कहीं छोड़ दो; ये तुम्हारे कुल का नाश करेगी।

हमारी कथाओं में कोई ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व किसी कारण से फूल में प्रगट होते हैं; फूलमयी रूप लेते हैं; कमल से प्रगट होते हैं; ऐसे कथानक बहुत है। ये कथानक कबीर तक चला; साहिब तक चला कि कबीर की उत्पत्ति हम एक फूल में मान लेते हैं। एक फूल के रूप में उसको हम प्रगट करते हैं। कई ऐसे हैं उसको हमें कमल में ही प्रगट करना पड़ता है। क्योंकि कमल असंगता का प्रतीक है। फिर कहते हैं कि समुद्र में बहाया गया इस फूल को। और वे तैरता-तैरता योगवश समुद्र के तट पर कहीं घूमता-घूमता बिहार की भूमि पर जब किनारे पर आया। कोई उसको ले गया बिहार की भूमि पर; कोई उसको जनकपुर में ले गया। कोई वहां ले गया। अकाल के समय जनक ने हल जोता और हल की नौक से भूमि में रेखा की, उस रेखा का नाम सीता है। और उसीसे जानकी प्रगट हुई। इसलिए 'सीतोपनिषद' में जो बात आती है कि सीता सर्व लोकमयी है। ये पाताल में भी है, पृथ्वी पर भी है, स्वर्गीय भी है।

सर्व कीर्तिमयी; कीर्ति तीन प्रकार की होती है- राजसी, तामसी, सात्त्विकी। आप बहुत लोगों की हत्या करो तो भी आप की प्रसिद्धि दुनिया में हो जाती है लेकिन ये कीर्ति तामसी है। परशुराम ने इतनी बार नक्षत्री कर दी पृथ्वी को। कोई आतंकवादी ने इतने लोगों की हत्या कर दी तो फैल तो जाती है उसकी बात। और उसके चाहक उसको कीर्ति के रूप में गाते हैं। ये तामसी कीर्ति है। भय से; भाव से नहीं। कई राजसी कीर्ति है। आप के पास पैसे है; आपने मंदिर बना लिया; आपने कोई आश्रम बना लिया; आपने गौशाला बना ली; आपने भगवान की कथा का आयोजन कर लिया। अच्छा है। उसके पीछे प्रतिष्ठा मिलती है। ये सब राजसी कीर्ति है। लेकिन कोई घंटों तक पूजा-पाठ करता है; ध्यान में रहता है; आराधना करता है। कीर्ति फैल जाती है। लोग कहते हैं, अहा! छः घंटे तक पूजा-पाठ करते हैं। ये सब सात्त्विक कीर्ति है। भजन ही एक ऐसी वस्तु है जो सात्त्विक, राजसिक, तामसिक कीर्ति से मुक्त है।

तो सीता तीनों कीर्तिमय है। सीता सर्वधर्ममयी; और धर्म भी तलगाजरडी दृष्टि में तीन है। हिन्दु, मुस्लिम, शीख, इसाई, वो नहीं। तीन धर्म है। क्या नाम है उसका? तो एक है स्वधर्म; एक है परधर्म और एक है परमधर्म। ये तीन धर्म है। बिलकुल व्यापक व्याख्या है। एक स्वधर्म होता है जिसको 'गीता' में कहा कि मर जाना श्रेष्ठ है अपने स्वधर्म में। और एक परमधर्म होता है। तुम भारतीय हो, विदेश में सालों से रहते हो, मुबारक। कमाते हो; आपके बच्चें बड़ी-बड़ी युनिवर्सिटी में पढ़ते हो; घर में गुजराती बोलो, घर में हिन्दी बोलो। तुम्हारे बच्चे नहीं बोल रहे हैं। तुम्हारा स्वधर्म बनाये रखो। तुम्हारी भाषा हिन्दी हो, गुजराती हो, जो भी हो उसी में बोलो। स्वधर्म मानी अपनी भाषा को पकड़े रखो। अपना जो धर्म है; जो भी आप मानते हो, राम हो, कृष्ण हो, देवी, दुर्गा और इस्लाम हो तो इस्लाम। लेकिन दूसरे धर्म की उपेक्षा न करो। लेकिन कई लोगों को हिन्दु धर्म की बात आती है तो बस निंदा ही करनी है! हिन्दुधर्म ने बिगाड़ा क्या है तुम्हारा? गंगा हिन्दु है? यमुना हिन्दु है? तुम्हारे मुल्क में आती तो तुम उस पर डेम बना कर फसल पकाते! लेकिन तुम्हारे पास नहीं है तो तुम उसकी निंदा करो! राम की बात आती है तो निंदा! रामकथा की बात आती है तो निंदा! कितना रुग्ण चित्त है! बीमार चित्त है! हमारे धर्म में भी कई कमजोरियां है। उसे हटाओ।

दूसरा है परधर्म। धर्म का एक अर्थ होता है स्वभाव। दूसरे के जैसा मेरा स्वभाव नहीं है उसी में मत जाना। ये उसका स्वभाव है, ये तुम्हारा स्वभाव है। अपने स्वभाव में जीओ। हम छोटे ही सही, हम बुरे ही सही। जो है वो है। परधर्म में नहीं; अनुकरण न करो। गांधीजी को भी कुछ समय इच्छा हो गई थी कि मैं ईसाई हो जाऊं। उसकी एक क्षण; लेकिन राजचंद्र कृपालु ने बचा लिया। उसके साथ उसका सत्संग चल रहा था कई रूप में। चित्त डांवाडोल होता था। और उसके परिवार के एक सदस्य ने तो ईस्लाम धर्म की ओर गति कर ही ली। और गांधी उसी ठोस मक्कमता पर आये कि मैं हिन्दु हूं, ये कहने में मुझे कोई रंज नहीं है। लेकिन उसका हिन्दुत्व आकाश की तरह विशाल था; समंदर की तरह गहरा; गौरीशंकर की तरह ऊंचा; जो ऑलरेडी है। हमनें छोटा कर दिया! तो आखिर में है परमधर्म। सीता है तीनों धर्ममयी। सीता त्रिधर्ममयी है। 'सर्वाधार

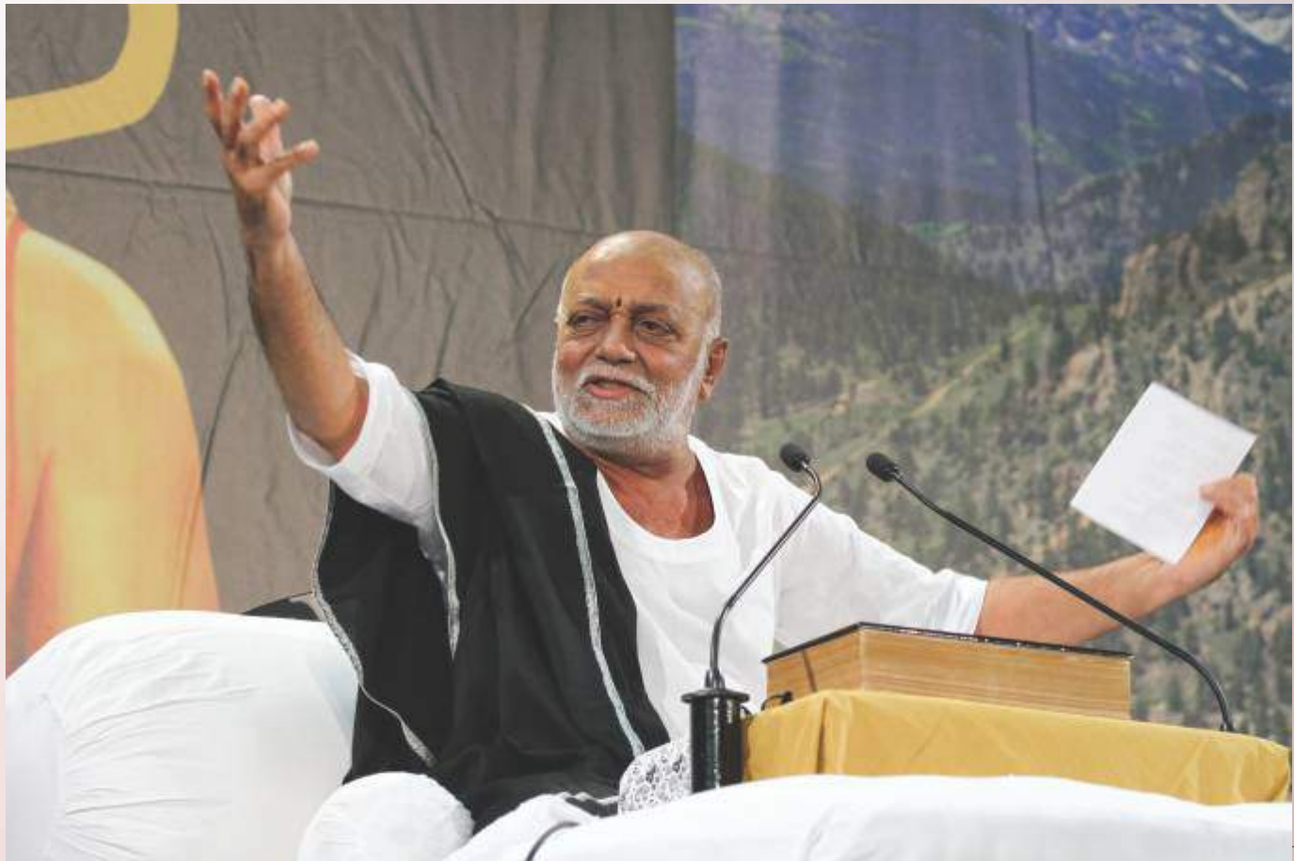

कार्यकारणमयी।' सीता भूमि की बेटी के रूप में सर्वाधार तो पृथ्वी है ही। हम सब को धारण किए हुए है। और उसकी बेटी के कारण, भूमिका के कारण हम सब की धारक है सीता। और 'कार्यकारणरूपा'; कार्य-कारण विश्व का बड़ा सिद्धांत है। यद्यपि ब्रह्मत्व को कार्य-कारण लागू नहीं होता। यद्यपि लीला क्षेत्र में वो भी किसी न किसी कारण से कार्य में उतरते हैं।

मैं कछु करब ललित नर लीला।

यहां कार्य-कारण सिद्धांत आता है। 'महालक्ष्मीदेवस्य'; तीन रूप। महालक्ष्मी, महाकाली, महासरस्वती। ये सीता है। 'कहिअत भिन्न न भिन्न' ये सीता का रूप है। देखने में भिन्न, अनुभव में अभिन्न, ये सीता का औपनिषदीय रूप है। 'चेतना चेतनात्मिका' चेतन और अचेतन, जड़-चेतनमय। इसलिए तुलसी ने कहा कि दुनिया जड़-चेतनमय है। लेकिन वो सीता राममय है इसीलिए मैं-

करऊं प्रनाम जोरी जुग पानी।
सीय राममय सब जग जानी।।

ये जड़-चेतनमयी चेतना का नाम सीता है। 'विभाग भेदाश्च हरिरूपा', जिसकी जैसी चाकरी, जिसकी जैसी पात्रता ऐसे- ऐसे विभाग में माँ पालती है। छोटे बच्चे को माँ दूध पिलाती है। थोड़ा बड़ा हो गया तो अपने हाथ से उसे कवंल खिलाती है। थोड़ा ओर बड़ा हुआ तो जबरदस्ती करती है कि एक कटोरा दूध ओर पी ले। सबकी पात्रता देखकर विभाग करके जगन्माता सीता पूरी सृष्टि का पालन करती है। उसका ये रूप भी बताया है। सीतातत्त्व में असुर, राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच, भूत शरीररूपा उसके शरीर में सब है। राक्षस भी उसकी संतान है; असुर भी उसकी संतान है। भूत-प्रेत भी उसकी संतान है। सब सृष्टि उन्हीं की है। ये जगन्माता है। ये समुद्र नररूप है; वरुण नररूप है। जल वरुण का रूप है। वो देवता है। इसलिए नर है। और तरंग वो नारी है।

तो ब्रह्म के चार लक्षण है बाप! हमारे यहां एक बहुत बड़ा सूत्रग्रंथ आया व्यास का जिसको कहते हैं 'ब्रह्मसूत्र।' और उसका पहला ही सूत्र है, 'अथाऽतो ब्रह्मजिज्ञासा।' तो ब्रह्म है क्या? उपनिषद का ऋषि उसका जवाब देता है, 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं आनन्दं एतत् वस्तु चतुष्टयं ब्रह्म लक्षणम्।' उपनिषद का वाक्य है ये। कई वेदान्तियों से भी आपने ये सुना होगा। चार ही लक्षण- 'सत्यं, ज्ञानं, अनन्तं, आनन्दम्।' सत्य ब्रह्म का लक्षण है। ज्ञान ब्रह्म का लक्षण। अनन्तता ब्रह्म का लक्षण। और तीनों का मेल 'आनन्दम्।' 'एतत् चतुष्टयं ब्रह्म लक्षणम्।' उपनिषद का वाक्य है, पुराना याद आ रहा है। लेकिन उसको मैं तीन रूप में देखता हूं। ब्रह्म मानी सत्य। ज्ञान का मेरा बिलकुल स्पष्ट अर्थ है, ज्ञान मानी प्रेम। मुझे कोई पूछे कि ज्ञान का मतलब क्या है तो मैं कहूं प्रेम। ज्ञान का स्पष्ट अर्थ मैं करता हूं प्रेम। जो विद्वान लोग होंगे उसको भी कठिन लगेगा कि ज्ञान का अर्थ प्रेम कैसे? है; मेरे लिए तो जो प्रेमी है वो ही ज्ञानी है। और सच्चा ज्ञानी प्रेमी होगा ही। ज्ञान मानी प्रेम। उपनिषद के सूत्रों को मैं इसी रूप में अनुभव करता हूं। सत्यं; सत्य। ज्ञानं; प्रेम। अनन्तं; करुणा अनन्त है। काम चलाउ करुणा नहीं होती। करुणा सिंधु। इसलिए सत्य-प्रेम-करुणा ये तीनों का मेल ही आनन्दम्; इसका ही नाम है आनन्दम्। क्या ज्ञान का अर्थ प्रेम नहीं हो सकता? प्रेम करना ही ज्ञान है। गंगासती कहां शास्त्र पढ़ी? परम में प्रेम था तो। आज उसके एक-एक पद पर वेदान्ती लोग चर्चा कर रहे हैं। ज्ञान का पर्याय है प्रेम। अथवा तो मैं यूं कहूं कि प्रेम का अर्थ है ज्ञान। प्रेम का भाषांतर है ज्ञान। प्रेम की व्याख्या है ज्ञान। तो ब्रह्म का लक्षण क्या हुआ? सत्य, प्रेम, करुणा। कोई ब्रह्म की बात आपके सामने कहे तो समझना कि चार बात होनी चाहिए। उसमें सत्य हो, ज्ञान हो; वो बात अनन्त हो, अशाश्वत न हो। और उसका मिलन आनन्द में परिणित हो। उसी को कहते हैं 'सच्चिदानंद ब्रह्म।' तो जानकी नारीरूप में ब्रह्म है। राम पुरुषरूप में ब्रह्म है। लेकिन है दोनों एक ही। इसलिए सीता के लिए 'सीतोपनिषद' से जो सूत्र आया उसको जो कुछ समझ में आया, आपकी सेवा में मैंने प्रस्तुत किया।

'मानस-सीता' के बारे में हमारा संवाद चल रहा हैं। तो बाप! अब जो थोड़ा समय है उसमें मैं आगे बढ़ूं। तो जिस तरह त्रिभुवन दादा मुझे बताते थे वो शैली बताऊं।

तेहि अवसर सीता तहं आई।

सीता आई। क्यों आई, गौरीपूजा के लिए आई। किसने भेजी? माँ सुनयना ने। माताओं का कर्तव्य है, बाप का नहीं कि अपनी बेटी को पार्वती पूजा के लिए ये भेजे। क्या हेतु है? 'गिरिजा पूजन जननि पठाई।' और अकेली नहीं भेजी। ये सब दादा का अर्थ है।

संग सखीं सब सुभग सयानीं।

साथ में कई सखियां है। ये राजकुमारी है सीता; जनक कन्या है। यद्यपि कहते हैं कि अष्टसखियां है। यहां गिनती नहीं लिखी है। संग सखी सब। सब का अर्थ है, कई है। लेकिन ये सखियां कैसी है? 'सुभग सयानी'; सुभग का अर्थ है सुंदर। सब स्त्रियां सुंदर हैं। सुंदरता बहुत जरूरी है। सुंदरता की निंदा मत करना। यहां तन और मन के सौंदर्य की बात है। यहां केवल शारीरिक सौंदर्य की बात ही नहीं है। सयानी मतलब बौद्धिक सौंदर्य की भी बात है। समझदार सखियां है। समझदारी बौद्धिक सौंदर्य है। सुभगता ये शारीरिक सौंदर्य है। सुभग का अर्थ है सुंदर। और सयाना; मेरी बहन-बेटियां, सुंदर सखियों के साथ रहना। और केलव शरीर सुंदर हो ऐसे नहीं, मन का सौंदर्य भी हो ऐसे के साथ भी रहना। कुछ लोगों का संग हमारे जीवन में बहुत परिवर्तन कर देता है। संग की महिमा है। गिरजा पूजा के लिए माँ सुनयना ने सब को भेजा है।

बाग में सीता आयी। जो गिरिजा का मंदिर है वहां एक सुंदर सरोवर है। सुंदर स्थान है। परिसर सुंदर है। दादा कहते हैं, बेटा, मंदिर का परिसर सुंदर होना चाहिए। अगल-बगल का विस्तार स्वच्छ होना चाहिए। और 'मन मोहा।' मंदिर एवुं होवुं जोईए के आपणुं मन एमां खेंचाय; मन आकर्षित हो जाये कि यहां जाये। सखियों के साथ जानकीजी ने सरोवर में स्नान किया। और 'गई मुदित मन गौरि निकेता।' पूजा करने जाओ तो प्रसन्न मन से जाओ; गीत गाते-गाते जाओ; मनोहर बानी में गाओ। सुंदर सरोवर में स्नान करके ऐसे सुंदर परिसरवाले मंदिर में जाओ। और 'पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा।' पूजा-पाठ खराब नहीं है। लेकिन सामग्री कम-ज्यादा हो उसकी चिंता नहीं। अनुराग अधिक होना चाहिए; प्रेम अधिक होना चाहिए। कम हो सामग्री लेकिन अनुराग अधिक होना चाहिए। ये सब दादा के अर्थ है। एक-एक शब्द सीधे-सीधे चलते थे। एक भी शब्द नहीं छोड़ते थे। 'पूजा किन्ही अधिक अनुरागा।' और फिर क्या किया?

निज अनुरूप सुभग बर मांगा।।

भारतीय कन्या देवी की उपासना करे, जया-पार्वती का व्रत करे तो वर के बारे में दो ही बात मांगती है। 'निज अनुरूप' मने योग्य छोकरो मळे। और सुभग; छोकरो सुंदर होवो जोईए। जानकी को खबर है कि मेरा विवाह मेरी प्रार्थना के आधीन कम है, मेरे पिता की प्रतिज्ञा के आधीन ज्यादा है। ई पाघडी मने शुं समजावती'ती! ये कुछ अर्थ मैं पहली बार बोल रहा हूं। जानकी गौरी माँ के पास निज अनुरूप वर मांगती है, क्योंकि मैं लाख वरदान मांगूं तो भी मेरा भविष्य पिता की प्रतिज्ञा पर आधारित है। क्योंकि प्रतिज्ञा है, धनुष तोड़े उसके साथ मुझे ब्याहना होगा। और धनुष तोड़नेवाला योग्य व्यक्ति न भी हो और सुंदर न हो। शायद सुंदर हो भी और योग्य न हो तो? तो कहा कि भले मेरा प्रारब्ध धनुष्य भंग के आधीन हो लेकिन माँ, ऐसा आदमी धनुष तोड़े जो मेरे योग्य हो। कोई आसुरी वृत्तिवाला, कोई कुबड़ा तोड़ देगा तो ज़िंदगी उसके साथ मुझे पसार करनी पड़ेगी। मेरे लायक हो। 'निज अनुरूप।' और सुंदर हो। और साहब! मिला भी। 'सहज सुंदर सांवरो।' प्रार्थना अधिक अनुराग से हो तो परिणाम दिये बिना रहती नहीं। जब ये घटना घट रही है मंदिर के गर्भगृह में ये आठ सखियों में से अथवा तो जितनी भी हो, इनमें से एक सखी सब सखियों का संग छोड़कर बगीचा देखने चली गई। क्या अर्थ है इसका? एक तो ये लापरवाही है। सब सखियां किशोरीजी के साथ गिरिजा पूजन के लिए जा रही है। सुनयना ने भेजी है। ये बगीचा देखने के लिए नहीं भेजी थी। लेकिन वो सखी लापरवाही कर गई, जिसका पूजा के साथ कोई लेना-देना नहीं है; मंदिर में दर्शन का कोई लेना-देना नहीं। औपचारिकता से ही स्नान कर लिया। गीत गा रही है। और सब सखियां जा रही है और वो दूसरी दिशा में मूड़ गई। तो क्यों मूड़ी? कारण तो सब बताने पड़ेंगे।

गई रही देखन फुलवाई।

ज्यादा लोग मंदिर में ईश्वर दर्शन करते हैं। लेकिन कोई-कोई विरले फूलवाई में ब्रह्म का दर्शन करते हैं। हम लोग

सीता सर्वधर्ममयी; और धर्म भी तलगाजरडी दृष्टि में तीन है। एक है स्वधर्म; एक है परधर्म और एक है परमधर्म। ये तीन धर्म है। एक स्वधर्म होता है जिसको 'गीता' में कहा कि मर जाना श्रेष्ठ है अपने स्वधर्म में। अपना जो धर्म है; जो भी आप मानते हो, राम हो, कृष्ण हो, देवी, दुर्गा और इस्लाम हो तो इस्लाम। लेकिन दूसरे धर्म की उपेक्षा न करो। लेकिन कई लोगों को हिन्दु धर्म की बात आती है तो बस निंदा ही करनी है! हिन्दुधर्म ने बिगाड़ा क्या है तुम्हारा? राम की बात आती है तो निंदा! रामकथा की बात आती है तो निंदा! दूसरा है परधर्म। धर्म का एक अर्थ होता है स्वभाव। दूसरे के जैसा मेरा स्वभाव नहीं है उसी में मत जाना। आखिर में है परमधर्म। सीता है तीनों धर्ममयी। सीता त्रिधर्ममयी है।

मंदिरों में ही ब्रह्म को देखते हैं। ये सयानी सखी कहती है कि मंदिर का महत्व है। लेकिन बगीचे में फूल खिले हैं। 'चातक कोकिल किर चकोर।' पक्षियों की आवाज़ बताई है तुलसी ने यहां। ये आवाज़ सुन रही है। मंदिर की चार दीवारों में ही परमात्मा नहीं है; बाग में भी है। ये कितना बड़ा विशाल विचार आया है! अब वो पंक्ति जो हमने ली है-

'तेहिं दोउ बंधु बिलोके जाई।'

ये सखियां बिलकुल फ्री, स्वतंत्र लगती है। इधर गई; लता मंडप में गई। बाग में घूमती हुई ये सखी। कभी-कभी पूजा-पाठ करनेवालों को ये देर से मिलते हैं। लेकिन ऐसे विमुक्त मन दशा जिसकी है उसको कहीं घूमने से भी मिल जाता है। उसने दोनों भाईयों को देख लिया। और पहली नज़र का प्रेम।

प्रेम बिबस सीता पहिं आई।

पहली दृष्टि से प्रेम विवश। अब प्रेम के अतिरेक में विवेक देखो। जब आदमी किसी को देख लेता है और प्रेम विवश हो जाता है तो फिर उसे दिशा का भान नहीं रहता है। ये जनक ज्ञानी पुरुष प्रजा का राजा है। और उसके प्रदेश की ये सखी है, ये विवेकी है। इसलिए प्रेम विवशता में दो ही बात होती है। एक तो ये कि दौड़कर ये राम को छूने की कोशिश करे। प्रेम विवशता क्या नहीं कराती? निकट जाने की कोशिश करे। पूछने की कोशिश करे। किसी न किसी बहाने स्पर्श करने की कोशिश करे। उनसे बात करने की कोशिश करे। लेकिन दिशा चुकी। अनजान के पास ऐसे प्रेम होते भी जल्दी दौड़ के मत जाना। सीता तो मेरी जान पहचान है। किशोरीजी विश्व की आत्मा है। सीता की ओर दौड़ गई। और जानकी, सखियां ये सब बोले कि क्या हो गया है इसको? डांटना चाहिए ना इसको? पूजा करने आई थी। कहां भटक गई? इस सखी की प्रेम बिबस दशा जब सब सखियों ने देखी तो किसीने शिकायत नहीं की; किसी ने डांटा नहीं। उसकी दशा देखकर अन्य सखियां के रोम-रोम पुलकित होने लगे।

कहु कारनु निज हरष कर पूछहिं सब मृदु बैन।।

किसी से कुछ जानकारी लेनी हो तो मृदु बानी में पूछो; कड़क भाषा में न पूछो। हर्ष का कारण क्या है? कभी-कभी पूजा अधिक अनुराग से करों तो फल मंदिर के बाहर मिल जाता है। यहां पूजा की और यहां सद्गुरु मिल गया। जो सखी मिल गई वो राम को देख चुकी है। बुद्धपुरुष ऐसा होना चाहिए जिसने हरि का अनुभव किया है। वो ही हमें कुछ कह सकता है। अनुराग से पूजा; उसकी प्राप्ति बुद्धपुरुष का मिलन है। और पूज्य से प्रियतम की यात्रा। राम तक सीता जाएगी। एक आवाज़ में सब पूछती है, तेरे हर्ष का कारण क्या है? तू इतनी पुलकित क्यों है? तेरी आंखो में इतने भाव के आंसू क्यों हुआ? तब बड़ी मुश्किल से भावदशा से बाहर आती है और वो कहती है-

देखन बागु कुअंर दुइ आए।
बय किसोर सब भांति सुहाए।

सीते, दो राजकुमार बाग देखने आये हैं। नाम नहीं जानती कि ये राम और लक्ष्मण है। नाम का पता नहीं। प्रेम नाम-गाम नहीं पूछता। नेटवर्क गोठवीने प्रेम न थाय! इसलिए नाम बोली नहीं। राजकुमार है। और लगता है कि बाग देखने आये हैं। किशोरीजी संकेत करती है कि 'बय किशोर' उसकी अवस्था भी किशोर अवस्था है। ओर मैं क्या कहूं, मैं इतनी डूब गई दर्शन में, भावदशा में मैं इतना ही कह सकूंगी कि सब प्रकार से ये सुंदर है। 'सब भांति सुहाए।' सीते के दिल में उत्कंठा उत्पन्न हुई। सब मर्यादा है। सखी में इतना विवेक है तो ये तो सखी शिरोमणी है, जनक तनया है। मन में उत्कंठा है। ललक जागी इन राजकुमारों को देखने की। बोलती नहीं, पूछती नहीं। लेकिन अपने आप को सीयाजु ने ऐसे संभाला कि 'प्रीति पुरातन लखइ न कोई।' जो राजकुमार की बात हो रही है उसके साथ मेरी बड़ी पुरातन प्रीति है। लेकिन कोई नहीं जानता। 'सुमिरि सीय नारद बचन।' अब आप देखिये, कवि कैसा चित्र प्रस्तुत करता है?-

चकित बिलोकति सकल दिसि जनु सिसु मृगी समीत।

हिरनी मर चुकी है अथवा कहीं भाग गई है और उसकी छोटी-सी हिरन अकेली जंगल में फंस गई है। और कोई शिकारी, कोई आखेटी, कोई बहेलियां, ऐसे पशुओं को पकड़नेवाला आ जाये, उसके पगरव सुने; माँ नहीं है, कोई बड़ा साथ में नहीं है। और मृग की एक बच्ची जैसे इधर-उधर देखती है, जैसे मृगली की बच्ची सभीत हो वैसे निर्दोष जानकी, उसको देखना है कि कहां है, कहां है, कहां है? लेकिन मर्यादा-विवेक; तो मृग की बच्ची जैसे देखती है ऐसे 'चकित बिलोकति सकल दिसि जनु सिसु मृगी सभीत।' यही मंज़र दिल में रखिएगा। आगे का मंज़र दादा की अदा से कल पेश करूंगा।

'मानस' के सात सोपान में सीता के सात रूप है

भगवद्कृपा से हम और आप नव दिवसीय रामकथा में माँ सीता के पात्र को केन्द्र में रखते हुए भगवद्चर्चा कर रहे हैं। कुछ आगे बढ़ें। बहुत-सी जिज्ञासाएं है कि सीता के बारे में इतना कहा जाता है, मूल तत्त्व सीता क्या है? सीता ही मूल तत्त्व है। लेकिन एक ही परमतत्त्व को ऋषियों की विवेक बुद्धि ने अपने अनुभवों से प्रस्तुत किया है। जैसे एक व्यक्ति कभी राम बनता है, कभी कृष्ण बनता है, कभी शिव बनता है रंगमंच पर। हम अपनी आस्था के अनुसार उसको बिलग-बिलग स्वरूप में देखते हैं। शास्त्रकारों ने कहा है, सीता ही सती है। सीता ही दुर्गा है। यहां तक कहा गया कि सीता ही शंभु है। इसको त्रिनेत्र है। जिसके भाल में चंद्र है। उपर-उपर देखने से एक असमंजसता पैदा होती है। मूल में न जाएं तो कभी-कभी अपनी आस्था को ठेस भी पहुंच सकती है कि यह कैसे हो सकता है? लेकिन मूल में जो बिलग-बिलग धर्मवाले यह कहते हैं कि हमारे यहां एक ही अल्लाह है, एक ही ईश्वर है। आपके यहां बहुत राम, कृष्ण, शिव, फलां, फलां, फलां। उसको खबर नहीं है ऐसा तो मैं नहीं कह सकता लेकिन शायद समय अभाव से या समझ अभाव से यह मूल तक नहीं पहुंचे। हमारे यहां एक ही ईश्वर की वास्तविकता को सिद्ध करने के लिए ऋषियों ने प्रयत्न किया है। इसलिए उसी ईश्वर को 'एकम् सद्विप्रा' कहा।

शास्त्रकारों ने सीता के बारे में जो कहा है उसका एक मंत्र मैं आपके सामने पढ़ना चाहता हूं। उसमें माँ सीता को भिन्न-भिन्न स्वरूप में प्रगट किया है।

आह्लादरूपिणीं सिद्धिं शिवां शिवकरीं सती
नमामि विश्व जननि रामचंद्रदृष्टि वल्लभाम् सीतां...

तो बाप! यहां सीता को, सीता तत्त्व को इतने रूपों में देखा। एक शास्त्रकार ने एक तरफ से देखकर कह दिया, आह्लादिनी, आह्लादरूपिणी। वो कभी विषाद नहीं देती; अपवाद सह लेती है और प्रसाद प्रदान करती है। यह आह्लादिनी है। मैंने तो वहां तक कहा, बेटा, बाप, पुत्र, पुत्री, पत्नी, माँ, बाप, बहू, सास इन पात्रों से जितना समय आपको आह्लाद मिले तो समझना उतने समय के लिए वो सीता है। चाहे पुरुष क्यों न हो? सीता केवल स्त्री के रूप में ही हो, भवानी केवल स्त्री के रूप में ही हो, तुलसी कभी ऐसा नहीं कहते।

दुर्गा कोटि अमित मर्दन।

राम करोड़ों-करोड़ों दुर्गा है, ऐसा तुलसी ने लिख दिया। आह्लाद देनेवाला उस समय जितना भी आह्लाद दे और जितने समय हम आह्लाद रिसीव कर सकते हैं उतना समय वो सीता है। मैं केवल व्यक्ति को ही केन्द्र में न रखूं। कोई कविता, कोई पंक्ति, कोई घटना, कोई लेख, कोई सूर, कोई लय, कोई राग, कोई वाद्य, कोई मौन, कोई मुखरता, कोई श्रवण जो हमें आह्लाद दे। इन दिनों में यदि मुझे बोलने में आह्लाद आता है, आपको सुनने में आह्लाद आता है तो इस होल में सीता घूम रही है। यह सीतातत्त्व है। एक बच्चा आह्लाद दे तो बच्चा सीता है, चाहे उसका नाम शिवम् क्यों न हो? वो शिवानी ही है। चाहे उसका नाम दुर्गाशंकर क्यों न हो? वो दुर्गा ही है। चाहे उसका नाम कपिल क्यों न हो? कपिला ही है। इतनी व्यापक दृष्टि से शास्त्र को देखने के लिए उत्सुक हो वो ही मुझे लगता है शास्त्र के रहस्यों को पा सकता है।

यह 'रामचरितमानस' केवल 'रामचरितमानस' नहीं है, यह सीता-राम रहस्योपनिषद है। इस सीता-राम के रहस्यों गुरुकृपा से खुलता है, उसको उपनिषद समझो। इसको उपनिषद समझने से उपनिषद की महिमा घटेगी नहीं। 'रामचरितमानस' एक ऐसा विशेष है जिसमें सीता भी है, जिसमें सती भी है, जिसमें दुर्गा भी है, जिसमें भवानी भी है, जिसमें पार्वती भी है, जिसमें किशोरी भी है, रामवल्लभा भी है। यह विशेष है।

कल हम जो चर्चा करते थे वासना प्रेरित आकर्षण, उपासना प्रेरित आकर्षण और नियति प्रेरित आकर्षण। मैं आपको बता रहा हूं, मेरे दादाजी ने जो मुझे प्रसाद दिया है वो मेरी स्मृति में उभर रहा है। आप कल्पना करो। भगवान राम सीता को देखकर जो दो-टूक बोल पड़े। यह भी खयाल नहीं किया कि लखन खड़ा है; उसने यह भी खयाल नहीं किया कि

सीता के साथ इतनी सखियां है। उसने यह भी खयाल नहीं किया कि यहां मालीगन है; बाग के रक्षक भी है। प्रेम जब विशुद्ध होता है तब अगल-बगल में देखने की उसको फुरसत ही नहीं होती। कौन अगल-बगल में है? कौन ऊंचा-नीचा है? कौन आगे है, पीछे है? यह जो देखता है वो प्यार नहीं कर सकता, वो व्यापार करता है। तो कई दृष्टि से मैं यह प्रसंग को देखता हूं तो नये-नये मार्ग खुलते हैं। तो नियम तो ऐसा है कि सखियों को पीछे रहना चाहिए। सीता को सखी प्रिय लगी जो राम को देख चुकी। कम से कम साथ चलते लेकिन उसको अग्र की। वो बहुत प्रिय बन गई। क्योंकि इस सखी 'देखन बाग कुंअर दुइ आए।' यह बात जो छेड़ देती है उसी के कारण सीता को अपनी ये पुरातन प्रीति याद आई।

युवान भाई-बहन, मुझे समझने की कोशिश करना। गलत अर्थ करो तो जिम्मेवारी आपकी। बाकी आप किसी के प्रति वासना प्रेरित आकर्षित हो जाओ, उपासना प्रेरित आकर्षित हो जाओ या तो नियति प्रेरित हो; कोई काल, कोई जनम-जनम के यात्रा की संगति हो और किसी से ऐसा दिल लग जाये उसी समय आप निश्छल रहोगे तो जीतोगे। उसी समय छल किया तो गये। मेरी सीख समझना। मैं सीख देता नहीं फिर भी 'सीख' शब्द का प्रयोग कर रहा हूं। गांठ बांधना बच्चों; किसी भी आकर्षण में हो तो ध्यान रखो, प्रेम बुरी चीज नहीं है; प्रेम में छल बुरी चीज है। हम एक-दूसरे को कितने छलते हैं! 'रामायण' का 'सुन्दरकांड' का पाठ बाद में करना, पहले कभी अपने दिल का पाठ करना। कितना अपने आपको छले जाते हैं! शांति कब पाएंगे? सुख तो मिल जाएगा। सुख भी कहां मिलता है? सुख के साधन मिल जाते हैं। कलर टी.वी. आ गया; अद्यतन मोबाइल हाथ में आ गया। सुख कहां है? शांति तो कोसों दूर है। आनंद तो ब्रह्म का चौथा लक्षण है। छले जाते हैं। एक पति पत्नी को छलता है; पत्नी अपने पति को छलती है। भाई भाई को, बाप बेटे को छलता है। राम स्पष्ट कहते हैं-

मोहि कपट छल छिद्र न भावा।

तू कैसा है? पढ़ा-लिखा है कि नहीं, तू ऊच्च कुल में जन्मा कि नहीं, मैं कुछ नहीं देखता। मुझे एक ही चीज नहीं भाती। मुझे कपट अच्छा नहीं लगता।

एक समय होने के बाद 'रामायण' को पढ़ो ही, दिल को भी पढ़ो। एक-दूसरे से भाव जगे तो जरूर आकर्षित हो। मैं आपसे दादा की बताई हुई बात कहूं कि राम ने लक्ष्मण के सामने यदि यह बात नहीं बताई होती कि मुझे सीता में आकर्षण हो रहा है। बिलकुल राम को मानवीय ले लीजिए। तुम्हारा ईश्वर है वो मूर्ति राम की आप अपने मंदिर में रख दीजिए। राम मानी हमारे जैसा एक आदमी है। राम की उम्र उस समय सोलह साल की है। और यह सभी अंकुर फूटना स्वाभाविक है। तुलसी ने तो स्पष्ट किया है, 'लिन्ह मनुज अवतार।' वो मानवरूप में आया है। कितना ही आदमी श्रेष्ठ क्यों न हो, प्रेम विवशता अगल-बगल में देखने नहीं देती। सबके अनुभव है। लेकिन यह निश्छलता जीत जाती है। यह निश्छलता जानकी की जयमाला अपने कंठ में स्थिर कर देती है। इस 'मानस' की गहराई को गुरुकृपा से थोड़ा सोचिए। राम ने कह दिया, 'तात जनक तनया यह सोई।' यह जनक की बेटी है जिसके कारण जनक का धनुष्ययज्ञ हो रहा है। राम बोल रहे हैं राम! और वहां तक, जिसकी सुंदरता देखकर लक्ष्मण, मेरा मन क्षोभित हो गया। मैं खिंचा जा रहा हूं। राम के बोल है। राम परम विवेकी पुरुष है। नर पुंगव है लेकिन राम कवि नहीं है। यहां राम कवि बन गये हैं। प्रेम किसी को भी कवि बना देता है। राम ने अपने छोटे भाई के सामने निश्छलता से सब कुछ कह दिया। वहां तक कह दिया कि रघुवंश की मर्यादा को जानता हूं, हमारा मन कुपंथ में नहीं जाता।

दूसरी बात, फूल लेकर राम-लक्ष्मण सीता का दर्शन करके लौट जाते हैं वहां बड़ी आश्चर्य की बात मुझे यह लगती है कि इतना-इतना हो रहा है, लक्ष्मणजी को कोई बात छूती ही नहीं है! राम ने ही सुना! लेकिन कुछ बातें जो उस भूमिका पर पहुंचा वही सुन पाता है। एक साथ सब बैठे हो, सब सुन रहे हो ऐसी भ्रांति में मत रहना। क्या मेरी माँ जानकी का पायल पक्षपाती था? लक्ष्मणजी ने भी सुनी होगी। लक्ष्मणजी को कुछ है ही नहीं! कौन आया, कौन गया? कुछ लेना-देना ही नहीं! यह तो रामजी उसको इस घटना में उलझा रहे हैं। एक ही घटना का दो आदमियों पर बिलग-बिलग प्रभाव पड़ता है। यहां अंतःकरण की प्रवृत्ति क्या कहती है, उसके मुताबित प्रभाव पड़ता है। लक्ष्मण क्यों ऐसे उदासीन है? वो भी सोलह साल के हैं। जब तुम किसी को अपना मान लेते हो, अगल-बगल में जो होता है उसको देखते ही नहीं। सीता आए, जो आए। मेरा बाप राम मेरे केन्द्र में है। जब तुम्हारा वरण हो जाता है।

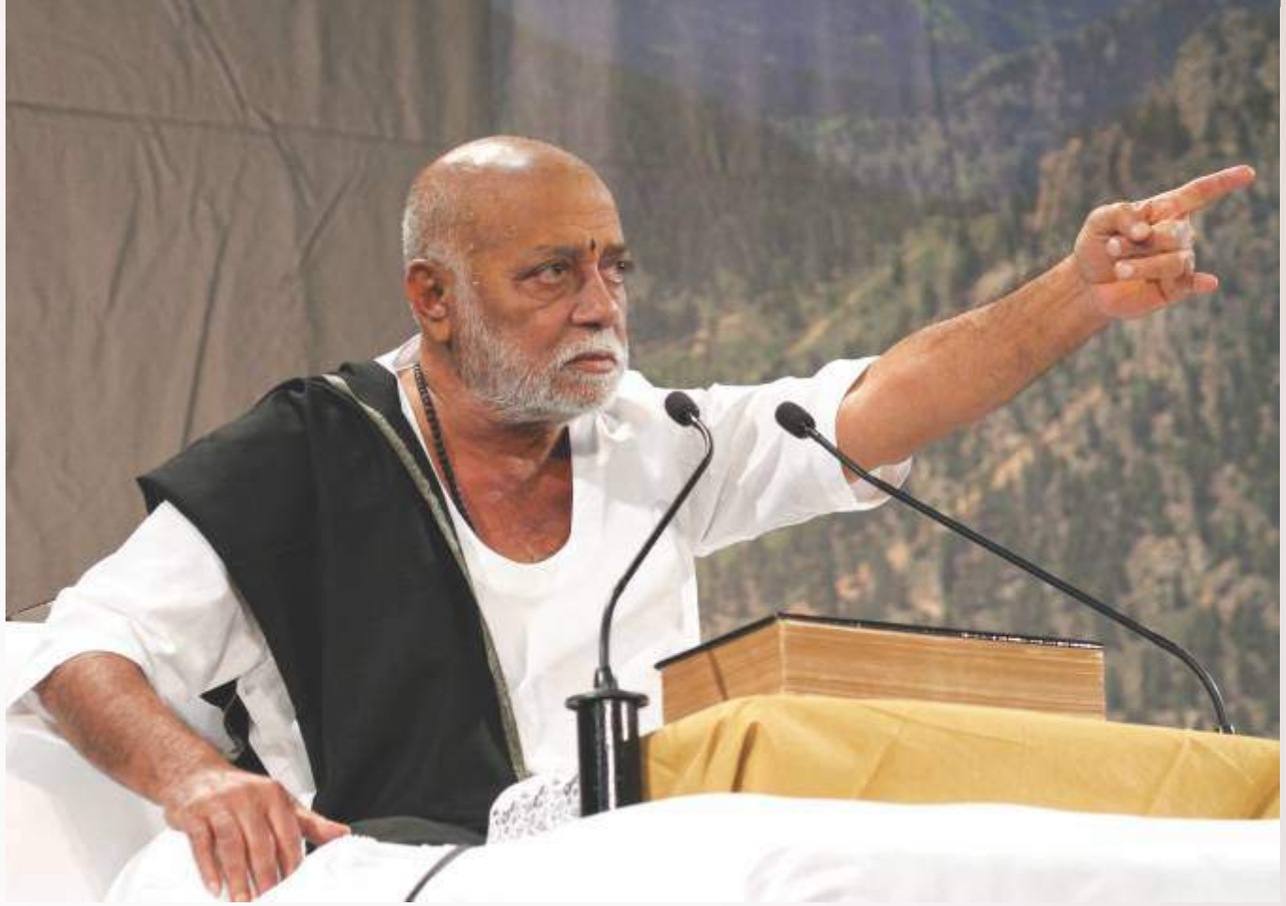

मैं कई श्रोताओं को देखता हूं जिसने व्यासपीठ का वरण कर लिया वो व्यासपीठ को छोड़ के कहीं जाते ही नहीं। और कई भटक रहे हैं प्रसिद्धि के लिए, फोटो खिंचवाने के लिए! उसका भटकाव, उसकी व्यभिचारिणी भक्ति पर मुझे दया आती है! हमारे भटकाव यात्रा में देरी कर सकता है, ओर कुछ नहीं हो सकता। लक्ष्मण का सर्वस्व रघुनाथ है। लक्ष्मण को कोई नगर नहीं देखना था। यह तो राम को अपने दर्शन से मिथिला को धन्य करना था इसलिए ठाकुर ने बहाना बनाया। कोई लेना-देना नहीं लक्ष्मणजी को, सामने से रघुनाथजी ने उसको इस घटना में उलझाया और निश्छल कह दिया। दोनों भाई फूल लेने के बाद सीताजी को देखकर समर्पित हो जाते हैं। सीताजी राम को हृदय में रखती है; राम ने भी अपने हृदय के केनवास पर लिख दिया। प्रेम क्या है, एक-दूसरे को हृदय में रखते हैं। आज क्या है, एक-दूसरे को मुठ्ठी में रखते हैं! मुठ्ठी में रखना बंद करो, यदि प्रेम है तो एक दूसरे को हृदय में रखो। 'रामायण' यह सिखाती है। और वही राम-लक्ष्मण गुरु के पास लौटते हैं तो निश्छल भाव से कह देते हैं; यह देर हुई, यह हुआ। यही निश्छल भाव को देखकर गुरु आशीर्वाद देते हैं-

सुफल मनोरथ होउ तुम्हारे।

तुम्हारे दोनों का मनोरथ क्या है? लक्ष्मण का मनोरथ है, मेरे राम के मन में जो इच्छा है वो पूरी हो जाए। क्योंकि समझ गया कि मेरा ठाकुर जानकी में डूबे हैं। और राम का क्या मनोरथ है? मुझे सीता प्राप्त हो बस। विश्वामित्र ने कहा, तुम्हारे दोनों के मनोरथ पूर्ण हो।

दादा की अब बात कि दोनों के सामने निश्छल न होते तो 'रामायण' किस रूप में लिखते? राम ने लक्ष्मणजी को इतने निश्छलता से न बताया होता तो जनक अविवेकी बात करते हैं उसी समय लक्ष्मण किसी को पूछने की राह नहीं देखते। सीधे धनुष तोड़ डालते। लेकिन उसको पता है। गुरु के पास निश्छल रहो, अपने साथी के पास निश्छल रहो तो जयमाला तुम्हारे गले में आएगी। जब हमारी यात्रा सही होती है तब अस्तित्व मदद करता है।

सीता ही सती है। सीता ही शिवकारी है। सीता

ही आह्लादिनी है। यह सब एक ही तत्त्व है लेकिन बिलग भाव देखने के कारण ऐसी विशाल दृष्टि बुद्धपुरुष के पास होती है उसको आगे जाकर यह करके जाना जाता है। इसलिए हमारी परंपरा में किसी मार्गदर्शक की जरूरत है। आप पादुका रखो, पादुका को छूओ यह अच्छी बात है। लेकिन केवल पादुका से भी कुछ नहीं बनेगा। कुछ बातें मुझे बेपरदा करनी चाहिए। मैं सावधान कर रहा हूं। आपकी भक्ति, आपकी श्रद्धा को मैं तोड़ नहीं रहा हूं। लेकिन सावधान कर रहा हूं। श्रद्धा तो एक ऐसी आंख है जिसको कोई लेन्स नहीं लगाने पड़ते। श्रद्धा एक ऐसी आंख है आरपार। इसलिए मैं आपकी श्रद्धा को प्रणाम करूं लेकिन अंधश्रद्धा को छोड़ो। श्रद्धा ठीक है लेकिन स्पर्धा नहीं होनी चाहिए। अंधश्रद्धा से बाहर आओ। इन्सान को इन्सान समझो। इन्सान को इन्सान छोड़कर दूसरा कुछ कहना वो इन्सान का अपमान है। श्रद्धा मेरे लिए एक बहुत बड़ा विशुद्ध विज्ञान है। और विज्ञान प्रयोग से सिद्ध करने की बात करता है, चमत्कारों से नहीं। सत्य अपने आप प्रस्थापित होता है। वाणी सबसे बड़ा प्रसाद है।

मेरे कहने का मतलब बाप! कोई बुद्धपुरुष चाहिए जो गहन से गहन रहस्यों को हमारे पास खोले। सीता वर्णन में कभी यह है, कभी यह है। विशाल अर्थ में उनका वर्णन मिला है, लेकिन उसको समझने के लिए मुझको और आपको किसी के शरण में जाना पड़ेगा वरना उलझ जाएंगे। तो एक ही सीतातत्त्व कई एंगल से देखने के लिए मुझे और आपको ऐसे 'रामचरित' सद्गुरु के शरण में जाना होगा, उसको आगे करना होगा, जो देखकर आया है; पहचान कर आया है।

एक सीतातत्त्व; ऋषि इतने रूप में प्रस्तुत करता है। और सीता है आह्लादिनी। जिससे आपको आह्लाद प्राप्त हो इतना समय वो आपके लिए भगवती सीता है। चाहे सूत्र, चाहे कविता, चाहे मौन, चाहे मुखरता। दूसरा सूत्र है सिद्धिम्; सिद्धि सीता है। तो ऋषि सीता को देखते हैं आह्लादिनी। कभी सीता को देखते हैं सिद्धिं। भरद्वाज ऋषि को विचार ही आया तो रिद्धि-सिद्धि दौड़ आई। और बारातियों की व्यवस्था करने में जनकपुर में 'सीय महिमा रघुनाथ जानी।' राम ने जान लिया कि यह सीता के कारण हो रहा है। स्वयं सीता सिद्धि है; शिवा है। अब शिवा तो पार्वती है लेकिन यहां पार्वती और सीता में कोई भेद नहीं है। फिर कहते हैं शिवकरीं। शिव करनेवाला तो शंकर ही जाना जाता है, लेकिन शिवकरीं का अर्थ है कल्याण करनेवाली; सबका सर्वश्रेयस्करी। सती; 'मानस' में दो रूप, सती शिव की पत्नी और सीता राम की पत्नी। अब शांति से सोचो। सती बौद्धिक रही; शंकर की बात मानी नहीं लेकिन उस सती को सीता का ही रूप क्यों लेना पड़ा? क्योंकि दोनों एक है।

पुनि पुनि हृदयँ बिचारु करि धरि सीता कर रूप।

सीता और सती का भेद तुलसी ने यहां बिलकुल तोड़ डाला। वो ही सती है। 'जनकसुता जग जननि जानकी।' पार्वती को भी जगतजननी कहते हैं, सीता को भी जगतजननी कहते हैं। तत्त्वतः एक ही है। 'रामचंद्रस्य वल्लभाम्।' जो 'नतोऽहं रामवल्लभाम्' जो मंगलाचरण में बोल लेते हैं। 'भजामि सततम्'; प्रसन्नता के साथ ऋषि कहता है, मैं सीता के इतने रूप को भजता हूं। सीता का एक स्तवन है। स्तवन में सीता के बाहर नाम लिखे हैं-

मैथिली जानकी सीता वैदेही जनकात्मजा।
कृपापीयूषजलधिः प्रियार्हा रामवल्लभा।।
सुनयनासुता, वीर्यशुल्का अयोनी रसोद्भवा।
द्वादशैतानि नामानि वांछितार्थप्रदानि हि।।

सीता का यह द्वादश नाम का जो पठन करे उसको मनवांछित फल मिलता है। तो कई रूप में सीता का दर्शन करते हैं।

तो बाग देखने के लिए दो कुंअर आये हैं। नाम नहीं पता है। प्रेम कहां नाम पूछता है? और प्रेम की विवशता तो सब कुछ भुला देती है। तो नाम नहीं बता पाए। किशोर उम्र है। सब प्रकार से सुंदर है। जरा तो बोलो, कैसे है यह जिसको देखकर तू प्रेमबिबश हो गई!

स्याम गौर किमि कहौं बखानी।
गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।

एक सांवरा है और एक गोरा राजकुमार है। तो जरा बोल तो सही, इन्द्रियग्राह्य यह रूप नहीं है? कैसे बखाने? उपनिषद कहते हैं, आंख उसको ग्रहण नहीं कर सकती। 'न कर्मणा।' कर्म उसको ग्रहण नहीं कर सकता। 'न तपसा।' तप उसको ग्रहण नहीं कर सकता। तो? 'ज्ञानेन।' जागृति से उसको पकड़ा जा सकता है। तो ज्ञान कब मिलता है? जब साधक का अंतःकरण शुद्ध होता है।

सखी बोल नहीं पा रही है। गहरा अनुभव मुखर नहीं हो सकता; छोटे-छोटे अनुभव बहुत मुखर हो जाते हैं। जिसने पूरा जाना है वो कुछ नहीं बोलता। कई लोग सोचते

हैं कि बहुत बोले तो वाणी सिद्ध हो जाएगी। ये गलत है। सिद्ध वाणी ही मौन से निकलती है। गहन मौन से सिद्ध वाणी का जन्म होता है। अनुभव का प्रदेश, उसका एड्रेस ही बिलग होता है। ये घराना ही दूसरा है। तो अनुभूति का एड्रेस बिलग होता है। न वाणी कह सकती हैं; केवल चर्मचक्षु ही उसे देख सकते हैं।'गिरा अनयन नयन बिनु बानी।' सखी अनुभव के साथ महा मुश्किल से बोली है। सीता को अपनी पुरातन प्रीति याद आती है लेकिन वो कैसे कहे कि जल्दी मुझे उस तत्त्व के पास ले जाओ। इतने में एक सखी बोली, जरूर देखना चाहिए, ये देखने योग्य है, चलो। सीताजी खुश हो गई कि मैं चाहती हूं वो मेरी सखियां कर सकती है। सखी कौन? जो अपनी स्वामिनी की बात समझकर उसको राजी करने के लिए प्रस्ताव रखे। उसको कहते हैं सयानी सखी। तो इस तरह पुष्पवाटिका में जानकी प्रस्थान करती है रामदर्शन के लिए।

'मानस' के सात सोपान में सीता के सात रूप है ऐसा तलगाजरडा को दिखता है। 'बालकांड' में सीताजी का किशोरीरूप है। शादी हुई है, लेकिन किशोरी अवस्था में हुई है। सात साल की माँ जानकी है जब शादी हुई। राम और जानकी की उम्र का अंतर नव साल का है। राम सोलह साल के थे और माँ जानकी नव साल की थी। वनवास हुआ तब जानकी सोलह साल की और राघव पचीस साल के थे। इसलिए मेरी तलगाजरडी दृष्टि पूरे 'बालकांड' में सीताजी का किशोरीरूप देखती है। सीता का किशोरीरूप 'बालकांड' का केन्द्रबिंदु है।

'अयोध्याकांड' में सीता का कुलवधू का रूप है। कुलवधू को कैसे रहना चाहिए, एक ब्याही हुई स्त्री उसके आदर्श क्या होने चाहिए, ये 'अयोध्याकांड' में सीता ने दिखाया। राम ने कहा, जानकी, आप घर रहो; वनवास मुझे है, आपको नहीं। तो कहे, महाराज, आप जो कहोगे वो मुझे करना होगा लेकिन कुछ मेरी बातें भी सुनो। सूर्य को छोड़कर उसकी प्रभा बिलग हो सकती है? चंद्र को छोड़कर चंद्रिका कभी जा सकती है? ठाकुर, जीव के बिना देह की कोई कीमत नहीं; पानी के बिना नदी की कोई कीमत नहीं। वैसे ही नाथ, पुरुष के बिना नारी का क्या अर्थ? मैं आपकी छाया हूं। छाया पुरुष को छोड़कर कहां रह सकती है? एक कुलवधू, सच्ची पतिव्रता जानकी, जिसको तुलसी 'बालकांड' में सती शिरोमणि कहते हैं, वो सीता समस्त कुलवधू का आदर्श निर्वहन 'अयोध्याकांड' में करती है। राम के पीछे चलना; कितनी भी विपत्ति आई उसमें राम के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना। कहां रामभवन, कहां 'सूरसदन' भी लज्जित हो जाए ऐसा अवध का कनक भवन और इससे भी समृद्ध कहो तो अपने बाप का घर ये सब छोड़कर एक पर्णकुटि में पत्नी होने के कारण रामवल्लभा सीता अपने पति के साथ रहती है। वहां मुझे एक ब्याही हुई स्त्री सीता 'अयोध्याकांड' के केन्द्र में दिखती है।

'अरण्यकांड' की सीता तपस्विनी सीता है। जिसको पंचाग्नि तपनी पड़े वो तपस्वी है। जानकी को राम ने अग्नि में समाया।

तुम्ह पावक महुं करहु निवासा।
जौं लगि करौं निसाचर नासा।।
निज प्रतिबंब राखि तहं सीता।
तैसइ सील रूप सुबिनीता।।

ये तपस्विनीरूप सीता का है, वो 'अरण्यकांड' का केन्द्रबिंदु है।

'किष्किन्धाकांड' की सीता खोजी गई सीता का रूप है। इसके केन्द्र में सीता खोज का अभियान चला है। संपाति कहता है, सीता लंका में है, जिसमें सामर्थ्य होगा वो जा सकता है। जिसकी खोज करनी है वो सीता का रूप 'किष्किन्धाकांड' के केन्द्र में है।

'सुन्दरकांड' की सीता मेरी समझ में विरहिणी सीता है। तड़पती हुई है, विरहाग्नि में जलती हुई सीता है।

बिरह अगिनि तनु तुल समीरा।
स्वास जरइ छन माहिं सरीरा।।
देखी परम बिरहाकुल सीता।
सो छन कपिहि कलप सम बीता।।

तलगाजरडी दृष्टिकोण के मुताबिक 'सुन्दरकांड' की सीता विरहिणी सीता है। सूख गई है सीता।

'लंकाकांड' की सीता है स्वर्णिम सीता, जो अग्निपरीक्षा से कनक पंकज की कली बनकर बाहर आई। शुद्ध-बुद्ध सीता अपने चरित्र की परीक्षा देकर बाहर निकली है अद्भुत रूप में। उसी प्रसंग को 'रामाज्ञा-प्रश्न' में मंगलमय अग्नि कहा है। तो जानकी की अग्निपरीक्षा हुई 'लंकाकांड' में जिसको मेरी व्यासपीठ स्वर्णिम सीता कहती है, जो 'लंकाकांड' के केन्द्र में है; उसके लिए 'रामाज्ञा-प्रश्न' जो तुलसी की छोटी-सी रचना है उसमें है-

सीता सपथ प्रसंग सुभ...

सीता ने जब शपथ ली कि मन, वचन, कर्म से यदि मैं पवित्र हूं; राममय हूं तो मेरे लिए ये अग्नि शीतल हो जाए; मन, वचन, कर्म से मेरे सपने में भी दूसरा विचार न हो तो

ये अग्नि शीतल हो जाए। तुलसी कहते हैं, ये शुभ, मंगलमय प्रसंग है। मैंने कल कहा था, किसी भी बुद्धपुरुष की अग्निकसौटी होती है। और वो अग्निकसौटी से जब कुन्दन की तरह निकलता है तब लोगों को बहुत बड़ी प्रेरणा मिलती है। इसलिए सीता की अग्निकसौटी को गोस्वामीजी शुभ कहते हैं।

सीता सपथ प्रसंग सुभ सीतल भयउ कृसानु।

अग्नि शीतल हो गया था। इसके चार कारण बताए-

नेम प्रेम ब्रत धरम हित सगुन सुहावन जानु।

सीता के दंभमुक्त नेम के कारण, छलमुक्त प्रेम के कारण, शाश्वत पतिव्रता धर्म के कारण। और विश्व को सही में धर्म की पहचान है। धर्म रुलाता है, पीड़ाता है। धर्म एक कष्ट है लेकिन उसी में से ही परमशांति का कमल खिलता है और अग्नि शीतल हो जाता है। और तुलसी कहते हैं, उसको शोभायमान, सगुन रूप समझो। सीता की अग्निकसौटी की ग्लानि न करो, उसकी बधाई गाओ क्योंकि माँ इससे बाहर निकली।

सीताजी गौरीपूजा करती है तब तक उसे कोई चिंता नहीं है, लेकिन एक सखी राम को देखकर आई तो सीता के मन में उत्कंठा जागी। सीता का जीवन उतार-चढ़ाववाला; आरोह-अवरोहवाला है। तो वो सखी धीरे-धीरे चल रही है और जानकी को हुआ कि इतनी धीरे चलेंगे तो कितनी देर से हम पहुंचेंगे? और फिर वो राजकुमार फूल लेकर निकल जाए तो? जानकी चिंतित है। उत्कंठा में आनंद है कि नारद के बचन सच हो जाएंगे; मुझे मेरा प्रियतम मिलेगा लेकिन सखी धीरे चल रही है तो फिर चिंता होती है। अब गुरु को कैसे कहे कि जल्दी चलो। दादा कहते थे कि बेटा, जानकी की सखी धीरे से चलती थी लेकिन उसके आगे जानकी का मन और उसका शुभ संकल्प जा रहा था। शरीर आगे रहे कि पीछे चिंता नहीं, मन शुभयात्रा में आगे होना चाहिए। ये मंगलयात्रा थी, परम की यात्रा थी; इसमें मन आगे जा रहा है और सखी पीछे रह गई। स्थूलरूप में सखी आगे है।

तो पहले उत्कंठा फिर चिंता थी। फिर जब राम को देखा तो चिंता हुई कि ये धनुष्य कैसे तोड़ेंगे? मेरे पिता ने ये प्रतिज्ञा क्यों की? कहां ये सुकोमलता और कहां ये कठोर धनुष्य! लताभवन से निकलते समय जानकी ने देखा तो प्रसन्न हो गई; फिर राम की सुकोमलता देखी तो चिंतित हो गई; फिर राम को हृदय में उतारा तो प्रसन्न हो गई और राम चल देने की तैयारी में थे तो फिर व्याकुल हो गई। घर गई तब भी चिंतित थी। धनुष्य यज्ञ की भूमि में गई तो राम को देखकर आनंदित हो गई। धनुष्य तोड़ने में विलंब हुआ तो चिंतित हो गई। जनक और लक्ष्मण बोले तो ओर चिंता हो गई। आखिर में राम धनुष्य तोड़ते हैं तब थोड़ी शांति मिलती है। और उसी समय अभिमानी राजाओं ने बलवा कर दिया। हमारे जीवन में थोड़ी-सी खुशी आती है उतने में कष्ट आ जाता है। राजा थोड़े शांत हुए और जानकी को थोड़ी ठंडक मिली इतने मैं ही परशुरामजी आए! इन्सान को जीवन की जो आरोह-अवरोह की यात्रा है, माँ जानकी हमें यही संदेश देती है। उसी समय अपना सीतापना पकड़ रखो। चित्त तो ऐसा-तैसा होगा लेकिन सीतापना अखंड़ रहे। इसलिए जानकी अग्नि से निकली उसी प्रसंग को शुभ माना। वही जानकी अग्नि से निकली तो सब आनंदित हो गए, फिर अयोध्या में आई तो एक रजक ने कुछ बोल दिया और आपत्ति आई तो फिर जानकी के जीवन में चिंता आई। फिर ऋषि के आश्रम में गई और फिर पृथ्वी में समाने का समय हो गया। तो हम सबका एक तरंगायित जीवन है।

तो अग्निपरीक्षा का मंगल प्रसंग कहा। अब धरती में समाने के प्रसंग को तुलसी अपसगुन कहते हैं कि एक बुद्धता चली गई। तुलसी कहते हैं-

अनरथ असगुन अति असुभ सीता अवनि प्रबेसु।

जानकी का पृथ्वी में प्रवेश करना ये अनर्थ है, असगुन है, अशुभ है।

समय सोक संताप भय कलह कलंक कलेसु।

उस समय पूरा लोक संतापमय हो गया और बाद में कलह, कलंक और क्लेश बढ़ गया। जो सीता का आना 'क्लेशहारिणी' था वो ही सीता का अग्नि प्रवेश क्लेश देनेवाला बन गया। तो 'लंकाकांड' की सीता स्वर्णिम सीता है।

'उत्तरकांड' की सीता महाराणी है। उसके बाद निर्वासित सीता का ज़िक्र तुलसी के पास नहीं है।

दुइ सुत सुंदर सीता जाए।

दो पुत्रों को जन्म देनेवाली एक आदर्श महाराणी, रघुवंश की एक आदर्श माता, वो रूप की प्रस्थापना तुलसी ने की है।

तो मेरी व्यासपीठ की सीता इसी तरह सोचती है कि 'मानस' के सात सोपान में सप्तरूपा सीता है। उसी सीता की चर्चा हम इस कथा में प्रधानरूप में कर रहे हैं।

एक श्रोता का प्रश्न है कि 'गुरुमहिमा अनंत है। ऐसे कौन से पुण्यकर्म किए जाए कि गुरु का संग मिले?' गुरु यदि व्यक्ति के रूप में है तो नित्य संग मुश्किल है। लेकिन ग्रंथ को गुरु मानो तो तुम्हारी ज़ोली में गुरु है। पूरा पंजाब ग्रंथ को ही गुरु कहता है। बिनसांप्रदायिक ग्रंथ हमें मिला, 'गुरुग्रंथसाहिब।' जिसमें कबीर की भी बानी है। पंजाब का ये गुरु परंपरा का विचार बड़ा अद्‌भुत विचार है। दस तक तो ये परंपरा चली। लेकिन आगे व्यक्ति के रूप में गुरु ठीक निकले, न निकले; इन गुरु की बानी का संपादन करके ग्रंथ को ही गुरु कर दिया जाए। ये विश्व उपकारक पंजाब की देन है 'गुरुग्रंथसाहिब।' तो ग्रंथ को गुरु समझो। तुलसी ने कहा-

सद्‌गुरु ग्यान बिराग जोग के।

'रामचरितमानस' ज्ञान-वैराग्य देनेवाला सद्‌गुरु है। विचार को गुरु मानो। गुरु ने जो विचार दिए हैं उसका संग तो हम सदा कर सकते हैं। गुरु का बोल, उनके स्वभाव का संग हम सदा कर सकते हैं। तो इसी रूप में मानसिकता बनाई जाए। गुरु सिद्धांत का नाम नहीं है, गुरु स्वभाव का नाम है। सच्चा गुरु कभी सिद्धांत नहीं देता, उसका स्वभाव पेश करता है। सिद्धांत दे वो आचार्य हो सकता है, बुद्धपुरुष नहीं। गुरु स्वभाव देता है; अपने को खोलता है। कोई भी कर्म आप करो तो कर्म सिद्धांत है। लेकिन कृपा सिद्धांत नहीं, ये स्वभाव है। कृपा का कोई सिद्धांत नहीं, ये स्वभाव है।

मेरे युवान श्रोता ने लिखा है, उसके किसी मित्र ने कहा होगा कि कर्म करना पड़ता है, केवल कृपा से कुछ नहीं होगा। तो ये व्यासपीठ से समर्पित युवक ने कहा कि मैं तो कृपा पक्षवाला आदमी हूं। तो उसने पूछा है कि बापू, कर्म और कृपा में क्या अंतर है? तो सबसे पहला अंतर है कि कर्म सिद्धांत है और कृपा स्वभाव है। कर्म को करना पड़ता है और कृपा में हमारा सद्‌गुरु हमारे लिए कुछ करता है। कर्म हमें करना पड़ता है और कृपा परमात्मा स्वयं करता है।

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।

चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर।।

कर्म उसने किया ये सिद्धांत है। जड़ बन गई थी अहल्या। जो बोया सो पाया, अब तुम कृपा करो। कर्म आदमी को करना पड़ता है और कृपा 'आदम' करता है। कर्म में ईश्वर साक्षी बनता है। परमात्मा कर्म में हस्तक्षेप नहीं करता, केवल दृष्टा बनता है। और कृपा में आप खुद साक्षी बनते हैं। क्योंकि आप खुद कह सकते हैं कि कृपा मैंने महसूस की है। उसके लिए गवाही की जरूरत नहीं है।

तीसरी बात, कर्म का हिसाब होता है और कृपा तो बेहिसाब होती है। कई धर्म में तो कयामत के दिन पूरा हिसाब देखा जाता है। और हमारे यहां भी चंद्रगुप्त चौपड़ा लेकर बैठा है। कर्म में हिसाब होता है और करुणा बेहिसाब होती है। चौथा, अच्छा कर्म शायद अहंकार पैदा करे। ये बात ठीक है, हमने कथा की; हमने कथा करवाई; हमने यज्ञ किया; हमने गौशाला बनवाई; एक लाख रूपिये का दान दिया। ये सब अच्छे कर्म है। लेकिन हम सब जीव हैं, कमजोरियों के पूतले हैं तो कर्म का कर्ताभाव आए बिना नहीं रहता।

हुं करुं , हुं करुं ए ज अज्ञानता,

शकटनो भार ज्यम श्वान ताणे।

अच्छा कर्म अहंकार पैदा कर दे लेकिन कृपा आदमी को हल्का-फूल्का बना देती है। अहंकार करने का कोई उपाय नहीं क्योंकि सब करुणा करती है।

पांचवां, अच्छे कर्म से आप ईश्वर की ओर बढ़ते हैं लेकिन कृपा ईश्वर अथवा तो सद्‌गुरु अपने तरफ भेजते हैं। छठ्ठा, अगर कर्म ठीक नहीं हो तो शायद मनुष्य का पतन हो सकता है। लेकिन कृपा में ताकत नहीं कि आदमी कभी नीचे गिर जाए। आपका सद्‌गुरु कभी गिरने नहीं देता। आखिरी सूत्र, आपका कर्म शायद मौका आने पर आपकी सुरक्षा शायद न भी कर पाए, कृपा तो हमारा कवच है, 'कवच अभेद बिप्र गुरु पूजा।' तो ये सब लोग पकड़ रहे हैं। ये तलगाजरडी सूत्र है कि कर्म सिद्धांत है, कृपा स्वभाव है। तो मेरे भाई-बहन, उसके स्वभाव के संग में रहो। आज मेरे साथ मेरे दादाजी थोड़े हैं? उनके विचार, उनका स्वभाव मेरे साथ है। मैं आंखें बंद करूं तो दिखाता है। वो ही बोल रहा है। मैं सुन रहा हूं जब मैं लौट जाता हूं।

'मानस' के सात सोपान में सीता के सात रूप है, ऐसा तलगाजरडा को दिखता है। 'बालकांड' में सीताजी का किशोरीरूप है। 'अयोध्याकांड' में सीता का कुलवधू का रूप है। कुलवधू को कैसे रहना चाहिए, एक ब्याही हुई स्त्री के आदर्श क्या होने चाहिए, ये 'अयोध्याकांड' में सीता ने दिखाया। 'अरण्यकांड' की सीता तपस्विनी सीता है। 'किष्किन्धाकांड' की सीता खोजी गई सीता का रूप है। इसके केन्द्र में सीता खोज का अभियान चला है। 'सुन्दरकांड' की सीता मेरी समझ में विरहिणी सीता है। 'लंकाकांड' की सीता है स्वर्णिम सीता, जो अग्निपरीक्षा से कनक पंकज की कली बनकर बाहर आई। 'उत्तरकांड' की सीता महाराणी है।

कथा–दर्शन

- 'रामचरितमानस' ज्ञान–वैराग्य देनेवाला सद्गुरु है।
- मंदिर की चार दीवारों में ही परमात्मा नहीं है ; बाग में भी है।
- गुरु के समान कृपालु परमात्मा भी नहीं होता है।
- गुरु की बहुत आवश्यकता है, क्योंकि ये हमें कन्ट्रोल करता है।
- सच्चा गुरु कभी सिद्धांत नहीं देता, उसका स्वभाव पेश करता है।
- कोई बुद्धपुरुष चाहिए जो गहन से गहन रहस्यों को हमारे पास खोले।
- बुद्धपुरुषों का जाना हमारे लिए घाटा है।
- श्रद्धा एक ऐसी आंख है जिसको कोई लेन्स नहीं लगाने पड़ते।
- श्रद्धा एक बहुत बड़ा विशुद्ध विज्ञान है।
- कर्म हमें करना पड़ता है और कृपा परमात्मा स्वयं करता है।
- जब हमारी यात्रा सही होती है तब अस्तित्व मदद करता है।
- हमारे भटकाव यात्रा में देरी कर सकता है।
- कोई भी संबंध बंधनमुक्त नहीं होता।
- जब तक मांग है, जब तक शिकायत है तब तक सुख नहीं।
- दुःख को यदि सुख में परिवर्तित करना है तो विवेक चाहिए।
- इक्कीसवीं सदी में निराशावादी लब्ज़ बंद करने चाहिए।
- आत्म–मिलन शांति का प्रतीक है।
- गहन मौन से सिद्ध वाणी का जन्म होता है।
- प्रेम बुरी चीज नहीं है ; प्रेम में छल बुरी चीज है।
- ऋषिशक्ति समर्पण की पक्षधर है और राक्षसशक्ति अपहरण की पक्षधर है।
- गौरव बहुधा गर्व का रूप ले ही लेता है।

सीता के तीन स्तर है-पुत्री, प्रिया और माता

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।।

सर्व का श्रेय करनेवाली; रागद्वेष, अविद्या, आदि क्लेशो को हरनेवाली; उद्भव, स्थिति, संहार करनेवाली रामप्रिया सीता को मैं प्रणाम करता हूं। आपको स्मरण रहे, भगवान राम सीता को पत्नी के रूप में संबोधन बहुत कम करते हैं। ज्यादा संबोधन योग में या वियोग में सीता को 'रामप्रिया' ही करते हैं। 'घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।' चाहे वर्षाऋतु हो, चाहे वसंत हो; 'देखउ तात बसंत सुहावा।। प्रियाहीन मोहि भय उपजावा।' पत्नी और पति एक दैहिक, सांसारिक, मायिक संबंध है। लेकिन प्रिया और पत्नी में बहुत अंतर है। यद्यपि अनंतकाल से सीता-राम एक-दूसरे के सहचर है, सहचरी है। लेकिन प्रभु उसको प्रिया कहते हैं। प्रिया और प्रियतमा का संबंध हृदय का होता है। तो प्रभु प्रिया कहते हैं, ऐसी माँ सीता को केन्द्र में रखते हुए तो हम दर्शन कर रहे हैं। और मैं संबंध जब बोलूं, कोई भी संबंध; एक शब्द याद रखना, संबंध स्थूल या सूक्ष्म बंधन होता ही है। जहां भी संबंध हुआ, कुबूल कर लो, मेरे प्यारो, ये बंधन होगा। फिर ये बंधन मन को पसंद भी हो, नापसंद भी हो।

सूत्र ध्यान में रखिएगा, कोई भी संबंध बंधनमुक्त नहीं होता। कोई ज़ंज़ीरी बंधन होता है, कोई जीर्ण धागे का बंधन होता है। इसलिए बुद्धपुरुष किसी से संबंध जोड़ने से पहले बहुत सोचते हैं। इसलिए बुद्धपुरुष असंग रहे ऐसी मानसिकता भजन के द्वारा पैदा करते हैं। किसी को पता भी न लगे ऐसे वो असंग रहते हैं। क्यों बुद्धपुरुषों के चरणों को हम कमल कहते हैं? ये असंगतता का प्रतीक है। तो कोई भी संबंध के गर्भ में बंधन होता ही है। कुछ प्यारे बंधन होते हैं; कुछ मजबूरी के बंधन होते हैं; कुछ महोब्बत के बंधन होते हैं। लेकिन बंधन होते हैं।

ध्यान दे मेरे श्रावक भाई-बहन, हमारे शरीर को अर्थ की जरूरत है। शरीर को कपड़ें चाहिए तो कपड़ों के लिए अर्थ याने पैसे चाहिए। शरीर को रोटी चाहिए; कपड़ें चाहिए; मकान चाहिए। और इसके लिए अर्थ चाहिए। अर्थ की आलोचना न करो। इतना प्यारा, सात्त्विक आयोजन बिना डोलर हो सकता है? इतने लोगों को भोजन कराना; अर्थ चाहिए। तो शरीर को अर्थ चाहिए और हमारे मन को काम चाहिए। क्योंकि काम के बिना आदमी का मन पागल हो जाएगा। तो मनकी वृत्ति के लिए भी काम की जरूरत पड़ती है। आप कहे, हम निष्काम हो गए! तो आप प्यारे शब्दों से अपने आप को अलंकृत कर सकते हैं, लेकिन काम एक प्रबल वृत्ति है, जो मन के लिए जरूरी है। मन मांगेगा दोनों प्रकार का काम। बाह्य काम और आंतर काम।

बुद्धि को धर्म चाहिए। जिस बुद्धि को धर्म की जरूरत न हो, वो बुद्धि अहंकारी बन जाती है। जो कहे, हम धर्म में नहीं मानते, ईश्वर में नहीं मानते; तो अच्छी बात है लेकिन बुद्धि में तो मानते हो? और किसी का किसी रूप में किसी को प्रगट या अप्रगट मानना, ये धर्म का ही रूप है। तो बुद्धि को धर्म की जरूरत है। और अहंकार को मोक्ष की जरूरत है। धर्म, अर्थ काम और मोक्ष तथा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार; उसको इसकी जरूरत है। हमारा मन कोई संबंध चाहता है। और 'मनः एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।' 'गीता' कहती है, मन ही तो मनुष्य के बंधन और मुक्ति का कारण है। तो कहीं भी संबंध बंधन का कारण बनता है। सूक्ष्म, स्थूल, प्रगट, अप्रगट, मनभावन, मनलुभावन, प्रिय-अप्रिय संबंध बंधन में डालता है।

बंधन बंधन झंखे मम मन,
मारो आतम झंखे छूटवा।

कृपालु भगवान राजचंद्रजी ने भी कभी कहा था कि मन बंधन चाहता है और आत्मा मुक्ति का मार्ग मांगता है। १५० वीं जयंती श्रीमद् राजचंद्रजी की मनायी जा रही है। आज २९ तारीख है, तो हमारे देश में 'अभयघाट' पर हमारे देश के आदरणीय प्रधानमंत्रीजी ने श्रीमद् राजचंद्र की टिकट और कुछ सिक्कें लोकार्पित किए हैं। गांधीजी के कोचरब आश्रम की शताब्दी है। और गांधी और राजचंद्रजी आध्यात्मिक बंधन से जुड़े हैं, आध्यात्मिक संबंध से जुड़े हैं। स्मरण आया तो श्रीमद् राजचंद्रजी और विश्ववंद्य गांधीजी को मेरी श्रद्धांजलि समर्पित करूं।

बंधन बंधन झंखे मम मन,
मारो आतम झंखे छूटवा।
मीठां मधुरां अने मनगमतां पण बंधन अंते बंधन।

और ये बंधन का कार्य करने का स्वभाव क्या है?

लई जाये जन्मोना ए चकरावे, एवां ए अवलंबन,
हुं लाख मनावुं मम मनडांने
तोय करे मारुं मन ऊंहकारो।

बेड़ी लोहे की हो या सोने की हो, क्या फ़र्क पड़ता है? लोहे की हो तो आदमी बंधन महसूस करके काटने की कोशिश भी करता है, लेकिन सोने की हो तो प्यारा लगता है बंधन कि सोना क्यों काटे? बंधन में जीए। तो कोई भी संबंध बंधन देता है। तो पति और प्रिया ये जो संबंध है, सांसारिक है, दैहिक है, मायिक है। लेकिन 'प्रिया' शब्द का मेरे ठाकुर के द्वारा बार-बार उच्चारण ये हृदय की प्रीति का परिचय है। बहुधा वो प्रिया ही कहते हैं। और कोई भी बड़ा-छोटा आदमी क्यों न हो, बंधन से बंधा है।

किसी भी संबंध जोड़ने से पहले प्रियता का संबंध जोड़ना। उपनिषदकार कहते हैं, पति पति के कारण प्रिय नहीं है, आत्मा के कारण प्रिय है, हृदय के कारण प्रिय है। मेरे राम इसलिए सीता को प्रिया कहते हैं। प्रेम होना चाहिए। प्रेम होने के कारण संबंध का जो बंधन है, वो इतना हमें सतायेगा नहीं। ये बंधन तो है प्रीत का बंधन, लेकिन प्रेम होने के कारण एक-दूसरे के लिए त्याग करेंगे। और त्याग के कारण ये बंधन मुक्तिसभर रहेगा। ये बंधन के पोशाक में मुक्ति सांस लेती होगी। तो कोई भी संबंध बंधन से मुक्त नहीं है।

तो मैं तो सीता की बात कर रहा था। सीता को रघुनाथजी प्रिया कहते हैं।

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला।
मैं कछु करबि ललित नरलीला।।

जहां देखो 'मानस' में,' प्रिया, प्रिया, प्रियाजु।' मायिक संबंध में तनाव आते हैं, प्रियता से भरा संबंध जरा आदमी को रिलेक्स रखता है, तनावमुक्त रखता है। तो सीता राम की प्रिया है।

सीता के तीन स्तर है। मेरी व्यासपीठ के मुताबिक सीता त्रिस्तरी है। ये मेरा बहुत पुराना निवेदन है, जो आज स्मरण में आया। और ये तीन स्तर को समझाने के लिए मुझे पता है, ये कहानी भी आपको सुनाई। एक राजा था, उसके राष्ट्र का नाम था मधुपुर। हमारे महुवा को लोग मधुपुर कहते हैं; कोई कश्मीर कहते हैं। तो वो जमाना था जब लड़की पैदा होती थी तो लोगों को अच्छा नहीं लगता था। और राजा के घर लड़की का जन्म हुआ। एक तो लड़की पैदा हुई तो कई लोग को अच्छा नहीं लगा। अब ये भ्रांति निकल जानी चाहिए। मैं कथाओं में कहता हूं, पुत्रजन्म हो तो जरूर बधाई करो, लेकिन पुत्रीजन्म हो तो दुगुनी बधाई करो। पुत्रजन्म आपके घर में एक विभूति बनकर आता है; पुत्रीजन्म आपके घर सात-सात विभूति बनकर आता है। वेदवाक्य है। नारी की सप्त मर्यादा है। राम की मर्यादा तो है ही, लेकिन सीता की अपनी मर्यादाएं है। चोरी न करना, हिंसा न करना, मद्यपान न करना, संग्रह न करना। ऐसी सात मर्यादा है। हिंसा न करना; हिंसा का अनुमोदन न करना; ये वैदिक सप्तमर्यादा है, जो जानकी में दिखती है। सातों सात सीता में है।

तो मधुपुर के सम्राट के घर बेटी का जन्म हुआ ये अच्छा नहीं लगा। और बेटी के वक्ष पर, सीने पर तीन उभार थे। इसलिए उसका नाम त्रिस्तनी रखा। तो एक तो बेटी का जन्म, फिर विकलांग क्योंकि सर्वसामान्य उसके अंग नहीं है। तो राज पुरोहित को तुरंत बुलाया गया। ये पंचतंत्र की कहानी है। जो पुरोहितों को बताया कि ये त्रिस्तनी लड़की पैदा हुई है, ये शगुन है कि अशगुन? तो पंडितों ने अपनी तरह से कहा कि ये तो अशगुन है। ये तो राजा का नाश करेगी। इस लड़की को आपके राष्ट्र के बाहर भेज दो। आपकी लड़की को कोई ब्याहे तो सवा लाख सोने की मुद्राएं देकर उसे तुम्हारे राष्ट्र के बाहर भेज दो तो राष्ट्र सलामत रहेगा, वरना पूरा राष्ट्र खतम! ऐसी त्रिस्तनी की कहानी मैंने पढ़ी थी, जो आपको कभी-कभी कही है।

तो ये मधुपुर की राजकन्या त्रिस्तनी थी, लेकिन मेरे जनकपुर की राजकन्या त्रिस्तरीय है। इनके तीन स्तर है, जो चौपाई में लिखा है। जब तुलसी ने सीता की वंदना की, उसमें ये त्रिस्तर को प्रस्तुत किया है।

जनकसुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ।
जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।।

तो सीता के तीन स्तर गोस्वामीजी ने सीयाजू की वंदना में लिखे हैं। एक, वो किसी की बेटी है। दूसरा, वो किसी की माँ है। और तीसरा, वो किसी की प्रिया है। जनकसुता; जनक की पुत्री ये एक स्तर। क्रम तो तोड़ा है तुलसी ने। दूसरा किसीकी पत्नी ये लेना चाहिए। जैसे पार्वती के सामने सीता क्रम में बोलती है; जब पुष्पवाटिका में गौरीमंदिर में प्रार्थना करती है तब कहती है, 'जय जय गिरिवर राज किसोरी।' पर्वत की पुत्री और फिर पत्नी किसकी? 'जय महेस मुख चंद चकोरी।' उसके बाद बच्चे होते हैं तो 'जय गजबदन षडानन माता।' तो ये पूरा क्रम है। लेकिन यहां तुलसी ने क्रम पलट दिया है। तो जहां प्यार है वहां क्रम नहीं रहता।

तो जनक की कन्या है सीता; ये एक स्तर, पुत्री। जगत की माता है, ये दूसरा स्तर। और तीसरा स्तर, ये करुणानिधान रामभद्रजी की प्रिया है। 'अतिसय प्रिय करुनानिधान की।' किसी की भी पुत्री के तीन रूप है- पुत्री, पत्नी और जनेता। इसी कारण ये तीनों स्तरों के धर्म बिलग है। धर्म याने फितरत, स्वभाव। अब आपके परिवार में देखते रहियेगा। अपवाद ओर बात है। अपवाद सिद्धांत नही बन पाता। लेकिन सर्व सामान्य हमने हमारे परिवारों में क्या देखा? बेटी, पत्नी और माँ इन के तीन स्तर; उनका विज्ञान समझो।

बेटी है तो परिवार में हंमेशा श्रोता होती है। बेटी सुनती है। बाप कहता है, बेटा, तेरी सगाई इसके साथ तय की है तो वो कहती है, ठीक है। अपना प्रतिभाव नहीं देती। अपवाद है। देश-काल बदला है। पिताओं को ही समझना चाहिए कि बेटी की रुचि पूछे। पूरे परिवार की श्रोता पुत्री है। बाकी के सब तो बोल-बोल कर रहे हैं। ये रो लेगी किसी कमरे में जाकर, लेकिन बोलेगी नहीं। सहेली की, माँ की, पिता की सुन लेगी। भाई छोटा हो तो शरारत करता है, सताता है। वो वक्ता होती ही नहीं। मैं बार-बार सावधान करूं कि अपवाद हो

सकते हैं। यदि कोई बेटी बोल भी दे तो अपने बोलने से पूरा परिवार पीड़ित है ये जानकर बेटी चुप हो जाएगी। श्रोता सुनता है। मैं तो आपको बुलाता भी हूं बीच-बीच में, बाकी श्रोता को बोलने का अधिकार नहीं है। श्रोता को एक ही अधिकार है, बुद्धपुरुषों की बात को सुनकर रोने का। केवल इग भीग जाए। कोई बात छू ले हृदय को और नयन भीगे। बेटी के समान कोई श्रोता नहीं विश्व में। कन्या श्रोता है।

दूसरा स्तर है पत्नी। आप देखियेगा, पत्नी हंमेशा वक्ता है। ये मज़ाक नहीं है। ये मंत्र मुझे मिलेगा तो लेकर आऊंगा। वेद का मंत्र है, वेद की स्त्री कहती है पुरुष को कि आपको सभा में बोलने का अधिकार है, घर में मैं वक्ता हूं। गृहिणी बोलती है। कौन कहता है वैदिक परंपरा ने नारियों का अनादर किया है? जहां कहा है कि आपको यहां नहीं बोलना है, यहां गार्गी बोलेगी, यहां मातृशक्ति बोलेगी। स्त्री वक्ता है, पत्नी वक्ता है। और आजकल के संदर्भ में वक्ता ही तो है!

तो मातृशक्ति के तीन स्तर। बेटी श्रोता, पत्नी वक्ता। और धर्मपत्नी को बोलने देना; ये वक्ता है। मैं आदर के साथ कह रहा हूं। आजतक बोलने नहीं दिया इसलिए अब बदला चुकाना पड़ रहा है! अब वो ही बोले। वेद जिसको सम्मान देता है कि पत्नी वक्ता है। तो सीता के तीन स्तर। पुत्री के रूप में ये श्रोता। जानकी एक शब्द न बोली कि पिताजी, आपने ऐसी प्रतिज्ञा की कि धनुष तोड़े उसके साथ मेरा ब्याह हो! धनुष कोई भी तोड़ सकता है। एक विकलांग तोड़ दे तो? असुर तोड़ दे तो? कुरूप कोई तोड़ दे तो? लेकिन जानकी श्रोता है। मेरे बाप ने निर्णय किया है, इसलिए बोली तो बाप के सामने नहीं बोली। सखियों के पास, भवानी के पास बोली। और वहां धीरे से बोल दिया 'निज अनुरूप सुभग बर मांगा।' जो भी मिले, मेरे बाप ने कहा है, मैंने सुना है, अब मैं कोई प्रतिवाद न करूं लेकिन मुझे योग्य वर की प्राप्ति हो। वहां बोली।

तो बेटी है श्रोता, पत्नी है वक्ता और तीसरा रूप है, वो माता है। आप भी अनुभव करना, माता है मौन। मौन का नाम माँ है। माँ मौन होती है। ये तीन दर्शन तलगाजरडा दर्शन है। मैं तलगाजरडा इसलिए बीच में डालता हूं क्योंकि मैं मेरी जिम्मेवारी कुबूल करता हूं। फिर कोई इसकी नकल कर ले, तो अच्छी वस्तु का विस्तार हो ये अच्छी बात है। इसलिए मैं मेरी जिम्मेवारी लेता हूं। और आपके अनुभव में बात ठीक लगे तो ही मानना।

माँ के रूप में सीता बोलती नहीं, मौन रहती है। पत्नी के रूप में सीता बोली है राम के सामने वनवास के समय। भगवान ने कहा कि तुम घर रहो। और कौशल्याजी के सामने भी बोली विनय से, जनक के लक्षणों को ओर सुंदर करती हुई बोली कि आप मुझे क्यों घर रखते हो? कन्या के रूप में वो कुछ नहीं बोली। पत्नी के रूप में वो अयोध्या में विनय से बोली। और माता के रूप में वो मौन है। लव-कुश के जन्म के बाद जानकी के निवेदन मिलते हैं? नहीं। ये तो कवियों ने सीता से शिकायत करवाई। यद्यपि दूसरी बार सीता का निष्कासन हुआ ये सही है कि कल्पना है, उस पर आज विद्वानों में चर्चा है। लेकिन जानकी को बोलने देना चाहिए था, उसी समय जानकी मौन है। ये लव-कुश की माँ है। और 'रामचरितमानस' में भी लव-कुश के जन्म के बाद सीता चुप है, मौन है। माँ मौन हो जाती है।

जगदंबा के रूप में सीता यदि लव-कुश को जन्म न भी दिया तो भी अपने संतानों के पास मौन है। रोई है, बोली कम है। चीख निकली है, चित्कार निकला है। एक मंज़र आपके सामने लाऊं 'किष्किन्धाकांड' का; सीता को समझने में ओर मदद मिलेगी। रावण ने जनक की पुत्री का, जगदंबा का, राम की प्रिया का अपहरण किया। तीन स्तर जिसके हैं, वो सीता का अपहरण किया। 'रामचरितमानस' में 'भुशुंडि रामायण' का पाठ हम करते हैं उस में तीन बार 'सीता' शब्द का साफ़-साफ़ उच्चारण है।

पुनि माया सीता कर हरना।
श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना।।
जेहि बिधि कपिपति कीस पठाए।
सीता खोज सकल दिसि धाए।।
सीता रघुपति मिलन बहोरी।
सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी।।

'पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा।' यहां 'सीतहि' है।

'किष्किन्धाकांड' के मंगलाचरण में 'सीता' शब्द लगाया। अपहरण तो 'अरण्यकांड' में हुआ है और तुलसी 'सीता' शब्द लेकर 'किष्किन्धाकांड' में उच्चारण करते हैं। तुलसी का संस्कृत तो देखो यार! सीता की खोज की तीव्रता में राम-लक्ष्मण पंपा सरोवर से आगे बढ़े; रिष्यमूक पर्वत के पास गए; वहां सुग्रीव अपने सचिवों के साथ बैठे थे। पांच लोग बैठे थे रिष्यमूक पर्वत पर। अब त्रिभुवनदादा आते हैं। पांच लोग बैठे थे, ऐसा लिखा नहीं है। गुरुवचन प्रमाण।

तो बाप! सुग्रीव सह पांच बैठे थे। जामवंत, हनुमानजी, नल, नील और सुग्रीव। पर्वत की तलेटी में अतुल बल धाम दो कोई आ रहे हैं, उसे देखकर शिखर पर बैठा सुग्रीव भयभीत होकर हनुमानजी को कहता है कि हनुमानजी महाराज, आप ब्राह्मण का रूप लेकर तुरंत जाओ, ये दो कौन आ रहे हैं? ये बल और रूप का निधान है। कहीं बालि ने मनमेले लोगों को तो नहीं भेजा? क्योंकि बालि इस पर्वत पर नहीं आ सकता, और मुझे वो मारना चाहता है। कई उसके मनमेले लोग मेरा भेद लेने तो नहीं आ रहे हैं? आप जाईए, और मुझे बताने मत आना कि वो कौन है? वहीं से ही इशारा कर देना। यदि बालि का भेजा हुआ मनमेला है, तो मैं यहीं से ही भाग जाऊं। भयभीत है सुग्रीव।

मैंने कभी कहा था, सुग्रीव जितनी भूगोल जानता है, दुनिया में इतनी भूगोल शायद कोई नहीं जानता है। क्योंकि ये भागा हुआ आदमी है, भागता फिरा है पूरी ज़िंदगी। जब-जब बालि निकला और वो सकल भुवन में ऐसे ही भटक रहा है। इसलिए तो उसने योजना बनाई कि ये टुकड़ी दक्षिण में जाओ, ये टुकड़ी पूरब में जाओ। ये सब दिशा जानता है। ये आदमी भूगोल का हेड ओफ धी डिपार्टमेन्ट है। तो सभीत होकर भेजता है। श्री हनुमानजी महाराज जाते हैं। प्रभु और हनुमानजी एक-दूसरे को गले मिलते हैं। फिर अपनी पीठ पर बिठाकर, राम-लक्ष्मण को सुग्रीव से मैत्री करो इसी मुद्दे पर वहां ले आते हैं। रिष्यमूक पर्वत पर अग्नि की साक्षी में दोनों को परस्पर मित्र बना दिया।

युवान भाई-बहन, आप किसी के मित्र बनो तो तुम्हारा कर्तव्य है, जिसके साथ आपने मित्रता की उसके सुख-दुःख के बारे में जानो। ये मित्र का स्वभाव है। वहां पर तुलसीदासजी ने आठ पंक्ति में मित्रधर्म का वर्णन किया है। युवानों को मित्राष्टक पढ़ना चाहिए कि मित्र किसको कहते हैं? भगवान राम और सुग्रीव मित्र बन गए तो भगवान का कर्तव्य हो गया कि मैं मेरे मित्र को पूछुं। यद्यपि राम स्वयं दुःखी है। राम भटक रहे हैं; सीतान्वेषण में डूबे हैं। लेकिन सुग्रीव को कहते है, तू तो बालि का भाई है; तू यहां पहाड़ पर क्यों ऐसे डरा-डरा सा रहता है? फिर सुग्रीव अपना दुःख राम को बताता है कि मैं और बालि भाई है। हम दोनों के बीच में बहुत प्रेम था। लेकिन मायावी नामक राक्षस आया। बालि ने मेरी पत्नी को चुरा ली; राज्य का मेरा हिस्सा चुरा लिया। और मैं तब से दुनिया में भागा फिरता हूं। सकल भुवन में घूमता हूं। बालि मेरा पीछा कर रहा है। प्रभु ने कहा, तो वो यहां नहीं आता? तो बोला, रिष्यमूक पर्वत पर वो आएगा तो उसकी मौत हो जाएगी, ऐसा उसको श्राप है। यहां वो श्राप के कारण नहीं आ सकता। मेरे लिए एक ही सुरक्षा है, ये रिष्यमूक का शिखर। सुग्रीव अपना सब इतिहास कह देता है। दोनों मित्र है।

तो वो भगवान राम के दुःख में भागीदार होता है तब सुग्रीव जो कहता है, वहां केन्द्र में सीता है। जब राम ने पूछा, आप को सीता के बारे में कोई खबर है? बोला, हां महाराज, हम पांच लोग एकबार इस शिखर पर बैठे थे। किसके साथ बैठना, कब बैठना, क्या सोचना ये तीनों चीज़ 'किष्किन्धा' का ये प्रसंग दादा की विचारधारा में आया। सुग्रीव किसके साथ बैठा है? जो ओर चार लोग है, उसमें एक शंकरावतार। सोबत करो बच्चों, तो अच्छों की करो। सोबत जिसकी बिगाड़ देती है, फिर शास्त्रों को भी सुधार ने में समय लगता है। मैं यह नहीं कहता कि आप मौज न करो। युवानी मौज करने की चीज है। आप खुब मौज करो। मैं आपके पक्ष में हूं। लेकिन मर्यादाएं न छोड़ो; विवेक न छोड़ो। मैं फिर राज कौशिक का वो शे'र कहूं-

अगर नीचे उतर आऊं तो सबकुछ हाथ में है पर,
मैं नीचे आ नहीं सकता मेरा ऊंचा घराना है।

सुग्रीव कहता है, मैं रिष्यमूक पर बैठा हूं। बाप! सोबत करो तो ऐसों की करो। हनुमानजी उसके सचिव है और हनुमान है शंकरावतार। विश्वास का अवतार है हनुमान। विश्वासु के साथ बैठना। तुम्हारे मन में संशय, वहम का कीड़ा डाल दे ऐसों का संग न करो। आज की दुनिया को यदि किसी ने बिगाड़ा है, आज के परिवार यदि टूट रहै हैं तो इसमें सबसे बड़ा योगदान है सोबत का। अच्छी सोबत को ही पहली भगति कही। माला लेकर घूमो ये मैं नहीं कहता। मेरी तरह तिलक करो ऐसा मैं नहीं कहता। तुम अच्छी सोबत करो तो मैं राजी हूं; तुम पहली भगति कर रहे हो। तुलसी कहते हैं-

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरी रति मम कथा प्रसंगा।।

तो मैं युवानों को, मेरे फ्लावर्स को कहूं, तुम मौज में रहो, अच्छे कपड़ें पहनो, एन्जोय करो, घूमो लेकिन भारतीय हो ये मत भूलो; गुजराती भाषा मत भूलो; भारतीय गौरव मत भूलो; ऋषियों की संतान हो। बाकी आनंद करो; यहां के बच्चें फटी हुई जीन्स पहने; आप बिना फटी जीन्स पहनो। अच्छे गहनें पहनो। तुम्हारी संस्कृति में ज्यादा निखार आए, ऐसे नाटक देखो। मुझे कोई आपत्ति नहीं। अच्छी फिल्म देखो। लेकिन नाटक देखो तो ऐसा देखो कि तुम्हारे पर भी कोई नाटक लिख सकता है, ऐसा देखो। अच्छा भोजन करो। युवान भाई-बहन, संग और सोबत का ध्यान रखे। खुश रहो, मौज करो। मैं आपको 'बाप' कहता हूं और आप मुझे 'बापू' कहते हैं। कौन-सा बाप ऐसा भाग्यहीन हो कि अपने संतान मौज करे और वो नाराज हो? लेकिन विवेक बरकरार रखना।

तो सुग्रीव और अन्य चार नीचे नहीं बैठे हैं, ऊंचे बैठे हैं। बेठक ऊंची होनी चाहिए; उच्च लोगों के साथ होनी चाहिए; सज्जनों के साथ होनी चाहिए। तो सुग्रीव के साथ है शंकरावतार विश्वास हनुमान। जामवंत जो ब्रह्मा का अवतार है, बुद्धिवान, प्रज्ञावान, अनुभवी है; नील जो अग्नि का पुत्र है, वो बैठा है। और नल है वो परम शिल्पकार विश्वकर्मा का बेटा है। दोनों भाईओं की पहचान है। एक वास्तुकार का बेटा है, एक अग्नि का बेटा है। अग्नि पवित्र चीज मानी जाती है। पवित्र चित्त है, मन है, अंतःकरण है। तो हनुमानजी विश्वास है। ब्रह्मा ऊंची बुद्धि का प्रतीक है। और सुग्रीव स्वयं सूर्य का पुत्र है।

राधा और सीता की पहली तुलना करूं। राधा है प्रेमिका और सीता है सेविका। जानकी कहती है, मुझे बन ले जाओ, मैं तुम्हारे चरण दबाऊंगी। राधा ने कभी कृष्ण के चरण नहीं दबाए; कृष्ण ने उसके चरण दबाए, क्योंकि ये प्रेमिका है। और प्रमाण है, 'देख्यो पलोटत राधिका पालन।' खोजी निकला कि कृष्ण कहां है? तो ब्रह्मलोक में नहीं मिला, सत्यलोक में नहीं मिला, वैकुंठ में नहीं मिला। हरीन्द दवे की पंक्ति की तरह 'माधव क्यांय नथी मधुवनमां।'

फूल कहे भमराने, भमरो वात वहे गुंजनमां,
माधव क्यांय नथी मधुवनमां।
शिर पर गोरसमटुकी
मारी वात न केमे खूटी।
अब लग कंकर एक न लाग्यो,
गयां भाग्य मुज फूटी।

तो राधा है प्रेमिका और सीता है सेविका। राधा राणी नहीं है, सीता तो महाराणी है। राधा राजराणी नहीं है, लेकिन व्रजराजराणी है, व्रज की महाराणी है। सीता राम के चरण का संवाहन करती है, वो सेविका है। राधा प्रेमिका है, इसलिए उसके पैर दबाने कृष्ण जाता है। और खोजी निकला तो उसे लगा कि कहीं ईश्वर नहीं मिला, तो किसीने कहा, निकुंज में जा, वहां शायद मिल जाए। तो वो खोजते-खोजते गया तो वहां राधिका लेटी है और कृष्ण राधा के पैर दबाते हैं। क्योंकि ये है प्रेमिका। तो राधा है प्रेमिका, सीता है सेविका। राधा है व्रजराजराणी, सीता है राजराणी। राधा है उम्र में बड़ी और सीता है उम्र में छोटी। सीता राम के चरण दबाती हैं, कृष्ण राधिका के चरणों का सेवन करता है।

तो मैं युवानों से कह रहा था कि अच्छी सोबत में बैठना, ऊंचे बैठना। फिर सुग्रीव कहता है, हे प्रभु, मैं इन चारों के साथ बैठा था। हम सब मिलकर सोच रहे थे। सज्जन लोग इकठ्ठे होकर वेदांतविचार, ब्रह्मविचार, वैराग्यविचार करते हैं। विचार करना चाहिए। बिना सोचे

सीता के तीन स्तर है। मेरी व्यासपीठ के मुताबिक सीता त्रिस्तरी है। सीता के तीन स्तर गोस्वामीजी ने सीयाजू की वंदना में लिखे हैं। एक, वो किसी की बेटी है। दूसरा, वो किसी की माँ है। और तीसरा, वो किसी की प्रिया है। जनकसुता; जनक की पुत्री ये एक स्तर। जगत की माता है, ये दूसरा स्तर। और तीसरा स्तर, ये करुणानिधान रामचंद्रजी की प्रिया है। किसी की भी पुत्री के तीन रूप हे– पुत्री, पत्नी और जनेता। इस कारण ये तीनों स्तरों के धर्म बिलग है। धर्म याने स्वभाव। बेटी हमेशां श्रोता होती है। दूसरा स्तर है पत्नी। पत्नी हमेशां वक्ता है। और तीसरा रूप है माता। और माता है मौन। मौन का नाम माँ है। माँ मौन होती है।

कदम नहीं उठाना चाहिए। सज्जनों के साथ बैठकर ब्रह्मविचार, जगमंगल के विचार करने चाहिए। तो सुग्रीव ने कहा, हम सोच रहे थे उस समय हमने उपर देखा। त्रिभुवनदादा ने कहा, इसका अर्थ है, विचार करो तो ऊच्च प्रकार के विचार होने चाहिए। सोच का आदर है पर उपर देखना, निम्न मत देखना; शिखर का विचार करो। आदमी उपर बैठकर, ऊंचा देखखर सोचेगा तो उसे ऊंचा ही दिखाई देगा। सुग्रीव कहे, हमने सीता को गगनपंथ से जाती हुई देखी; विलाप करती, चीख करती वो जा रही थी। बहुत विह्वल थी। राम के मन में प्रश्न उठा, तुमने देखा कि सीता थी, रो रही थी तो तुम लोगों ने कुछ नहीं किया? सुग्रीव ने कहा, महाराज, मैं दौड़ने में बहुत माहीर हूं, मैं चाहता तो छलांग लगाकर रावण को पकड़ लेता। जामवंत ने कहा, बालि को बांधते समय इतने समय में मैंने इतनी परिक्रमा की थी। मैं रावण को विमान के साथ गिरा सकता था। हनुमानजी ने कहा, मैंने बचपन में सूरज को ग्रसा था; तुरंत मैं रावण को ला सकता था। राम ने कहा, तो फिर तुम लोगों ने कुछ किया क्यों नहीं? सुग्रीव ने कहा, क्योंकि हम सोच रहे थे। ऊंचे बैठनेवालों को, सोचनेवालों को तुरंत निर्णय नहीं करना चाहिए; जरा सोचना चाहिए कि जरा देखे कि क्या है?

सुग्रीव ने कहा, सीता परवश थी। टीकाकारों ने, भाष्यकारों ने, गीताप्रेस से लेकर सब ने ये कह दिया कि रावण के वश में विलाप करती-करती सीता जा रही है। ये सीता नहीं है, उसकी छाया है। और परछाई को कोई वश में नहीं कर सकता। तो परवश का अर्थ यहां बदलना चाहिए। तो वहां दादा ने मुझे यही अर्थ बताया कि वहां रावण के वश में सीता को सुग्रीव ने नहीं देखा। परवश का अर्थ होता है दूसरों के आधीन और पर का एक अर्थ होता है परम। जानकी रावण के वश में नहीं है, परम के वश में हैं। परम ने कहा था कि तुम मुझे मदद करो ललित नरलीला में, इसलिए उसने ये स्वीकारा।

'राम-राम-राम' बोलती हुई, पुकार करती हुई वो जा रही थी। सीता 'राम-राम' बोले ही नहीं। सीता का मंत्र ही 'राम' नहीं है। जिसका जो मंत्र है वो ही बोलना चाहिए। सीता का मंत्र है, 'हरि, हे हरि।' फिर क्यों 'राम-राम' बोल रही है? मुझे बताया गया था, 'बेटा, सीता 'राम-राम' नहीं बोलती। किसी को चोट लगे और गिर जाए ये देखनेवाले कहते हैं, 'राम-राम-राम।' कोई अबला का अपहरण हो रहा है, ये देखकर ये पांचों बोल गए 'राम-राम।' और जब हमने बोला तो सीता को लगा कि 'राम-राम' बोल रहा है; ये मेरे प्रभु के लगते हैं। ये शब्द सुनकर वस्त्र फ़ेंका। विभीषण 'राम-राम' बोला तो हनुमान को यकीन हो गया कि यहां कोई साधु रहता है। शंकर महाराज सत्तासी हजार साल के बाद 'राम-राम' बोले तो सती को लगा, जगतपति जागे। 'राम' उच्चारण के प्रताप से जानकी को लगा कि यहां कोई राघव के सेवक बैठे हैं। ऐसा अर्थ तो मैंने किसी टीकाओं में नहीं देखा है। और मेरे लिए गुरुवचन प्रमाण है।

जानकी ने कपड़ा ही क्यों फेंका? वाल्मीकि तो कहते हैं, वस्त्र-अलंकार फेंके हैं। फिर कथा आती है कि लक्ष्मण को ये बताया गया, तो उन्होंने कहा कि मुझे नुपूर दिखाओ तो मैं पहचान सकूं, क्योंकि मैं जानकी के चेहरे को कभी देखता नहीं। ये मेरी माँ है। मैं तो नित्य चरणस्पर्श करता। तो नुपूर की पहचान है, ओर आभूषण की नहीं। 'नाहं जानामि केयूरे' श्लोक वहां से आया है। उसकी ओशो आदि ने टीका भी की है। उस में मुझे नहीं जाना है। ओशो की हर बात मैं कुबूल नहीं करता। अपने को अपने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। ओशो को किसी गुरु के मुख से 'रामायण' पढ़ना चाहिए, फिर 'रामचरितमानस' पे अभिप्राय दे। वो कहते हैं, 'लक्ष्मण को अपने संयम पर काबू नहीं था!' वहां ओशो अपनी जगह पर। दूर से प्रणाम करो।

यहां गहने का प्रश्न ही नहीं। वाल्मीकि गहने फिंकवाते हैं। यहां तो केवल वस्त्र ही फेंका गया है। बच्चे घूप में बैठे हो और माँ को फिक्र हो तो माँ उसे आभूषण नहीं पहनाती; माँ उसे अपनी साडी ओढ़ाती है। सीता को लगा कि मेरे पांच-पांच बेटे शिखर पर बैठे हैं और इतनी धूप है। उसे 'दीन्हेऊ पट दारि।' मुझे एक शब्द देना है समाज को। सब दानों मे श्रेष्ठ दान है पल्लुदान। ये पालव का दान था। वो ओढ़ाती है कि हे बच्चों, तुम मेरी चर्चा कर रहे हो, मेरे बारे में तुम राघव को सावचेत कर रहे हो; तो वस्त्र डाला सीता ने। तो पालव दान ये अद्‌भुत दान है।

प्रभु ने कहा, 'ये पालव मुझे दो; कहां है?' तो सीता का ये वस्त्र सुग्रीव ने दिखाया। तुलसी कहते हैं, 'पट उर लाई सोच अति कीन्ह।' ये वस्त्र रामजी ने सीने से लगा लिया। 'महबूब की हर चीज़ महबूब होती है।' तो ये सीता का एक रूप है, जो एक बिलग संदेश हम सबको प्रदान करता है। तो माँ, पत्नी और पुत्री ये त्रिस्तरीय है सीता का रूप।

राधा है प्रेमिका और सीता है सेविका

बाप! फिर एक बार पानवाला परिवार, जो केवल अपने मंगल मनोरथ के कारण निमित्त बने हैं और स्वान्तः सुखाय रूप में हम रामकथा का गायन कर रहे हैं। आज की कथा में पुनः सभी को मेरा प्रणाम।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।।

रामप्रिया सीता के चरणों में हम प्रणाम करते हैं, जो उद्‌भव, स्थिति और संहार की कारिणी है; क्लेश का हरण करती है; सर्व का श्रेय करनेवाली माँ सीता को गोस्वामीजी ने प्रणाम किया। 'मानस-सीता' का कुछ ओर दर्शन करें। एक वेदमंत्र का उच्चारण करें।

तस्मात् देतः स्मादाकाशः संभूतः आकाशात्।
वायुः वायोरग्निः रग्नेरापः दभ्यः पृथ्वी स्मणायत्।।

देखो, ये पूरा वैज्ञानिक मंत्र है। इस मंत्र को युवानों, पढ़े-लिखे बच्चों विज्ञान की दृष्टि से देखें कि मेरे देश का ऋषि कितने वैज्ञानिक सुझ से बोला है! ये संवाद है, इसलिए मैं आपसे पूछना चाहता हूं कि इस संसार में सबसे पहले किसकी उत्पत्ति हुई? ब्रह्म मत कहना क्योंकि वो तो-

आदि अंत कोउ जासु न पावा।
मति अनुमानि निगम अस गावा।।

वेदों ने मति अनुरूप वैज्ञानिक प्रज्ञा से गाया है। तो ब्रह्म तो आदि-अनादि है। ब्रह्म ने इस जगत को बनाया। या तो उसकी माया ही ब्रह्मांड बनाती है। 'ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया।' अथवा कोई कार्य-कारण सिद्धांत से ये जगत बना। आदम और ईव, मनु-शतरूपा ये सब तो बाद में आते हैं। सब से पहले ब्रह्मांड में कौन आया? परमात्मा अकर्ता है। यद्यपि वो ही सब कुछ बनाता है। वेदमंत्र को हमारे यहां प्रमाण माना है। १. शास्त्र प्रमाण। २. प्रत्यक्ष प्रमाण। जो बिलकुल सामने हो वो प्रत्यक्ष प्रमाण। उस में शास्त्रों को पूछने की जरूरत नहीं हैं। ३. अंतःकरण प्रमाण; हमारी आत्मा कुछ कहती है ये प्रमाण। ४. अनुमान प्रमाण; धुंआ निकलता है तो अग्नि होना चाहिए; धूल उड़ रही है तो वायु का ऐसा रूप होना चाहिए; ये अनुमान प्रमाण है। भवभूति और कालिदास दोनों अंतःकरण को प्रमाण मानते हैं। मन भी कहे, बुद्धि भी कहे, चित्त भी कहे, हमारी अंतःकरण की अस्मिता भी कहे। अंतःकरण कहता है, केवल मन का ही मत मानो; बुद्धि भी कहे, चित्त और अहंकार भी कहे उसे प्रमाण मानते हैं। ५. भजन प्रमाण; तलगाजरडा ने एक नया प्रमाण दिया है, भजन प्रमाण। कोई भी प्रमाण काम न आए तब साधक को भजन प्रमाण है, या तो गुरु का वचन प्रमाण है।

तो वेदमंत्र का जो प्रमाण है वो कहता है, इस संसार में सबसे पहले ये नितांत खालीपना बना। किस ने बनाया? तो श्रद्धा जगत से कहते हैं कि परमात्मा ने बनाया। और वेद कहता है, परमात्मा अकर्ता है। 'रामायण' कहता है, 'कर बिनु करम करइ बिधि नाना।' वो बिना कर सबकुछ करता है।

नाद-शब्द ये सब आकाश की संतानें हैं; वो बाद में आए। मैं जिसके घर ठहरा हूं वो मेरी भाषा भी नहीं समझती फिर भी कथा में बैठती हैं! वो मुझे कहे कि बापू, आप जाओगे फिर मैं आपके यज्ञकुंड को निकालूंगी नहीं। अब हम पूरा परिवार इसी जगह परमात्मा की प्रार्थना करेंगे। तो हमने चर्चा की कि नाद और ध्वनि समझा जाता है। वो मुस्कुराती है। मेरे साथ बात करे तो आपकी और आपके पति की आंख नम हो चुकी थी क्योंकि नाद समझते हैं। नाद तो पक्षी भी समझता है और मछली भी समझती है। हमारे यहां बहुत प्यारा शब्द है, 'नादवैभव।' चिडियां भी नाद समझ जाती है। कोई मुरली बजाता हैं तो उस में भाषा नहीं है फिर भी 'सुनइ बिनु काना' ये सर्प को लागू होता है। सर्प को कान नहीं है, कान के निशान है। इसलिए 'मानस' में लिखा हैं-

जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना।
श्रवन रंध्र अहिभवन समाना।

जिन्होंने हरिकथा नहीं सुनी उसके कान सर्प के बिल हैं, ये केवल छाप हैं, निशानी हैं। सर्प के लक्षण तुलसी ने बहुत लिखे हैं 'मानस' में। कुछ बातें सर्प की इतनी जटिल कही है कि अनुवाद में, टीकाओं में तो कुछ पता ही नहीं लगेगा। 'मानस' की जटिल से जटिल पंक्तिओं में से ये एक है। बिना गुरुमुख उसका समाधान बहुत कठिन हैं। विवाहमंडप में सीता बैठी है। सीता और राधा का भेद कल हम देख रहे थे, तो इसमें सबसे बड़ा भेद ये है कि सीता को हम माता कहते हैं, राधा को हम कभी माता नहीं कहते। राधा उम्र में बड़ी है कृष्ण से और सीता रामजी से उम्र में छोटी है। तो तुलनात्मक अभ्यास पेश किया जाए तो राधा है प्रेमिका और सीता है सेविका। और प्रेम सदैव ही परमात्मा से बड़ा होता है। परमात्मा प्रेम से छोटा होता है। जिससे जो वस्तु प्राप्त हो वो प्राप्त करा दे जो चीज़ वो उससे बड़ी है।

प्रेम तें प्रगट होई मैं जाना।

शंकर का सूत्र है, प्रेम से हरि प्रगटता है। तो जिससे परमात्मा प्रगट होता है वो प्रगट करनेवाली वस्तु बड़ी है। परमात्मा के होने से प्रेम प्रगटे ये संभव है भी, न भी है। परमात्मा तो सब के घट में है, फिर भी हम इर्ष्या क्यों करते हैं? प्रेम से परमात्मा प्रगटेगा। ईश्वर हम सबके मन में है फिर भी हमारे मन में क्यों द्वेष, कुटिलता, पाखंड आता है? ये सिद्ध करता है कि परमात्मा से प्रेम नहीं प्रगटेगा, प्रेम से परमात्मा प्रगटेगा।

राधा बड़ी ही होनी चाहिए, क्योंकि प्रेम है। सेवक हंमेशा छोटा ही रहना चाहता हैं। माँ सीता सेविका है। उम्र की बात छोड़ दो। कल भी मेरे पास प्रश्न आया कि ये समझ में नहीं आ रहा कि सात साल की सीता में ये प्रेमांकुर कैसे फूटे? राम तो सोलह साल के हैं तो समझ में आया। लेकिन आप तुलसी का मनोविज्ञान देखो। सीता के मन में कहीं भी काम प्रगट हुआ ऐसा नहीं लिखा क्योंकि सात साल की बेटी में कामांकुर नहीं फूटते। राम सोलह साल के हैं इसलिए ये सहज संभाव्य है। उम्र देखने जाओगे, स्थूलरूप में अर्थ करोगे तो जरा मुश्किल है। कई छोटे बच्चों की चेतना देखो तो लगता है उम्र छोटी है, अनुभूति बड़ी दूर से लेकर आते हैं। कई लोग बचपन में पता नहीं क्या-क्या बोलने लगते हैं! तब लगता है कि जन्मों की दबी चेतना उस स्मृति को प्रगट कर रही है। तब उम्र नहीं देखी जाती। सीता के मन में ये अंकुर फूटने का मनोवैज्ञानिक कारण ये है कि 'प्रीति पुरातन', जनम-जनम की प्रीत प्रगट हो रही थी। सीता सात साल या नव साल की हो और इतनी उम्र में प्रेमांकुर फूटना; सभीत हरनी की तरह वो राम को खोज रही है। ये सब सात साल की लड़की में आज मुश्किल है। आज तो टी.वी. की संस्कृति ने सात साल की लड़कियों को भी बिगाड़ना शुरू कर दिया है! आपकी बेटियों को बचाईए कि टी.वी. हाथ में लेकर न बैठे। सात-आठ साल की लड़कियों को टी.वी. अठ्ठाईस साल की कर देता है। और फिर तुम हमारे पास फरियाद करते हो कि बच्चें बिगड़ गए हैं! तुम को बच्चे को संभालना नहीं है; कहानी नहीं कहनी है; लोरी नहीं सुनानी है; कपड़े भी दूसरे बदल देते हैं; उसको नहलाने भी नहीं है! फिर बच्चा समय की भीख मांगता है आपसे। आपके पास समय नहीं है या आपकी मानसिकता नहीं है इसलिए आप टी.वी. का रिमोट पकड़वा देते हो।

मेरे दिल के कोने में एक मासूम सा बच्चा,
बड़ों की देखकर दुनिया बड़े होने से ड़रता है।
- राजेश रेड्डी

तो जानकी के मन में ये प्रेमांकुर फूटे। सीता के मन में जो मनोवैज्ञानिक कोंपलें फूटी है, उसके पीछे है दबा हुआ अज्ञात चित्त। दादाजी को याद करके जो बातें अभी उभरती है, आपकी सेवा में पेश करता हूं तो अब मुझे भी होता है कि ये सूत्र उस समय मुझे कहा होगा तो मुझे समझने में भी नहीं आया होगा। लेकिन कोई बीज बो देता है और समय पर कोंपलें फूटती है।

कुछ बातें सार्वभौम, सर्व सामान्य नहीं हो सकती, कुछ विशेष होती है। परीक्षित ने गर्भ में चारों ओर देख लिया। क्योंकि परीक्षित का अर्थ है चारों ओर निरीक्षण करना। पूर्व स्मृति और बाद की स्मृति के बारे में योगियों को पूछीए, सब से बड़ा केन्द्र है इन्सान की नाभि। स्मृति का केन्द्र इन्सान की बुद्धि नहीं है; वहां तो स्मृति जाकर फलने-फूलने लगती है। उसका मूलाधार नाभि है। पूरे शरीर में नाजुक से नाजुक इतनी नसे हैं, उसे यदि खोल दी जाए, एक-दूसरे से बांध दी जाए तो पूरी पृथ्वी की दो बार प्रदक्षिणा कर सके इतना पिंड में हैं, तो ब्रह्मांड में क्या होगा? ये तो विज्ञानसिद्ध है, केवल नाभि के इर्द-गिर्द ईतनी सूक्ष्मतम नसे हैं। पचास साल से एक वीणा पड़ी है लेकिन कोई वीणावादक आए, धूल साफ करके केवल अंगुलियों से स्पर्श करे तो वीणा झंकृत होने लगती है। बुद्धपुरुष हमारी सूनी वीणा पर मिट्टी, रजोगुण उड़ाकर केवल कृपा की उंगली रख देता है और स्मृति जागने लगती है। प्रतीक्षा करनी होगी। उंगली स्वयं बेताब होती है कि उसके सिर पर घूमूं। आपके उपर गुरु की कृपा हो जाए तो केवल भावावेश में मत डूबना, वरना आप ऊर्जा पचा नहीं पाओगे। जब आपको ज्यादा ऊर्जा परेशान करने लगे तो इससे पहले तुम्हारे चित्त को

तैयार करना। क्योंकि इतनी उर्जा शरीर सह नहीं सकता। प्राण ले लेती है उर्जा। इसी समय गुरु जरूरी है। सद्गुरु की कृपा से या साधना से ऐसी स्थिति हो जाए वो कृपया साधना भी कम करे क्योंकि ये प्राण हरनेवाली ऊर्जा होती है।

ठाकुर रामकृष्ण परमहंस की ये दशा क्यों हो जाती थी? बेहोश हो जाते थे, कोई कालि का 'क' बोलते थे और खो जाते थे। चैतन्य महाप्रभु ये नीलवर्ण का नील समंदर जगन्नाथपुरी में देखते थे और शिष्यों को उनको पकड़ना पड़ता था कि क्हीं ये डूब न जाए। गुरु का दिया हुआ बेरखा घुमाते-घुमाते उसकी आवाज़ आपको ऊर्जा में ज्यादा ले जाए तो कुछ समय बेरखा छोड़ दो। 'मानस' का पारायण करते-करते ऐसी ऊर्जा आए तो 'मानस' को आदर के साथ एक ओर रख दो। ये सब वीणाएं हैं। कई लोगों को लगता है, जल्दी मुझे प्राप्ति हो जाए। जल्दी मत करो। ज्यादा होने से मुश्किल भी हो सकता है। हमारे नीतिनभाई वडगामा ने बेरखे पर चार पद लिखे, बहुत सुंदर पद लिखे हैं। मुझे याद नहीं है। तुम्हारे हाथ में बेरखा नहीं है, वीणा है। तुम्हारे हाथ में माला नहीं है, मृदंग है। आकारभेद है, स्वरूपभेद है। 'मानस' नहीं है महामंत्र है, तुम्हारे हाथ में। 'भगवद्गीता' नहीं है, परमगीत है अस्तित्व का तुम्हारे हाथ में।

तो बाप! स्मृति जागृति का सबसे बड़ा महिमावंत केन्द्र है हमारी नाभि। तो गुरु हमें कन्ट्रोल करता है। जिससे साधन से आप खुद को भूल जाने लगते हैं। तब रुक जाओ, प्राप्ति से भी यात्रा में ज्यादा आनंद है। वो परम चेतना दूर से ही ज्यादा आराम देती है, निकट जाना बहुत कठिन है। इसलिए गुरु की बहुत आवश्यकता है, क्योंकि ये हमें कन्ट्रोल करता है।

तो कुछ बातें इतनी क्लिष्ट होती है कि गुरु ही खोलता है। गुरु तो उदार होता है। जब मिलता है, बीज बो देता है लेकिन बहुत सालों के बाद भी पनपता है; समझ में न भी आए। मेरे कई श्रोता है जो कथा छोड़ नहीं पाते थे लेकिन आलोचना भी करते थे, लेकिन में बोए जा रहा था। आज वो ही कहते हैं, परमानंद आ रहा हैं! क्योंकि अब तुम्हारी स्मृति आई। तुम्हारा दोष नहीं है। कहां चोदह साल की उम्र और कहां बहतरवां साल चल रहा है! फिर भी चौपाईयों ने मुझे बूढ़ा नहीं होने दिया। तो गुरु बीज बो दे फिर स्मृति, समझ सालों के बाद भी आती है।

अरुन पराग जलजु भरि नीकें।
ससिहि भूष अहि लोभ अमी कें।।

अति क्लिष्ट चौपाईयों में से एक है। सीता के विवाह मंडप है। दुल्हा राम और दुलहिनी सीता आमने-सामने बैठे हैं। गुरू बसिष्ठ सब बिप्रवृंद बेदबिधि से गा रहे हैं। उसमें वो क्षण आई-

राम सीय सिर सेंदुर देहीं।
सोभा कहि न जाति बिधि केहीं।

भगवान राम को वशिष्ठजी ने कहा, 'राघवेन्द्र, सीता की मांग में सिंदूर भरो।' स्त्री की महानता यहां पकड़ी जाती है। मेरी मांताए, बहन-बेटियां, गौरव करो अपने स्त्री जीवन का। पुरुष को मेरू पर्वत जीतना हो तो भी तृप्ति नहीं होती है और एक नारी को विवाह मंडप में थोड़ा सा सिंदूर भरो और कहती है, मांग भर गई। अब जगत में कुछ मांग नहीं है। ये केवल मातृशरीर कर सकती है। 'महाभारत' में लिखा है, 'पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।' लड़की कुंआरी हो तब उसका पिता उसकी रक्षा करे और युवान हो तब पति उसकी रक्षा करे। क्योंकि स्त्री आठ वस्तु की रक्षा करती है। 'महाभारत' में ये वर्णन है। लोकयात्रा का रक्षण, धन का रक्षण, धर्म का रक्षण, बालक का रक्षण स्त्री करती है। आठ लक्षण व्यास ने कहा है। मैं मेरी तलगाजरडी आंख से देखूं तो सीता सब कर रही है, इसलिए स्त्री जैसा कोई नहीं। राम का सिंदूरदान देखकर तुलसी की लेखनी रुक गई कि इस शोभा को कैसे बखानुं? फिर गुरुकृपा की ऊंगली छू गई। स्मृति आई व्यास और वाल्मीकि दोनों की। तलगाजरडा का ये कोना कुबेर भंडार था; शंकर वहां लोन लेने आते थे, ऐसी समृद्धि उस कोने में जहां दादा बैठे रहते थे। फिर कोई ऊंगली छू जाती है। हमारा कवि दाद कहता है-

धीरे-धीरे तुं वगाड मारा काळजामां वागे छे टेरवां।

एक कुम्हार की ऊंगलिया सुंदर घट का निर्माण करे और माँ की ऊंगली का स्पर्श शरारत बच्चे को एक क्षण में सुला दे तो आप कल्पना कीजिए कि गुरुदेव की ऊंगलियों में क्या ताकत रही होगी!

राम को सिंदूर देना है तो सर्प जैसी मुद्रा हुई उनके हाथ की। ये मूल बात तो मूरली में से आई। रमण महर्षि का सूत्र है, कोई निमित्त लक्ष्यप्राप्ति का द्वार बन जाता है। एक सूत्र महामंत्र है। जिसके पास विष होता है वो कभी न कभी अमृत चाहता है। रोज दंश देनेवाले भी कभी सोचते हैं कि हम किसी की मूरली पर नाचे। अत्यंत क्रोधी को भी लगता है कि अब ये आवेश छोड़ दूं। सर्प विषधर है लेकिन तुलसी कहते हैं कि सर्प को अमृत का लोभ है। दादा का अर्थ है ये। अब अमृत तो चंद्रमाँ में है तो लाए कैसे? मानो सर्प वहां पहुंच भी गया शंकर के कारण क्योंकि शिव के गले में सर्प और मस्तक पर चंद्र है। सर्प को लोभ है कि थोड़ा अमृत मैं भी पीऊं, दुनिया को ज़हर देते-

देते थक गया हूं। सर्प चंद्र के पास गया तो चंद्र ने कहा, मैं तो अमृत घराना हूं, तू विष घराना है तो मेरे पास क्यों आया? सर्प ने कहा, आप इतने सुंदर है तो सोचा कि आपको टीका कर दूं, सिंदूर लगा दूं।

अरुन पराग जलजु भरि नीकें।
ससिहि भूष अहि लोभ अमी कें।।

रूपक तो देखिए! माँ सीता का चेहरा चंद्र है। और सिंदूर लाल होता है। राम का हाथ कमल जैसा है, उसमें सिंदूर है। लाल पराग का लोभ दूं तो शायद मुझे माँ के चंद्रमुख का अमृत मिल जाए। और राम का हाथ सर्प बना है। राम के हाथ कमल है। राम के हाथ में अच्छे ढ़ंग से पराग भरा है और लाल पराग से चांद को भूषित करना चाहते हैं। इच्छा क्या है इस हाथरूपी सर्प को कि माता सीता के मुखचंद्र का अमृत मुझे प्राप्त हो। बहुत क्लिष्ट है ये। इसके लिए चाहिए गुरुमुख।

तो नाद पहुंचता है; भाषा नहीं, शब्द नहीं। भाषा बहुत कमजोर माध्यम है। तो नाद, ध्वनि का जन्म बाद में हुआ है। सबसे पहले आकाश पैदा हुआ है। वेद का विज्ञान कहता है, ये नितांत खालीपना पहले प्रगट हुआ।

'आकाशात् संभूत वायुः।' आकाश के बाद वायु पैदा हुआ। वो भी सर्वत्र नहीं याने कुछ समय के लिए। फिर आकाश में वायु नहीं दिखता। वायुरहित अवकाश हो तभी आदमी तैरता है। असंगता का प्रतीक कर देता है ये खालीपना। तो आकाश से वायु प्रगट है और वायु अपने-अपने ग्रह के अगल-बगल में वैज्ञानिक नियमानुसर सर्वत्र घूमता है। तो वायु सर्वत्र है लेकिन अपने-अपने केन्द्र की ओर।

'वायोरग्निः।' वेद कहता है, अग्नि प्रगट होता है वायु से। ज्वलन पदार्थ के लिए जो वायु जरूरी है उसीसे अग्नि प्रगट होता है। अग्नि से ताप निकलता है, बादल चढ़ते हैं, बादल से आपः याने जल पैदा होता है। वायु के बिना जल नहीं बनता। जल से पृथ्वी प्रगट होती है। पृथ्वी से मेरी माँ सीता प्रगट होती है। ये है 'मानस-सीता'। वेद तो वहां रुक गया कि पृथ्वी प्रगट हुई। वेद से तलगाजरडा आगे जा रहा है। आलोचना करनी है वो करो! तो मैं निवेदन करना चाहता हूं कि सीता से लव-कुश पैदा हुए; लव-कुश से 'वाल्मीकि रामायण' पैदा हुई। गायन के रूप में विश्व के सामने पहला मंचन हुआ था रामदरबार में। वाल्मीकि आए हैं यज्ञ में और लव-कुश साथ में है। बच्चों को वाल्मीकि ने 'रामायण' सिखाई है। गायन सीखा है जो रामदरबार में आकर लव-कुश ने गाया-

भारत की एक सन्नारी की हम कथा सुनाते हैं।
मिथिला की राजकुमारी की हम कथा सुनाते हैं।

तो लव-कुश से प्रगट हुई 'वाल्मीकि रामायण' और उससे प्रगट हुआ 'रामचरितमानस।' 'रामचरितमानस' के रूप में फिर तुलसी को फिर एक माँ मिली-

तात मात सब बिधि तुलसी की।

और 'रामचरितमानस' से प्रगट हुई 'मानस-सीता।'

'मानस-सीता' में से शांति मिलती है। हम मौज कर रहे हैं। दादा ने दो वस्तु तो आदेश के रूप में कही थी कि स्नान करते समय 'रुद्राष्टक' बोलो और रात्रि के समय आदमी मन, बचन, कर्म से चूक करता है तो जगद्गुरु शंकराचार्य का 'क्षमापन स्तोत्र' बोलो। माँ की स्तुति करके सोना। और दोपरहर को हो सके तो विश्वामित्रकृत 'रामरक्षास्तोत्र' बोलो, क्योंकि धूप उपर हो तभी कोई रक्षा करनेवाला चाहिए। ऐसे रक्षास्तोत्र दुर्गा में भी आते हैं, सीताजी के चरित्र में भी ऐसा रक्षास्तोत्र मिलता है कि हमारे हाथ की रक्षा ये करे, कंधे की रक्षा ये करे, जैसे 'रामरक्षास्तोत्र' में 'पातु राम अखिलं वपुः।'

तो सीता से मिलती है शांति। शंकराचार्य कहते हैं, 'सीता शांति समाहितां।' सीता का एक अर्थ है आराम-विश्राम। सीता राम से अभिन्न है इसलिए 'रामरक्षास्तोत्र' में कहा है-

आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम्।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः।।

तुलसी की मानसिकता जो मैं गुरुकृपा से समझ पाता हूं उसमें ऐसा लगता है कि सीता की अग्निपरीक्षा तुलसी को अच्छी नहीं लग रही है। सीता का दूसरी बार का त्याग तो उसने आलेखित किया ही नहीं। 'मानस' में नहीं है लेकिन तुलसी के अन्य ग्रंथ 'गीतावली', 'कवितावली' में संकेत है। सीताजी लक्ष्मणजी के साथ वाल्मीकि के आश्रम में जाती है तब कौन-कौन रो रहे हैं उसका वर्णन है। और सीता लक्ष्मण को जो संदेश देती है उसकी भी बात है। सीता की यह चिंता है कि मैं कहीं भी जाऊंगी तो मेरी रक्षा राम करेंगे लेकिन मैं जब अयोध्या में नहीं होऊंगी तब राम की रक्षा कौन करेगा? जैसे रमेश पारेख की मीरां कहती है-

गढने होंकारो तो कांगराय देशे,
पण गढमां होंकारो कोण देशे?
राणाजी, हवे तारो मेवाड मीरां छोडशे।

तो 'मानस' में सीता निर्वासन का प्रसंग नहीं है, क्योंकि तुलसी कहते हैं, सीता पवित्रता को भी पवित्र करनेवाली परमसत्ता है। सीता सुंदरता को भी सुंदर करनेवाली परम सत्ता है, सीता प्रेम को भी परमप्रेम में परिवर्तित करनेवाली परम सत्ता है। उसकी अग्निपरीक्षा न की जाए। इसीलए तुलसी 'मानस' में युक्ति करते हैं। जानकी की कसौटी क्यों की गई? करने की जरूरत नहीं लेकिन ये केवल तुलसी की युक्ति है कि मैं पहले सीता को अग्नि में रख दूं और ललित नरलीला समाप्त हो जाए तब जानकी को अग्नि में से वापिस बुला लूं। क्योंकि अग्नि कसौटी अच्छी नहीं लग रही है। राम सीता के वियोग में सहन करे ये भी तुलसी को ठीक नहीं लगता लेकिन ये युक्ति है। लक्ष्मण के वियोग में राम रणमेदान में रोए ये तुलसी को अच्छा नहीं लगता लेकिन मानवीय लीला करनी है इसलिए ये नाट्यमंचन करवाते हैं। फिर भी भगवान मानवीय कमजोरी दिखातें हैं तो कहते हैं, 'जासु कृपा छुटहि मद मोहा।' उसी समय शंकर साक्षी है और पार्वती के पास स्पष्टता करते हैं। राम ने सीता के अग्निप्रवेश की युक्ति बनाई वो भी विश्वास के रूप शिव के द्वारा समर्थन किया, याज्ञवल्क्य या भुशुंडि के द्वारा नहीं।

माँ जानकी उद्भव, स्थिति और संहार करनेवाली है। इसलिए राम को लगा कि मैं ललित नरलीला करने जा रहा हूं तो महत्तत्त्व जो सीता है उसकी सुरक्षा आवश्यक है। और उसकी सुरक्षा में केवल अग्नि ही काम कर सकता है। ये युक्ति राघव की है; तुलसी के राघव, वाल्मीकि के नहीं। ये सब अर्थ त्रिभुवन दादा के हैं। यहां स्मृति खुल रही है। कहां ऐसे अर्थ मिलते हैं? ये तो नीतिनभाई के पद जैसा है; व्यासपीठ को समझकर लिखा गया पद है-

पोथीने परतापे क्यां-क्यां पूगियां?

सीता के विरह में बिलकुल मानव की तरह राम को रुलाते भी है और 'ग्यान गम्य जय रघुराई।' वो राम ऐसा पागलपन करे? लेकिन ये लीला है, जो लोकमंगल के लिए आवश्यक है। पूरा मारीच का प्रकरण और उस में भी सीता को केन्द्र में रखते हुए तुलसी उठाते हैं ये सब मानवीय निरूपण है। सीता अग्नि में प्रवेश कर गई और ऐसी लीला की कि 'लछिमनहु यह मरम न जाना।' लक्ष्मण भी नहीं जान पाए कि ये असली सीता है कि प्रतिबिंब है? सोने के मृग को देखकर कहती है कि ये मृग का चमड़ा बहुत सुंदर है। ये सब नाटक है वरना सीता कभी बोले ऐसा?

सुनहु देव रघुबीर कृपाला।
एहि मृग कर अति सुंदर छाला।

दादा यहां एक-एक शब्द लाते हैं कि बेटा, यहां तीन संबोधन किए हैं सीता ने। पहला संबोधन 'हे देव', फिर 'रघुबीर', फिर 'कृपाला।' लेकिन ये मानवीय लीला है। माया सीता का हरण तुलसी ने बताया है। तो यहां तुलसी कहते हैं, सीता चौथा संबोधन करती है। और शर्त है यहां सीता की वरना तीन संबोधन काफ़ी थे। क्या सूक्ष्म अर्थ दिए हैं तलगाजरडा के कोने ने! सीता ने कहा, 'सत्यसंघ', आप सत्यसंघ हो; सत्य का पालन करना। प्रेम जब शर्त लगाए तब अपहरण की ओर गति करता है। प्रेम में शर्त नहीं होती। प्रेम में वादा निभाओ, न निभाओ ये सामने वाला सोचता ही नहीं। 'सत्यसंघ' लगाने की जरूरत नहीं है। 'रामोविग्रहवान धर्म, साधु सत्य पराक्रम।' उसको सीता

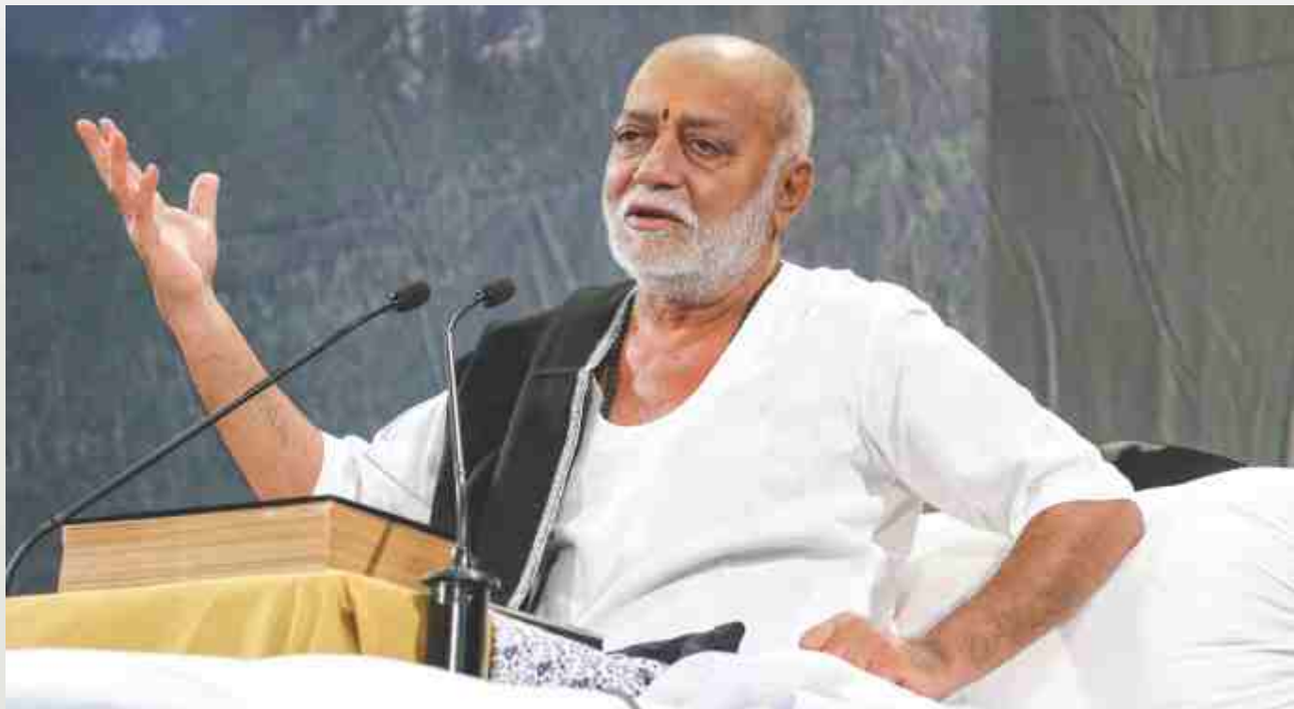

शर्त लगा दे? इस का अर्थ है कि कुछ भी हो, चमड़ा लाओ और सत्य निभाओ। यहां मानो सीता के मन में लोभ जगा है। प्रेम शर्त करे तब दो ही बात होती है, या तो लोभ है, या तो मोह है। लेकिन ये मानवीय स्वभाव का दिग्दर्शन है।

तो ललित नरलीला में सीता ने वादा किया है कि आप जो कहोगे मैं वो करूंगी। इसलिए मानव कमजोरियों का प्रगटीकरण तुलसी करते हैं कि सीता ने शर्त लगा दी। तो सीता के कई रूप हमारे सामने आ रहे हैं। कई शास्त्र भरे हैं सीता के बारे में सोच के। 'महाभारत', 'भागवत' से भी सीता के बारे में सामग्री मिल रही है। 'भागवत' से मिली सामग्री की चर्चा मैंने जामनगर की कथा 'मानस-जानकी' में की है। तेरह साल तक परमात्मा और सीता का जीवन बिलग प्रवाह में था, लेकिन आखिर में लक्ष्य के द्वार को खोलने के लिए सीता निमित्त बनती है।

तो ऐसी माँ सीता का दर्शन कर रहे हैं। सोलह सौ इकतीस में तुलसी ने 'मानस' का संपादन प्रगट किया; अपने गुरू से कथा सुनी। फिर याज्ञवल्क्य महाराज के मुख से कथा का आरंभ करवाया और शिवचरित्र की कथा सुनाई। शिव-पार्वती का विवाह हुआ। उसके बाद शिव कैलास पर बैठे थे। पार्वती जिज्ञासा करती है कि महाराज, मुझे रामतत्त्व क्या है ये बताओ। शिव ने कहा, आपने ऐसी कथा पूछी जो सकल लोक को पावन करनेवाली गंगा है। हे देवी, आप धन्य है। शिव ने पहले रामतत्त्व की चर्चा की फिर राम जन्म के पांच कारण बताए। जय-विजय, सतीवृंदा, नारद प्रकरण, स्वयंभू मनु की कथा और आखिर में प्रतापभानु की कथा। प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण हुआ अपने पूरे कुल के साथ। रावण बनने के बाद उसने कड़ी तपस्या की। दुर्लभ वरदान प्राप्त किए। पूरे संसार में वो आतंक फैलाने लगा। भ्रष्टाचार से जगत भर गया था। दुरित के सिवा कुछ नहीं दिखाता था, ऐसे समय में पृथ्वी अकुला गई और गाय का रूप लेकर ऋषिमुनि सब के पास गई। पितामह ब्रह्मा को अपनी पीड़ा बताई। ब्रह्मा ने कहा, हम सब को जिसने उत्पन्न किया है वो ही हमारी सेवा कर सकता है। सब मिलकर प्रभु को पुकारते हैं। स्तुति सुनकर आकाशवाणी हुई, डरो मत; मैं अवतार लूंगा और मेरे अवतारकार्य से सबकी पीड़ा दूर की जाएगी।

तुलसी हमें श्रीधाम अयोध्या लिए चलते हैं। रघुवंश की परम पुनित परंपरा में महाराज दशरथजी का शासन था। राजा अपनी रानियों से प्यार करता है। रानियां उसको आदर देती है। हरिभजन करते हैं। सब प्रकार से परिवार सुखी है लेकिन एक पीड़ा है, पुत्रसुख नहीं है। महाराज वशिष्ठ के द्वार जाते हैं। गुरु ने कहा, धैर्य धारण करो। चार पुत्रों की प्राप्ति होगी और वो त्रिभुवन प्रसिद्ध होंगे। राजन्, पुत्रकामेष्टि यज्ञ का आयोजन किया जाए। शृंगी ऋषि को बुलाया। प्रेमसहित आहुतियां डाली और आखिर में हाथ में प्रसाद का चरू लेकर यज्ञनारायण अग्नि के रूप में प्रगट हुए हैं। वशिष्ठजी के हाथ से ये प्रसाद की खीर दशरथजी के हाथ में हस्तांतरित हुई। दशरथजी ने प्रसाद रानियों को बांटा। आधा भाग कौशल्याजी को, एक चौथाई भाग कैकईजी को और एक चौथाई के दो भाग करके दोनों रानियों के द्वारा सुमित्रा को दिया। रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी।

कुछ काल बीता। हरि प्रगटने का अवसर निकट आया। त्रेतायुग, चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न का सूर्य, भौमवासर, अभिजित ये सब अनुकूल हुआ। मंद सुगंध शीतल वायु बहने लगी। मणियों की खदाने निकलने लगी। बिना आहुति डाले यज्ञकुंड में से अग्नि प्रज्वलित हो रहा है। सरिताओं में मानो अमृत बहने लगा। गर्भस्तुतियां शुरू हुई। स्तुति पूर्ण करके देवगणों ने अपने-अपने लोक की ओर प्रस्थान किया। परमात्मा राम कौशल्या के भवन में प्रगट होते हैं। माँ परमात्मा को चतुर्भुज से द्विभुज होने का आग्रह करती है। माँ ने कहा, आप बालक बनकर रोईए। राम का प्रागट्य हुआ बिप्र के लिए मानों धर्म के लिए; धेनु के लिए मानो अर्थ के लिए; सुर याने काम के लिए और संत याने मोक्ष के लिए परमात्मा का प्रागट्य हुआ है। बालक का रुदन सुनकर भ्रमित रानियां दौड़ी; दास-दासियां दौड़े। महाराज दशरथजी को जाकर कहा, महाराज, बधाई हो; आपके घर पुत्र का प्रागट्य हुआ है। दशरथजी को सुनकर परमानंद हुआ। वशिष्ठ आदि सब आए और ब्रह्म ही बालक बनकर आया हैं ये सुनकर सब परमानंद में डूब गए। अयोध्या में बधाईयां होने लगी। इस व्यासपीठ से आप सभी को रामजन्म की बधाई हो।

सीता और राधा में सबसे बड़ा भेद ये है कि सीता को हम माता कहते हैं, राधा को हम कभी माता नहीं कहते। राधा उम्र में बड़ी है कृष्ण से और सीता रामजी से उम्र में छोटी है। तो तुलनात्मक अभ्यास पेश किया जाए तो राधा है प्रेमिका और सीता है सेविका। और प्रेम सदैव ही परमात्मा से बड़ा होता है। परमात्मा प्रेम से छोटा होता है। शंकर का सूत्र है, प्रेम से हरि प्रगटता है। तो जिससे परमात्मा प्रगट होता है वो प्रगट करनेवाली वस्तु बड़ी है। राधा बड़ी ही होनी चाहिए, क्योंकि प्रेम है। सेवक हंमेशा छोटा ही रहना चाहता हैं। माँ सीता सेविका है।

सीता कन्या के रूप में साधक, परिणीता के रूप में विषयी और माँ के रूप में सिद्ध है

'मानस-सीता', जिसका हम दर्शन कर रहे हैं। आपने व्यासपीठ से कई बार सुना है बाप! 'मानस' की पंक्ति में ओलरेडी आलेखित है कि जीव के तीन प्रकार है- विषयी, साधक और सिद्ध। यद्यपि तलगाजरडा की रुचि शुद्ध में रही। हम कितने शुद्ध है ये अल्लाह जाने! लेकिन रुचि तो है। ये बात प्रस्तुत करता रहूं। लेकिन शास्त्र विदित तीन प्रकार की जीवश्रेणी-

बिषयी साधक सिद्ध सयाने।
त्रिबिध जीव जग बेद बखाने।।

गुरुकृपा से मेरी दृष्टि में सीता साधक भी है। नरलीला दौरान ये विषयी है। तलगाजरडा जो चौथी श्रेणी की बात करता है उसमें तो जितनी माँ जानकी सीता फीट होती है उससे ज्यादा कोई नहीं। यानी शुद्ध चरित्र, शुद्ध जीवन, शुद्ध कवन सीता का है। लेकिन 'मानस' कथित तीन प्रकार की श्रेणी, मैं उसका विस्तार करके आपसे बातें करूं तो कन्या के रूप में सीता साधक है। मैं विषयी से शुरू नहीं कर रहा। 'मानस' का क्रम विषयी, साधक, सिद्ध, सयाना है। कोई भी कन्या, कन्या काल में होती है तब साधक ही होती है; विषयी नहीं होती। अपवाद छोड़िये। कलिप्रभाव छोड़िये। आज की सोबत और आजकल का टी.वी. कल्चर, इन्टरनेट, जो अभद्र बातें, दृश्य देते हैं इन सभी को छोड़िये। वरना बहुधा किसी भी देश की कन्या, इन में भारत की कन्या तो क्या कहूं? ये साधक है। माँ सीता कन्या के रूप में, जनकसुता के रूप में ये साधक है। सीता कहां से प्रगटी, वो तो हमने ग्रंथों के द्वारा आप के सामने थोड़ा पेश किया शुरू के दिनों में। लेकिन सीता क्या खाती है? क्या पीती है? इसका बाल-बचपन आदि को ज्यादा फ्लेश नहीं किया गया। लेकिन आप ध्यान दें, 'रामचरितमानस' में तो सीता कहां-कहां बैठी उसका आपको स्थान मिलेगा। कहां बैठी सीता? प्रगट तो पृथ्वी से हुई। लेकिन सबसे पहले सीता का दर्शन हम करते हैं तो मानसेतर ग्रंथों में जो रामायण संबंधी ग्रंथ है।

एक प्रसंग हमारे यहां कहा जाता है कि सीता जब छोटी थी तो धनुष को घोड़ा बनाकर उपर बैठती थी। जो शिव ने धनुष दिया था मिथिलेश जनक को जो उसकी सुरक्षा की जाए, पूजा की जाए। तो जैसे बच्चा लाठी का घोड़ा बनाता है, तो सीता धनुष का घोड़ा बनाकर बैठती थी, खेलती थी। और व्यासपीठ ने भी कई बार कहा है, इन धनुष की पूजा होती थी जनक परिवार में एक विशिष्ट पूजागृह में धनुष को रखा था। और रोज वहां गोबर का लिंपन होता था; उसको पंचोपचार जैसे पूजा होती है। और ये गोबर लिंपन की सेवा सीता करती थी। एक दिन सीता के मन में आया कि ये मैं चारों ओर तो गोबर का लिंपन करती हूं लेकिन धनुष के नीचे जो बेठक है वहां तो मैं गोबर नहीं कर सकती हूं। इसलिए सीता एक हाथ से बांये हाथ से धनुष को उठा लेती है और दायें हाथ से वो गोबर का लिंपन करके वो फिर धनुष यथास्थान रख देती है। उसी समय सुनयना ये देख लेती है। तुरंत महाराज मिथिलेश को बुलाया कि महाराज, ये गजब है! परम आश्चर्य है! जो धनुष को यहां स्थापित करने के लिए कितने हाथी जोतने पड़े थे? कितने महाबली को लगाये थे? और सीता शायद सात साल से भी कम उम्र की रही होगी। तो एक हाथ से ये उठाकर के लिंपन करती है! ये कुछ परम शक्ति है, महाशक्ति है। माता-पिता को बहुत आनंद हुआ सीता के इस सहज कार्य से। लेकिन माता-पिता तब से चिंतित भी हो गए कि ऐसी महाशक्ति को ब्याहनेवाला पुरुष बहुत योग्य होना चाहिए। कौन रख पाएगा इस महाशक्ति को? ऐसा पुरुष कहां खोजेंगे? तब जाके निर्णय किया गया कि धनुषयज्ञ रचा जाए और ये धनुष को उठा ले, तोड़ दे उसी को सीता जयमाला पहनाए।

तो तलगाजरडी दृष्टि में सीता धनुष पर बैठती है। और धनुष पर खेलखेल में निर्भार बैठे एक क्रीड़ा के रूप में, एक सहज क्रीड़ा करे वो साधक ही हो सकता है। क्योंकि 'मानस' में आप जानते हैं, धनुष की व्याख्या है विज्ञान। 'बर बिग्यान कठिन को दंडा।' तो धनुष्य है श्रेष्ठ विज्ञान। और ज्ञान-विज्ञान के साथ क्रीड़ा करे वो साधक है। साधक मिलेंगे। आपको मैं साधक मानता हूं; श्रावक मानता हूं; मेरे भाई-बहन कहता हूं; बाप कहता हूं; साहब कहता हूं। किन-किन संबोधनों से मैं आपको बुलाता हूं!

तो सीता साधक है। कन्या साधक है। और साधक वो है जो ज्ञान-वैराग्य से क्रीड़ा करे। 'क्रीड़ा' बड़ा प्यारा शब्द है। खेल नहीं; गेम नहीं; क्रीड़ा। और 'शिवसूत्र' में तो लिखा है 'करुणैव केलि।' करुणा ही जिसकी क्रीड़ा है। तो बाप! जनकसुता के रूप में सीता साधक है। जो ज्ञान से खेल रही है। और मैं कई बार कह चुका हूं कि हम विषयी तो है, इसमें तो दो राय नहीं। हम संसारी है। कथा सुनते-सुनते कम से कम साधक बन जाए। सिद्ध न हो कोई चिन्ता नहीं; होना भी नहीं है। शुद्ध का देश तो बहुत दूर है। लेकिन कम से कम मीडल वे- मध्यमार्ग साधक बने रहे सीता की तरह। साधक ही जीवन के रस को समझ सकता है। मैं आपसे पूछुं कि ये जीवन का अर्थ क्या है? वोट ईज़ मीनिंग ओफ ध लाईफ? लाईफ मानी क्या? सांस लेना? सुबह जलेबी-गांठिया खाना? ये तो सब करना चाहिए। कपड़े पहनो, दफ्तर गए, खेत गए, मैं कथा करने के लिए आ गया शोल डालकर। थोड़ा सोचे। ये किया, ये किया; आहार, निद्रा, भय, मैथुन, क्या जीवन इसीमें है? जीवन क्या? मेरे युवान भाई-बहन! सब करना चाहिए। ये पशु भी करें; इन्सान करें। ये तो हम लोग करते हैं। पशु भी खाते हैं, पीते हैं, झपके लेते है, अपना संसार आगे बढाते हैं। जीवन किसको कहते हैं? तलगाजरडा को पूछो। मैं मेरी जिम्मेवारी से कहूं, चार वस्तु याद रखे मेरे युवान भाई-बहन, मेरे फ्लावर्स! चार वस्तु याद रखे, मेरी दृष्टि उसी को जीवन कहेगी।

एक, जिस जीवन में, जिस ज़िन्दगी में किसी वस्तु का अभाव न हो उसी का नाम है जीवन। अभाव न हो। अब मैं समझकर सूत्रपात कर रहा हूं। क्या दुनिया में अभाव से मुक्त किसी की ज़िंदगी हो सकती है? पैसे होंगे तो प्रतिष्ठा नहीं होंगी। पैसे, प्रतिष्ठा दोनों होंगे तो पत्नी से बनती नहीं होगी। पैसे, प्रतिष्ठा और पत्नी से सुंदर व्यवहार है तो पुत्र नहीं होगा, पुत्री नहीं होगी। यदि ये भी है तो उसके साथ अनबन होगी। अभाव, अभाव, असंतोष, असंतोष, कमियां, कमियां! हम सब के जीवन में। और मैं आज बोल रहा हूं गुरुपूर्णिमा के मेसेज के कारण कि अभाव न हो वो ही जीवन जरा विचित्र लगेगा, विपरीत लगेगा। शिकायतों से भरा जीवन! और लोग इतने शिकायती हो चुके हैं कि आप क्या कहने जा रहे हैं वो सुनने को भी राजी नहीं है। तुरंत गलत अर्थ! कैसे जीवन रस पाओगे? हर जगह शिकायतें, संशय। जीवन का अर्थ है अभाव न हो। जिसको मैं जीवन कह रहा हूं, कैसे हो? अभाव से मुक्ति की मेरी परिभाषा है संतुष्ट जीवन। जो हाल हो, कुबूल कर लो। डकार; स्वीकार। बाकी संतोष न रखने से जनम-जनम अभाव रहेगा; एक जनम नहीं। ये नहीं है, मेरे पास ये नहीं है! केवल संतोष। ये तुलसी का जीवनरस मैं बांट रहा हूं। तुलसी ने लिखा है-

बिनु संतोष न काम नसाही।

बिना संतोष तुम्हारी कामना, तुम्हारी मांग, तुम्हारी अभाव की शिकायतें कभी समाप्त होने वाली नहीं। संतुष्ट हो जाओ, कामना खतम हो जाएगी। ये मुझे भी पक्का करना है। लेकिन कुछ कहने के लिए अधिकारी भी हूं। क्योंकि मैं हर बात को कुबूल करता जा रहा हूं। मैं वहां तक कुबूल करता हूं कि मैं जानता हूं कि मेरे साथ छल हो रहा है फिर भी मैं छला जा रहा हूं। और अल्लाह से प्रार्थना करता हूं कि उसने मुझे छला वो मुझे भूला देना वरना उसके साथ मेरे मन में द्वेष प्रगट हो जाएगा। और द्वेष प्रगट हो तो मेरी भजनधारा कम हो जाएगी। आप इतनी बड़ी कथा सुनते हो। मेरे साथ-साथ चलते हो। मानसिक रूप में मेरे संग-संग रहते हो। इतना क्यों नहीं सीखते? क्यों आग्रह? क्यों जिद्द? बाप से कुछ सीखो, सीखो। मार्ग खुशी का, सुख का पकड़ना है तो संतोष हो। जब तक मांग है, जब तक शिकायत है तब तक सुख नहीं। हम सुख महसूस कर रहे हैं फिर भी इससे मुक्त होने का प्रामाणिक प्रयास नहीं कर रहे हैं। यही तो मूढ़ता है; यही तो जीव की विकृति है; यही तो जीव का सहज अहंकार है।

पहला सूत्र, जिसके जीवन में कोई अभाव न हो। जो स्थिति हो उसमें मौज हो। दूसरा; जिसका जीवन पराधीन न हो-

पराधीन सपनेहूं सुख नाहीं।

जीवन उसको कहते है जिसमें परतंत्रता ना हो। तुम प्रेम करो, किसी को डांटो मत; वो अपने आप तुम्हारे वश हो जाएगा। किसी के जीवन की हत्या क्यों करते हो? और नियम लाद करके? हमारे कवि कागबापू ने कहा था कि-

जगतने बांधनाराओ प्रथम बिस्तर बनी जाजो,
तमारा ए ज बंधनमां, जगत आवीने बंधाशे।

हमें और आपको कितने लोगों के बंधन में जीना पड़ रहा है? उसको खुश करो। और जितना तुम दूसरे को खुश करो इतना वो बहुत बड़ी रस्सी से तुम्हें बांधते जाएंगे। पराधीनता कोई जीवन नहीं। इसलिए आदमी को चाहिए हरेक व्यक्ति को स्वाधीनता दे, स्वतंत्रता दे। हां, तुम्हारी करुणा के कारण समझाओ; प्यार से समझाओ; दुर्भाव से नहीं। मैं इसलिए मेरी व्यासपीठ को जगतभर की समृद्धि से ज्यादा समृद्ध समझता हूं क्योंकि मेरे युवान भाई-बहन, जितने-जितने समर्पित बच्चें हैं मेरे पास; कहते, बापू, कभी भी जान देने की बात आई तो हमें बता देना! गुरु भी यदि चेले को पराधीन करे तो ये कैसा गुरु? गुरु के पास जाता है लोग

मोक्ष के कारण और तू बांध बैठा है! तुने रस्सी डाली है उसके गले में! आया था मुक्ति के लिए और तुने भी कहा था, मैं मुक्ति दूंगा। और डाल रहा है रस्सी? क्या है ये? क्या बेइमानी है धर्म के नाम पर? आप मुक्ति दो। सास अपनी बहू को मुक्ति देना। प्यार से मुक्तता दो ना तो बहू तुम्हारी दासी बन जाएगी।

सब बिधि सानुकूल रह सीता।

सीता का व्यक्तित्व देखो। राजरानी होने के बाद सीता निजगृह पर सब को अनुकूल जीवन जीती है। किसी को पराधीन न रखो। पराधीन जीवन जीवन नहीं है।

तीसरा; जीवन में मूर्छा न हो। कृष्णमूर्ति का ये वाक्य, अवेरनेस; जीवन सभानता से जीया जाए। एक सावधानी; हर कदम पर सावधानी। मूर्छित जीवन जीया जा रहा है। इर्ष्या क्या है? मूर्छा है। ये निंदा क्या है? मूर्छा है। एक दूसरे का द्वेष करते हैं, क्या है? मूर्छा है; होश नहीं है ये। जागो। तीसरा सूत्र है, सावधानी से जीना; होश में जीना। और चौथा और अंतिम सूत्र है, जीवन में नीरसता नहीं होनी चाहिए; जीवन में रस होना चाहिए। चौबीस घंटे आप नीरसता में बैठे हो! नहीं, रस में रहो। हमारा ईश्वर 'रसोवैसः' है। हमारा पिता; हमारा परमात्मा रसरूप है। रसहीन जीवन जीवन नहीं। चीड़-चीड़ करो, मूंह चढ़ाये बैठो, कोई आपको अच्छा न लगे! ये सब क्या है? नीरसता। बाहर आओ। रस चार प्रकार के है। काव्य के नव है। भोजन के छः है।

तो रस भी चार प्रकार का है ये भी समझ लीजिए। एक रस है, जिससे हम सब अभ्यस्त है, भोगरस। और ध्यान देना, हम सबका अनुभव है कि भोगरस का एक स्वभाव है कायम घटते रहना; आदमी उब जाता है। हां, मन की तृष्णा की बात ओर है लेकिन भोग का स्वभाव है नित्य घटना। ये रस ऐसा है, एक समय आयेगा जिसमें तुम डूब जाते जिसके लिए तुम मरते थे वो तुम्हारा भोगरस कम होने लगेगा। शाश्वती नहीं है भोगरस में। भोगरस नित्य घटता है। अरुचि आती है, उब आती है, क्योंकि ये परमात्मा की कृपा है। भोगरस हमें कायम क्षीण करता है ये निर्विवाद सत्य है। हां, मन में भोग की तृष्णा बलवत्तर बढ़ती होती है लेकिन भोगरस आदमी के शरीर को क्षीण करता है।

दूसरा है शान्तरस। शान्तरस सें सामर्थ्य बहुत होता है। शान्तरस एक ऐसा रस है कि कैसी भी सुविधा या असुविधा जीव उपर आये उसकी आंतरिक शांति के कारण वो सामर्थ्यवान रहता है। न असुविधा उसको परेशान करती है, न सुविधा उसको बहका सकती है। दो प्रमाण-

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगं।।

जो निरंतर चलायमान रहता है सागर उसी में शेष के बिछाने पर विष्णु सोता है। शेष के फने की छाया में सोता है और निरंतर चपला लक्ष्मी उसके पैरों में बैठी है। लेकिन शांतरस का सामर्थ्य होने के कारण विष्णु योगनिद्रा में स्थित है। वरना जीवन की लहरें; संसार सागर की तरगें बड़ों-बड़ों को उद्वेलित करती है। और जिसके चरणों मे लक्ष्मी लेटे; धनवान को बहका देती है। बड़ों-बड़ों को भयभीत कर देता है। लेकिन शांतरस के कारण भगवान विष्णु योगनिद्रा में निरंतर रहते हैं। शांतरस में एक सामर्थ्य होता है। दूसरा प्रमाण मेरा 'मानस' का परम फ़कीर परम योगी महादेव। बिलकुल अभाव में जीनेवाला आदमी।

बैठे सोह कामरिपु कैसे।
धरे शरीर शांतरस जैसे।।

शांतरस का अपना सामर्थ्य होता है। भगवान राम को राज मिलने की घोषणा हुई; न कोई खुशी। न वनवास का दुःख। शांत चेहरा प्रसन्न रहा। शांतरस का एक सामर्थ्य होता है। भोगरस कायम घटता है। शांतरस में आदमी भीतर से समर्थ रहता है।

तीसरा रस है भावरस। भाव, गुड फिलिंग्स, एक दूसरे के प्रति अच्छी संवेदनाएं, ये रस है। ये अच्छा है परस्पर भाव हो। ये रस प्यारा है। लेकिन याद रखे मेरे साधक भाई-बहन, भावरस अखंड है लेकिन अनंत नहीं है। ये वाक्य मेरा नहीं है; स्वामी शरणानंदजी का है। हां, याद करूं इस फ़कीर को। ये उसका बोला हुआ मुझे यहां बिलकुल अनुभव में ठीक लग रहा। इसलिए उसको मैं पगे लागूं। भाव अखंड है लेकिन अनंत नहीं। कई लोगों की भावधारा अखंड रहती है लेकिन अनंत नहीं है। और जीवन की जो व्यवस्था है उनमें ये चौथा रस है जिसको व्यासपीठ कहेगी प्रेमरस। भाव और प्रेम में अंतर है। भाव अखंड रहता है, अनंत नहीं रहता। प्रेम अखंड भी रहता है और प्रेम अनंत भी रहता है। प्रेम का अंत नहीं। प्रेम अनंत है। अनंत रस। इसलिए हमारे नरसिंह मेहता ने यहीं मांगा-

प्रेमरस पाने तुं मोरना पिच्छधर
तत्त्वनुं टूंपणुं तुच्छ लागे।

अनंत प्रेम, जिसको तुलसी परम प्रेम कहते हैं। तो बाप!

परम प्रेम पूरन दोउ भाई।
मन बुधि चित अहमिति बिसराई।।

फिर से याद रखें मेरे युवान भाई-बहन, मेरे फ्लावर्स, अल्लाह करे, कभी आप मुरझाये ना। तो ये बातें याद रखना। ये गुरुपूर्णिमा की प्रसादी समझ लेना। एक, ज़िंदगी में अभाव न हो। वो जीवन हो। न शिकायत, न शिकवा। पलपल जो मौज करे। जीवन का पहला सूत्र है, जिसमें अभाव न हो। दूसरा सूत्र है, जो जीवन पराधीन न हो, स्वतंत्र हो। तीसरा सूत्र है, जीवन में सावधानी हो; मूर्छा न हो, बेहोशी न हो। चौथा, जीवन में नीरसता न हो; रसहीन जीवन नहीं। और ये रस चार प्रकार के। भोगरस, भावरस, शांत रस और अनंत प्रेमरस। तो नीरसता नहीं आनी चाहिए। मेरे भाई-बहन, रसिक रहो। लेकिन तथाकथित धर्मगुरुओं ने जीवन को नीरस कर दिया!

तो जीवन में अभाव न हो; संतुष्ट भाव हो। जीवन मूर्छित न हो, जागृत हो। जीवन पराधीन न हो। अपनी मस्ती में जीयो। मर्यादा नहीं तोड़ना है, यस। नीरस नहीं रहना है। तो मेरी समझ में तो जीवन का यही मतलब है। हम विषयी न रहे; कम से कम साधक तो बने। और सीता साधक है क्योंकि सीता धनुष को घोड़ा बनाकर खेलती है। 'बर बिग्यान कठिन कोदंडा।' जो ज्ञान के साथ क्रीड़ा करे, जो वैराग की चर्चा करे।

तो जानकी कितनी जगह पर बैठी उसी की हम चर्चा कर रहे थे। सीता बचपन में शिवधनुष के घोड़े पर बैठी। वो ही सीता जब ब्याही तो डोली में बैठी; शिबिका में बैठी। उसके बाद कहां बैठी? जब विदाई की बात आई तो बारबार मातायें उसको गोद में लेती है। गोद में बैठी सीता। अयोध्या में भी गोद में बैठती है। और वनपथ पर चली तो रथ में बैठी सीता। वहीं से शृंगबेरपुर गई तो सीता केवट की नौका में बैठी। यहीं से पदयात्रा सीता की शुरू हुई और बारह साल, तेरह साल करीब चित्रकूट की यात्रा पूरी हुई। इसके बाद 'अरण्यकांड' में गई तो प्रभु की नरलीला को धन्य करने के लिए सीता अग्नि में बैठी। अग्नि में पलांठी लगाकर सीता बैठ गई। वही सीता अपहृत की गई तब अशोक वृक्ष के नीचे बैठी। वही सीता अग्नि कसौटी से बारह आई तब फिर लंका में राम के पास लाई गई तब फिर डोली में बैठी और उसके बाद सीता पुष्पक विमान में बैठी अयोध्या लौटने के लिए। और उसके बाद मेरी माँ सीता अयोध्या के राज्य सिंहासन पर बैठी। ये सीता का आसन है।

तो कोई भी कन्या साधक है मेरी दृष्टि में। कन्यारूप में सीता साधक है। परिणीता के रूप में सीता विषयी है। ध्यान देना, समझकर सुनना। जिसका सुमिरन करने से दुनिया के सब विषय-विलास नष्ट हो जाते हैं ये रामप्रिया जगजननी है; उसको विषय आकृष्ट नहीं करता। लेकिन वन में रही तो भी आनंद में रही। तुलसी कहते हैं, कैसे रहती है जानकी? जैसे राम इन्द्र हो, सीता सचिव हो और लक्ष्मण जयंत हो। ये दृष्टांत वहां दिया। ऋतुराज कामदेव चल रहा है। और उसकी पत्नी वो चल गई है। और उसका बेटा वसंत चल रहा है। और भरत ने तो अपनी आंखों से देखा कि-

बल्कल बसन जटिल तनु स्यामा।
जतु मुनि बेष कीन्ह रति कामा।।

कन्या सदैव साधक होती है। परिणीता सदैव विषयी होती है। होना चाहिए; उनका दायित्व है। लेकिन माँ सदैव सिद्ध होती है। कोई भी माँ ये सिद्ध होती है। माँ की अवस्था सिद्धावस्था है। यद्यपि सीता तो परम शुद्ध भी है। तो सीता के कई रूप है जिसकी चर्चा इस कथा में हम प्रधानरूप में करते हैं।

'मानस' के मुख्य मुख्य प्रकरणों में तुलसी सीता के ओर नामों की जगह 'सीता, सीता, सीता' शब्द को ही दोहराये जा रहे हैं। सीता अपहरण का प्रसंग लो; मारीचवध का प्रसंग लो। इन सब पंक्तियां आप चुनचुनकर जाओ तो 'सीता बैठी सोच रत अहई।' वहां तक सीता सीता झड़ी बरसाते हैं। 'सुन्दरकांड' में आप देखो तो भी 'सीता-सीता' की शृंखला आपके पास आयेगी। वो वैदेही भी है; वो धरणीसुता भी है; ये जानकी भी है। लेकिन सीता उनका मूल आत्मतत्त्व है। इसलिए तुलसी १४४ बार 'सीता' शब्द का प्रयोग 'मानस' में करते हैं एक गिनती के मुताबिक। नव का अंक बताया गया। इसमें सीतही, सीताराम, उसके बाद 'कवितावली', 'दोहावली', 'रामाज्ञा', 'जानकी मंगल' में, 'सीता', 'सीता', 'सीता', 'सीता'। तो उसी सीता तत्त्व को केन्द्र में रखकर हम और आप उसकी चर्चा में डूबे हैं।

कल हमने रामजन्म का उत्सव मनाया संक्षेप में। सुमित्रा के यहां दो पुत्र प्रगट हुए। कैकेई के वहां पुत्र प्रगट हुआ। चार पुत्रों को प्राप्त कर अयोध्या विशेष धन्य हुई। चारों का नामकरण संस्कार हुआ आराम दे वो राम। सब को भरे वो भरत। दुश्मनी चित्तवृत्ति से निकाल दे वो शत्रुघ्न। और सबका आधार लक्षण के भंडार, रामप्रिय उसको लक्ष्मण कहा। एक के बाद एक संस्कार होते रहे। प्रभु का यज्ञोपवित संस्कार हुआ और वशिष्ठ के पास अल्प काल में विद्याप्राप्त की। फिर विश्वामित्रजी आये। यज्ञरक्षा के लिए राम-लक्ष्मण को लिये चलते हैं। ताड़का का उद्धार किया। विश्वामित्र महाराज के यज्ञ में जाकर के विश्वामित्र का अनुष्ठान राघवेन्द्र और लक्ष्मण ने पूरा किया। कुछ दिन रहे।

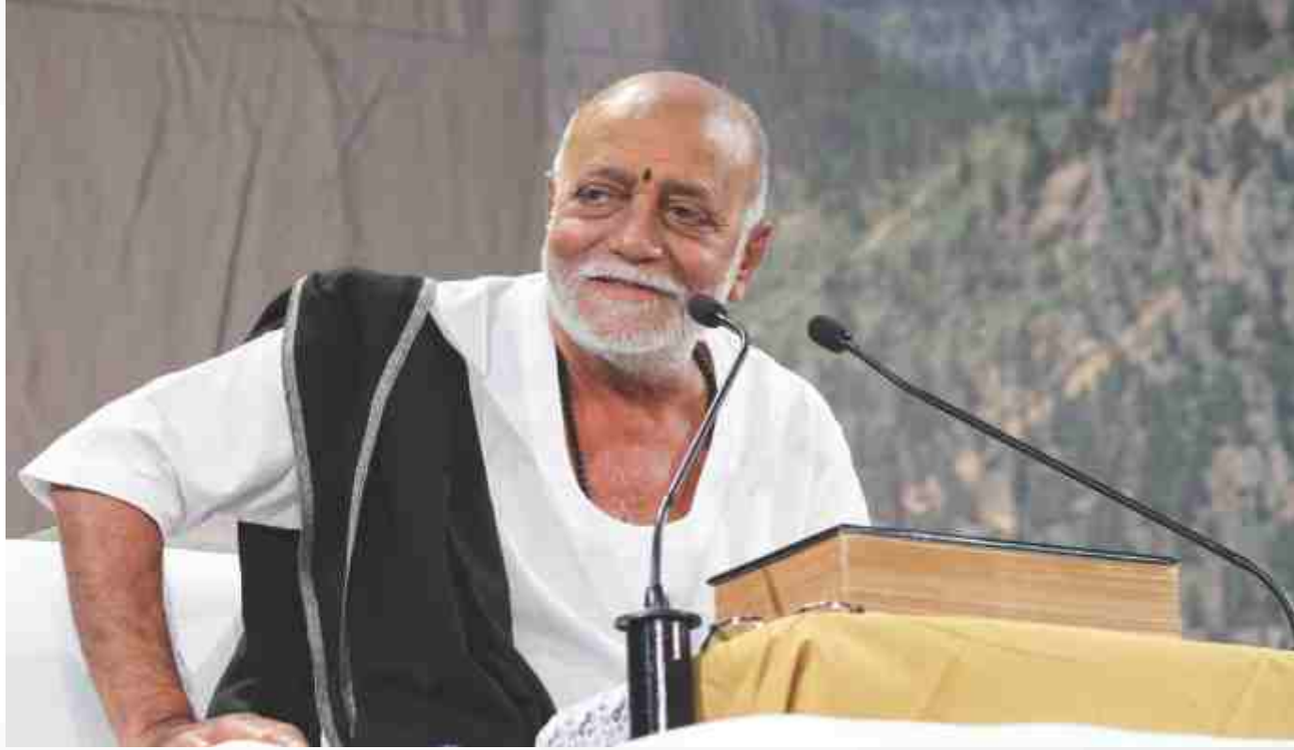

उसके बाद विश्वामित्रजी ने कहा कि एक बड़ा उत्सव धनुषयज्ञ हो रहा है जनकपुर में। राघव, आप कहे तो जाये। तुरंत तैयार हो गये। बहुत बड़ा क्रांतिकारी कदम ठाकुर ने उठाया। वो था एक पतिता का उद्धार। अहल्या का उद्धार किया। गंगास्नान किया। जनकपुर गये। महाराज मिथिलेश स्वागत करके सुंदरसदन में ठहराते हैं। सायंकाल को नगरदर्शन। दूसरे दिन सुबह पुष्पाटिका में फूल लेने जाते हैं। राम-जानकी एक दूसरे को एक दूसरे के हृदय में विराजित करते हैं। सीता ने गौरी पूजा की, आशीर्वाद प्राप्त हुआ। दूसरे दिन धनुषयज्ञ का दिन था। गजपंकजनाल की तरह भगवान राम ने धनुष को तोड़ा। जानकी ने जयमाला पहनाई। परशुराम आये। अवकाश प्राप्त किया। निमंत्रण पत्र लेकर जनकदूत अवध गए। महाराज दशरथ बारात लेकर आये। मागसर शुक्ल पंचमी के दिन सीता-राम का विवाह उत्सव संपन्न हुआ। कुछ दिन रहे। चारों भाईयों के ब्याह हो गए। रास्ते में निवास करते हुए अवध पहुंचे। दिन बीतते गये। महेमानों की विदाई। आखिर में विश्वामित्रजी की विदाई। 'बालकांड' पूरा होता हैं।

'अयोध्याकांड' में राम वनवास और सहचरी सीता, भगवान की लीला सहचरी राम के संग वनवासिनी होती है। सुमंत रथ लेकर गया। शृंगबेर से लौट गया। चरण धुलवाकर गंगा पार की। उसके बाद भरद्वाजजी के पास वहीं से प्रभु आगे वाल्मीकिजी के आश्रम। वाल्मीकिजी से शेष स्थान निर्देश पाकर के चित्रकूट में प्रभु छा गये। यहां सुमंत लौटे। महाराज दशरथजी रामविरह में प्राण त्याग कर देते हैं। भरत आये। पितृक्रिया हुई। राज्यसभा मिली। आखिर में निर्णय, हम सब चित्रकूट जाये। और पूरी अयोध्या को लेकर भरत चित्रकूट गये। यहां से जनकजी भी आये। बहुत बड़ी सभायें हुई। आखिर में प्रेमी ने प्रियतम के चरणों में अपना समर्पण कर दिया, आप प्रसन्न हो वो करियो। पादुका लेकर भरत लौटे। तपस्वी रूप लेकर बैठ गये।

'अरण्यकांड' में सीता-राम की यात्रा आगे बढ़ी लखन सह। अत्रि को मिले। कुंभज को मिले। और आखिर में गीधराज से मैत्री करके पंचवटी में निवास करते हैं। वहां फिर तत्त्वबोध हुआ। शूर्पणखा की घटना आई और खर-दूषण को मोक्ष दिया। रावण सीता के अपहरण की योजना बनाकर आया। यहां सीता अग्नि में समा गई। माया सीता का अपहरण हुआ। रावण सीता को लेकर अशोक वन में बंदी बनाता है। यहां सीता के वियोग में प्रभु रोते हुए मानवलीला करते हुए गीधराज जटायु को गति देकर आगे बढ़े। शबरी के आश्रम में आये। वहीं पंपा सर नारद मिले। 'अरण्य' पूरा हुआ।

'किष्किन्धा' में सुग्रीव और राम की मैत्री हनुमानजी के प्रताप से हुई। बालीवध; सुग्रीव राजतिलक; अंगद को युवराजपद। चातुर्मास मेरे ठाकुर ने प्रवर्षण पर्वत पर किया। सुग्रीव विषयी है। प्रभु को दिया हुआ वचन भूल

गया। भगवान ने थोड़ा भय दिखाया। शरण में आया। सीताखोज की योजना बनाई। सब दिशा में सब को भेज दिया। दक्षिण में मूल नेता है अंगद; मार्गदर्शक है जामवंत। और श्री हनुमानजी आदि सब दक्षिण में। हनुमानजी ने प्रभु को मुद्रिका दी। यात्रा आगे बढ़ती है। समंदर के तट पर संपाति मार्गदर्शक के रूप में आता है। सीता अशोक वाटिका में। कौन जाये? पार जाने में सब को संशय है। हनुमानजी को आह्वान दिया जामवंत ने कि राम के लिए आप का अवतार है। हनुमानजी पर्वत आकार हुए। जामवंत का मार्गदर्शन लेकर हनुमानजी महाराज माँ सीता की खोज करने के लिए निकलते हैं।

'सुन्दरकांड' का आरंभ होता हैं। श्री हनुमानजी महाराज सभी अवरोधों को पार करते हुए लंका में पहुंचते हैं। विभीषण युक्ति बताते हैं। माँ सीता के पास पहुंचते हैं। संदेश दिया। बीच में रावण आदि की कथा आ गई। फल खाये। राक्षस से जरा मुठभेड़ हुई। बंधन हुआ। लंका जला करके हनुमानजी लौट आये। मित्रगण प्रसन्न हुए। सुग्रीव के पास पहुंचे। सुग्रीव आदि सब रामजी के पास गये। अभियान चला। समुद्र के तट पर प्रभु का निवास हुआ। और यहां विभीषण भगवान की शरण में आया। प्रस्ताव आया कि तीन दिन प्रभु व्रत करे। अनशन पर बैठे। समुद्र यदि मार्ग दे तो हम बल का प्रयोग नहीं करे। लेकिन तीन दिन के बाद समुद्र की जड़ता को ठीक करने के लिए परमात्मा ने जरा वो बताया। सागर में ज्वाला उठने लगी। विप्ररूप लेकर मणि का थाल लेकर सागर प्रभु की शरण में आया। सेतुबन्ध का प्रस्ताव कबूल किया।

'लंकाकांड' में सेतुबंध हुआ और फिर रामेश्वर भगवान की स्थापना की गई। भगवान की सेना लंका में पहुंचती है। रावण का अखाडा; मनोरंजन; रसभंग। सुबह अंगद राजदूत के रूप में संधि का प्रस्ताव लेकर गया। संधि असफल। युद्ध अनिवार्य। एक के बाद एक एक राक्षस का निर्वाण होता। रावण का निर्वाण हुआ। मंदोदरी ने शोकांजलि समर्पित की। स्तुति की। रावण का संस्कार हुआ। विभीषण को राजतिलक। रामविजय हुआ। जानकीजी को खबर दी गई और अग्नि में समायी सीता को वापस लाया गया। पुष्पक विमान तैयार हुआ। भगवान राम, जानकी, लखन सब विमान में बैठे। सेतुबंध का दर्शन। कुंभज आदि महात्माओं को मिलते हुए चित्रकूट भी गये। हनुमानजी को अयोध्या भेजा। प्रभु शृंगबेरपुर आये। निषादराज मिले। और तुलसी ने वहां 'लंकाकांड' पूरा किया।

'उत्तरकांड' के आरंभ में भरत की विह्वल दशा में श्री हनुमानजी खबर देते हैं, भगवान आ रहे हैं। हनुमानजी के समाचार सुनकर भरत मानो सजीव हो गये! पूरी अयोध्या में आनंद फैल गया। भगवान का विमान अयोध्या उतरता है। सब मित्रगण मनुष के रूप में नीचे उतरे और भरत और राम जब भेंटे, कोई निर्णय नहीं कर पाया कि दोनों में कौन वनवासी थे? वशिष्ठजी को प्रणाम किया। और प्रभु ने अपने ऐश्वर्य दर्शन करवाया। भगवान निजभवन आते हैं। माँ कैकेयी का संकोच निवारण किया। सुमित्रा को प्रणाम। कौशल्या को प्रणाम। सीता को देखकर सास लोग थोड़ी दुःखी हो गई। सबको स्नान करवाया। वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों को कहा कि आज ही राजतिलक कर दें? अब कल का भरोसा न करे। राज्यपोषाक पहनाया गया। दिव्य सिंहासन मंगवाया। वशिष्ठजी के अनुशासन में भगवान को शासन करने का आदेश हुआ। राम-जानकी पृथ्वी को, प्रजा को, दिशाओं को, गुरुजनों को, ब्राह्मणों को, सखाओं को सूर्य को, माताओं को सब को प्रणाम करके गादी पर विराजमान होते हैं। पहला रामराज्य का तिलक वशिष्ठजी ने किया।

रामराज्य की स्थापना हुई। वेदों ने आकर परमात्मा की स्तुति की। उसके बाद भगवान शंकर आये। स्तुति करके शिव कैलास गये। छः मास बीत गये। सिवाय हनुमान ओर सब मित्र बिदा हो गये। तुलसीदासजी ने दिव्य रामराज्य का वर्णन किया। फिर राम और सीता की नरलीला का जिक्र किया। सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया, लव और कुश को। तीनों भाईयों के घर भी दो-दो पुत्र हुए। और रघुवंश के वारिस को दिखाते हुए तुलसी ने रामकथा को वहां विराम दिया। उस के बाद जो घटनाक्रम है उसकी चर्चा हम कल करेंगे और नव दिवसीय रामकथा 'मानस-सीता' को हम विराम देंगे।

कोई भी कन्या साधक है मेरी दृष्टि में। कन्यारूप में सीता साधक है। परिणीता के रूप में सीता विषयी है। ध्यान देना, समझकर सुनना। जिसका सुमिरन करने से दुनिया के सब विषय-विलास नष्ट हो जाते हैं ये रामप्रिया जगजननी है; उसको विषय आकृष्ट नहीं करता। लेकिन वन में रही तो भी आनंद में रही। कन्या सदैव साधक होती है। परिणीता सदैव विषयी होती है। होना चाहिए; उनका दायित्व है। लेकिन माँ सदैव सिद्ध होती है। कोई भी माँ सिद्ध होती है। माँ की अवस्था सिद्धावस्था है। यद्यपि सीता तो परम शुद्ध भी है।

सीता शक्ति, भक्ति, व्यक्ति और शांति है

बाप! इस रमणीय भू भाग में स्वान्तः सुखाय आयोजित यह नव दिवसीय रामकथा में जिन युवान भाई-बहनों ने तजुना सेवा दी है, शरीर सेवा दी है इन सभी भाई-बहनों को मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। विराम के दिन की कथा का प्रारंभ कर रहे हैं। पुनः एक बार व्यासपीठ से आप सभी को मेरा प्रणाम।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।।

सर्वश्रेय करनेवाली सीता के शरण में जाएगा उसके समस्त क्लेश को हरनेवाली, हमारे हृदय में शुभ का उद्भव करनेवाली, उसका श्रेय करनेवाली, पालन करनेवाली भी; और जब कोई शुभ उदित होता है तो अशुभ का खतरा भी रहता है। जैसे वर्षाऋतु में बाजरी बोते हैं तब न बोया हुआ बेकार घास भी निकालना पड़ता है। तो जो बेकार निकला है उसका संहार करनेवाली, रामवल्लभा माँ सीता को गोस्वामीजी कहते हैं, मैं प्रणाम करता हूं।

इन दिनों में सहज प्रवाह चला और 'रामचरितमानस' अंतर्गत भगवती सीता का दर्शन करने का इन सबको मंगल अवसर मिला। निमित्त हुई जिसका मनोरथ था वो सीतेशरणजी। शास्त्रों में बुद्धरूप में सीता की चर्चा है। मैं बहुत जिम्मेवारी से बोल रहा हूं। कहां-कहां पहुंचूं? बहुत लिखा गया। यथासमय जिसको उसका स्वाध्याय करना हो वो उसको एकत्रित करके उसका विशेष स्वाध्याय कर सकते हैं। गोस्वामीजी ने भी अपने सभी ग्रंथों में सीताजी का भूरीशः दर्शन किया है। 'दोहावली रामायण' में तुलसी ने जो सीता का वर्णन लिखा है वो मुझे भेजा गया हरीशभाई बरोडावाले ने। मैं उसको पढ़ लूं आपके सामने; उसका स्वाध्याय सार्थक हो।

सीता लखन समेत प्रभु सोहत तुलसीदास।
हरषत सुर बरषत सुमन सगुन सुमंगल बास।।
पंचबटी बट बिटप तर सीता लखन समेत।
सोहत तुलसीदास प्रभु सकल सुमंगल देत।।
सेये सीता राम नहिं भजे न संकर गौरि।
जनम गँवायो बादिहीं परत पराई पौरि।।
सीताचरन प्रनाम करि सुमिरि सुनाम सुनेम।
होहिं तीय पतिदेवता प्राननाथ प्रिय प्रेम।
तुलसी सहित सनेह नीत सुमिरह सीताराम।।

यह केवल कविता नहीं है; दोहा नहीं है। किसी ने भी सीता का किसी रूप में आश्रय किया है; खरा अनुभव हुआ है; सुलभ सिद्धि है। तो 'दोहावली' में सीता का स्मरण है। 'कवितावली', 'गीतावली', 'विनयपत्रिका' में है; 'रामज्ञा' में है; 'जानकी मंङ्गलम्' में है। कहां नहीं है? और 'मानस' तो भरा पड़ा है 'सीता, सीता, सीता।'

तो वाल्मीकि की आंखों में सीता का दर्शन, तुलसी की आंखों में सीता का दर्शन, उपनिषद की दृष्टि में सीता का दर्शन, व्यास के नेत्रों में सीता का दर्शन, श्लोकों में सीता का दर्शन, कुछ तलगाजरडी आंखों में भी सीता-दर्शन। आज आखिर में कागभुशुंडिजी की आंखों में सीता क्या है, उसको देखकर माँ सीता का दर्शन करके हम इस नौ दिवसीय कथा को विराम देंगे।

कल अति संक्षेप में 'हरि अनंत हरि कथा अनंता।' का हमने बहुत संक्षेप में बोल दिया। रामराज्य की स्थापना हो गई। उसके बाद तो कागभुशुंडिजी का चरित्र है। भवानी ने भुशुंडिजी के बारे में प्रश्न किया कि उसको कौए का शरीर क्यों मिला? उसका कल्पांत में भी नाश क्यों नहीं है? क्या कारण काम कर गया? बहुत से प्रश्न पूछे। आपने भुशुंडिजी के पास जाकर कब कथा सुनी? बड़े-बड़े मुनियों को छोड़कर आपने कौए से क्यों सुना? और इन प्रत्येक प्रश्न का भगवान शिव भवानी को जवाब देते हैं। देवी, दक्षयज्ञ में जब आपने योगानल में अपना देह विलीन कर दिया तब हे प्रिये, तुम्हारे विरह में मैं बावरा हो चुका था। 'सती-सती-सती' करके तुम्हारा आधा जला हुआ अंग लेकर मैं पृथ्वी पर घुमा। तुम्हारे जले हुए अंग में से जहां-जहां अंग गिरा वहां एक-एक शक्तिपीठ का सर्जन हुआ। यह सब होने के बाद आप के विरह में मैं दुःखी रहा। इन दुःख को भूलने के लिए कभी मुनियों के पास बैठकर भगवतचर्चा सुनता था; कभी मुनियों को रामकथा सुनाता था। फिर एक बार चलता-चलता मैं नीलगिरि पर्वत पर जा पहुंचा, जहां बाबा भुशुंडि निवास करते हैं। कथा आरंभ का समय था। वट के वेदिका पर कागभुशुंडिजी विराजमान; कई विहंग बैठे थे। हंस और कई प्रकार के पक्षी कथा सुन रहे थे। उसी समय मैंने सोचा कि शिवरूप में यदि मैं जाऊंगा तो शायद भुशुंडिजी कथा न करे; सन्मान आदि में वो करे। इसलिए मैंने हंस का रूप लेकर आखिरी पंक्ति में बैठकर कथा सुनी। भुशुंडि को काक का स्वरूप क्यों लेना पड़ा? उसमें पूरे कागभुशुंडिजी का चरित्र। महाकाल के मंदिर में गुरु अपराध। उसके द्वारा मिला महाकाल का श्राप और श्राप से व्यथित हुआ उसका बुद्धपुरुष साधुचरित यह गुरु ने अपने शिष्यों को भयंकर शिव शाप से मुक्त करने के लिए 'रुद्राष्टक' का गायन किया।

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।

करालं महाकाल कालं कृपालं। गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।

यह जो सावन मास में तुलसी जंयती आएगी तब तलगाजरडा में हनुमानजी के समीप तुलसी, वाल्मीकि और व्यास एवॉर्ड दिये जाते हैं। इन में एक एवॉर्ड यहां के हालेन्डा के प्रोफेसर को ऑलरेडी दे चुके हैं। एक एवॉर्ड शास्त्रीजी को भी घोषित किया है। मेरे मन में उठ रहा है, जब यह शिवस्तुति चल रही है तब तीसरा एवॉर्ड मेरी रामकथा के समस्त श्रोताओं को दिया जाए। इतने सालों से जो मुझे पी रहे हैं वो एवॉर्ड के अधिकारी है। आप सब दुनियाभर में जितने भी जो मेरे 'मानस' श्रोता हैं इन सभी जिन्हों ने 'मानस' की चोपाईयां गाई है, उस में गोता लगाये हैं, उसमें भीगे हैं वो सभी मेरे छोटे-बड़े श्रोताओं को। यह श्रोताओं के प्रतिनिधि किसको बताऊं? सबसे बड़ा श्रोता का प्रतिनिधि है भगवान विश्वनाथ महादेव! तो यह तीसरा एवॉर्ड श्रोताओं को समर्पित है। और श्रोताओं का प्रतिनिधि भगवान विश्वनाथ को यह एवॉर्ड, पत्रिका, राशि हम विश्वनाथ काशी पहुंचा देंगे। महादेव, यह तू स्वीकर। अभी-अभी 'रुद्राष्टक' गाते-गाते कोई ऊंगली टच कर रही है इसलिए एकबार का यह एवॉर्ड मेरे श्रोताओं को दिया जाए; श्रोताओं के नायक विश्वनाथ को। और जिस विश्वनाथ का एक रूप महाकाल है उसकी स्तुति कागभुशुंडि ने की है।

गुरु ने 'रुद्राष्टक' गाया। शिव प्रसन्न हुए। भुशुंडि को शापानुग्रह किया। बहुत जन्म लेने पड़े भुशुंडि को। उसके बाद मनुष्य का रूप मिला। जनम-जनम की स्मृति रही। राम में लयलीन लोमस मुनि से मुलाकात हुई। वहां थोड़ा वाद-विवाद हो गया और लोमस ने श्राप दिया कि तू चांडाल पक्षी हो जा। भुशुंडि को कौए का श्राप मिला और फिर वो कौए का शरीर छोड़ना नहीं चाहते। मुझे इस रामभक्ति कौए के शरीर से प्राप्त हुई है। इसलिए मैं यह शरीर छोड़ना नहीं चाहता। इच्छा मरण; विश्वनाथ का पहला इच्छा मरण भुशुंडि है; दूसरा इच्छा मरण 'महाभारत' का कर्ण है क्योंकि उसने इच्छा मरण मांग लिया कवच-कुंडल देकर। तीसरा इच्छा मरण है पितामह भीष्म। तो वो कागभुशुंडि के पास भवानी का प्रश्न था कि आप तो गये लेकिन गरुड क्यों गये? भगवान विष्णु का यान है, ज्ञान है उसको भुशुंडि के पास क्यों जाना पड़ा? तब शिव कहते हैं, देवी, मेरा एक सूत्र है, तुम किसी को ज्ञानी और मूढ़ का प्रमाणपत्र मत दिया करो। शिवजी ने तुरंत बात को काटकर कहा, इस संसार में न

कोई ज्ञानी है, न कोई मूढ़ है। परमात्मा जब जिसको जैसा बनाना चाहे वैसा वो हो जाता है। एक क्षण में ज्ञानी मूढ़ होते हुए इतिहासों में लोगों ने देखा है और एक क्षण में कालिदास जैसे महामूढ़ पंडित बनते हुए इतिहास उसकी गवाह देता है। कौन ज्ञानी? कौन मूढ़? एक ट्युबलाईट है उसमें विद्युत पास करो तो वो उजाला देगी; विद्युत गया तो फिर वोही की वोही। एक चेतना का प्रवाह व्यक्ति की दिशा बदलता है।

गरुड महाज्ञानी था वो क्यों सुनने गया? फिर कहा कि लंका के मैदान में इन्द्रजित और राम का युद्ध हुआ। इन्द्रजित ने भगवान राम को नागपाश बाण में बांध दिया तब नागपाश से मुक्त करने के लिए गुरुड को भेजा गया। गरुड का खोराक शाप है। गरुड रणमैदान में भगवान को नागपास से मुक्त करता है। गरुड के मन में शक प्रवेश गया कि राम बंध गये और मेरे से उसको मुक्ति मिली! मन में एक उहापोह लेकर फिर कहीं चैन न पड़े। फिर नारद के पास, ब्रह्मा के पास, शिव के पास गया। भवानी को कहा, फिर मेरे पास आया, बताओ, भगवान क्यों बंधे? राम बंधे क्यों? भगवान शंकर कहते हैं, उस समय रास्ते में मुझे गरुड मिल गया। गरुड को कहा, तुम मार्ग में मिले हो। मैं कैसे ब्रह्मतत्त्व की चर्चा करूं? आप एक काम करो, जहां निरंतर रामकथा होती है वहां मैं तुम्हें भेजूं। वहां तुम्हारा संशयभंग होगा। कहां? बोले, उत्तर दिशा में नीलगिरि पर्वत है; वहां कागभुशुंडि नामक एक परम बुद्ध निवास करते हैं। तू पक्षी का राजा है यह बड़प्पन लेकर मत जाना; शरणागत बनकर जाना। वहां कथा सुनो। तुम्हारे संशय का नाश होगा।

दूसरा; देवी, मैं समझा भी सकता था लेकिन सोचा कि किसी को अभिमान होता है तो भगवान उसको तोड़ना चाहते हैं, इसलिए मैंने कौए के पास भेजा। एक श्रेष्ठ को निम्म के पास भेजा। और तीसरी बात भवानी यह भी कि पक्षी पक्षी की भाषा जाने इसलिए मुझे लगा कि वो खग के पास खग जाए तो अच्छा रहेगा। गरुड वहीं से सीधे आये। एक बात ध्यान रखना, कोई आपको मन के संदेह का निवारण का पारमार्थिक उपाय बताये तब इधर-उधर भटकना मत। जहां बताया हो वहां सीधे चले जाना। कहीं देर ना हो जाए। सीधे उडान भरी नीलगिरि। और यहां भुशुंडि कथा का प्रारंभ करने जाए उसी समय खगपति का आगमन हुआ। 'नाथ कृतारथ भयउ मैं तव दरसन खगराज।' हे खगपति, आज मैं धन्य हो गया। 'सदा कृतारथ रूप तुम्ह।' जिसकी प्रशंसा शिव ने की। मैं आज धन्य हो गया। महाराज, आज आप आदेश करो, मैं क्या सेवा करूं? तब कहा कि मुझे रामकथा सुनाओ। भुशुंडि गरुड को मुख्य श्रोता बनाके रामकथा सुनाते हैं। उसीमें सीता के चार रूप प्रस्तुत करते हैं। कौए की एक आंख होती है। जब से जयंत की एक आंख फोड़ ड़ाली है, कौए की एक आंख होती है। एक आंख का मतलब है, बुद्धपुरुष का एक ही दृष्टिकोण होता है; उसमें द्वैत नहीं होता। अद्वैत विचारधारा यह बुद्धपुरुष की स्वभावजन्य स्थिति होती है। सब में एक को देखे, केन्द्र में देखे। तो यह बुद्धपुरुष का बहुत बड़ा लक्षण है। तो वो एक दृष्टिवाला जहां द्वैत नहीं है। 'मानस' में लिखा है, आदमी को क्रोध आता है द्वैत के कारण। यह कौए का शरीर मिला तो कभी क्रोध नहीं किया। क्रोध उसके गुरु ने किया था। और क्रोध में चांडाल पक्षी का श्राप दे दिया था लोमस ने। तो एक दृष्टि है वो अपनी निःद्वंद्व दृष्टि में माँ सीता को चार रूप में भुशुंडि अपनी 'रामायण' में देखते हैं। उसीका आखिरी दर्शन हम करें। पहला दर्शन कागभुशुंडिजी का है-

पुनि माया सीता कर हरना।

श्री रघुबीर बिरह कछु बरना।।

निःद्वंद्व दृष्टि है जिसकी एक कागऋषि सीता का पहला दर्शन करता है शक्ति के रूप में। 'पुनि माया सीता।' वहां सीता माया है। और माया बहुत बड़ी शक्ति है। 'भगवद्गीता' कहती है, 'गुणमयी मम माया दुरत्रया।' अर्जुन, मेरी माया बहुत गुणवाली है आदिशक्ति परमात्मा की उसका एक अर्थ है माया। क्योंकि बहुत शक्ति माया की है। भगवान शंकर का वक्तव्य क्या है माया के बारे में 'मानस' में? शंकर क्या कहते हैं?

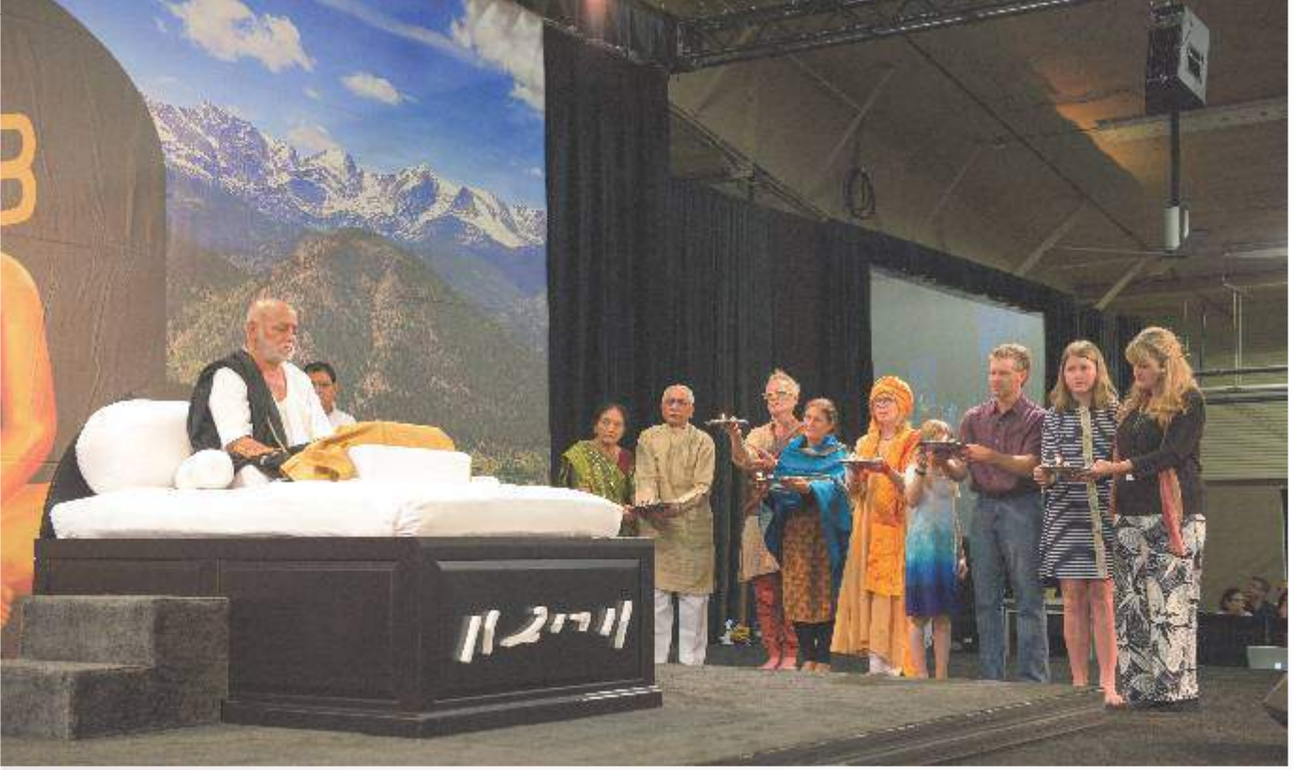

बोले बिहसि महेस तब ग्यानी मूढ न कोइ।

जेहि जस रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छन होइ।।

जिसने मेरी अर्धांगिनी सती की बुद्धि में भी संशय डाल दिया! इस बलवती माया की, हरि की माया की सराहना करते हैं। 'अतिसय प्रबल देव तव माया।' भुशुंडिजी की दृष्टि में सीता माया है। माया मानी बड़ी शक्ति है। पूरा जगत माया से प्रगट होता है। कबीर साहब कहते हैं, 'माया महा ठगनी हम जानी।' वो कभी शिव के घर शिवानी है; ब्रह्म के घर भवानी है। तो मेरे भुशुंडिजी की वो निःद्वंद्व दृष्टि सीता को शक्ति कहते हैं।

आदि शक्ति जेहि जग उपजाया।

सोहि अवतेरी मोर यह माया।।

तो कागभुशुंडिजी की दृष्टि में सीता शक्ति है। दूसरी कागभुशुंडि की दृष्टि में सीता भक्ति है। और भक्ति की खोज करनी पड़ती है। कागभुशुंडिजी अपनी 'रामायण' में कहते हैं, सीता को खोजने के लिए बंदरों, भालुओं को दसों दिशाओं में भेज दिये गये हैं। और याद रखना, शक्ति सबके पास है; इसी शक्ति का सद्उपयोग करके भक्ति की खोज करनी है। छोटी-बड़ी सब में शक्ति है।

जेहि बिधि कपिपति कीस पठाए।

सीता खोज सकल दिसि धाए।

कागभुशुंडिजी कहते हैं, भक्ति की खोज़ करो। विलबं न करो। जल्दी करो, जल्दी करो। भक्ति की खोज करो। दसों दिशाओं में करो। कहीं से भी मिले। भक्ति को खोजो। कथा में मिले तो कथा में; ध्यान में मिले तो ध्यान में; जप में मिले तो जप में; तीर्थ में मिले तो तीर्थ में। मेरे कागभुशंडि बाबा की आंख में सीता भक्तिरूपा है। पहला रूप है शक्ति का यानी माया का। दूसरा रूप है भक्ति का। तीसरी दृष्टि भुशुंडि बाबा की।

लंका कपि प्रबेस जिमि कीन्हा।

पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा।

यहां सीता है व्यक्ति। तो भुशुंडि कहते हैं, सीता शक्ति है। शक्ति के रूप में बलवान है। भक्ति खो गई है उसको त्वरित खोजो। हमारे गुजराती में मरीज़ साहब का एक शे'र है-

जिंदगीना रसने पीवामां करो जलदी मरीज़,

एक तो ओछी मदिरा छे ने गळतुं जाम छे।

व्यक्ति के रूप में सीता को 'धीरज दीन्हा।' व्यक्ति को धैर्य देना पड़ता है। भक्ति की खोज करनी पड़ती है। शक्ति का गायन किया जाता है। गुरुकृपा से सिद्ध करूं। वन में भगवान के साथ जाने के लिए जब सीता जीद करती है तब भगवान वहां धीरज देते हैं। वहां सीता व्यक्ति है। पहले शारीरिक दुःख दिखाते हैं। सीता, वन में आने से बहुत कष्ट होगा। कोई जल्दी करे, कोई भाव में आ जाए तो उसको धीरज देने के लिए, उसको ठीक करने के लिए शारीरिक कष्ट का भय दिखाया जाता है।

कुस कंटक मग कांकर नाना।

चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना।।

हंसगवनि तुम्ह नहिं बन जोगू।

सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू।।

वहां शरीर को कष्ट होगा। आप राजकुमारी है मिथिला की, आपने वनवास के आपस-तापस सहा नहीं। तुम्हारे शरीर को कष्ट पड़ेगा। सीता उसका प्रतिउत्तर देती है। फिर मानसिक दुःख गिनाते हैं। हिंसक पशु का डर, ऐसे-ऐसे शरीर कष्ट, मनोकष्ट आदि-आदि बड़ा मनोवैज्ञानिक भय राघवेन्द्र बताते हैं। क्रमशः पंक्तियों से उसको गुरुकृपा से समझें। वहां सीता को किसी न किसी व्यक्ति के रूप में समझाने की चेष्टा है। जब कोई व्यक्ति है तब समझाओ। भक्ति है तो खोजो। माया है तो उसके बल को समझ लो कि बड़ों-बड़ों को उसकी माया ने परेशान किया है। कोई घर में घटना घटे तो हम क्या करते हैं? धीरज ही देते हैं, अरे भाई, छोड़ो ना! हो जाएगा। धीरज जरूरी है। तो व्यक्ति को धीरज, भक्ति की खोज, माया-शक्ति का गायन और मायापति का आश्रय। निःद्वंद्व दृष्टि का पहला निर्णय।

चौथा रूप सीता का कागभुशुंडिजी की दृष्टि में है शांति।

सीता रघुपति मिलन बहोरी।

सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी।।

दो विरही आत्मा इकठ्ठी होती है तो शांति छा जाती है। सीता और राम का पुनः मिलन। देवताओं ने आकर स्तुति की। वहां मेरी माँ जानकी का रूप है शांति। शांति मिलन से होती है। वियोग में अशांति होती है। तीन प्रकार का मिलन होता है साहब! एक देह-मिलन; उस में भी शांति है विषय भोगी लोगों को; क्षणभंगुर है यद्यपि। दूसरी मन-मिलन की शांति। मन मिल जाए; एक-दूसरे के मन की शांति होती है और दीर्घायु हो जाती है। स्थूल रूप में आप श्रोता है; मैं वक्ता हूं। हम सब बैठे हैं। शरीर से रोज मिलते हैं।

काळनी केडीए घडीक संग,

रे भाई, आपणो घडीक संग;

आतमने तोय जनमोजनम लागी जशे एनो रंग!

-निरंजन भगत

कल कोई इधर जाएंगे; कोई उधर जाएंगे; स्वामीजी उधर जाएंगे।

तो तीन प्रकार के मिलन होते हैं मेरे भाई-बहन। एक देह-मिलन; एक देव मिलन-देवता का मिलन। और मन देवता है। कृष्ण कहते हैं, इन्द्रियों में मन मैं हूं। मन मेरी विभूति है। मन है देवता।

मन ही देवता, मन ही ईश्वर,

मन सब का आधार।

तो दूसरा है देव-मिलन। मन देव है। मन का मिलन। हम देह का मिलन करते हैं; मन का कहां मिलन करते हैं? मन का मिलन हो। लेकिन मन को सुख-दुख होता है। मन को भला-बुरा लगता है। मन को मान-अपमान की असर होती है। यह सब द्वन्द्व मन को छुता है। मन-मिलन तलाक लेता है। तुम्हारे मन के साथ हमारे मन का नहीं मेल खाता। तन का मिलन तो बिलकुल लम्हों में समाप्त! मन का मिलन थोड़ा दीर्घायु है। स्वागत। शाश्वत मिलन है आत्म-मिलन। आत्म-मिलन बिना शांति नहीं।

माँ सीता को चार रूप में भुशुंडि अपनी 'रामायण' में देखते हैं। कागऋषि सीता का पहला दर्शन करता है शक्ति के रूप में। भुशुंडिजी की दृष्टि में सीता माया है। माया मानी बड़ी शक्ति है। सीता का दूसरा रूप है भक्ति का; सीता भक्तिरूपा है। तीसरा रूप है व्यक्ति का। व्यक्ति को धैर्य देना पड़ता है। और चौथा रूप सीता का कागभुशुंडि की दृष्टि में है शांति। सीता और राम का पुनः मिलन। देवताओं ने आकर स्तुति की। वहां मेरी माँ जानकी का रूप है शांति। तो मेरे बाबा भुशुंडि की आंखों में सीता के चार रूप है। एक है शक्ति। दूसरी है भक्ति। तीसरी है व्यक्ति। और चौथी है शांति।

सीता रघुपति मिलन बहोरी।

किसके साथ सीता का मिलन है? 'आत्मा रामौ बिराजते।' -शंकराचार्य। आत्मा राम के साथ सीता का मिलन वोही शांति का प्रतीक। मिलन से शांति का उद्‌भव होता है। यह हम बोलते हैं, आप सुनते हैं। हम सब शांति से नौ दिन बातें करते हैं। क्या हमको शांति नहीं मिलती? क्योंकि यह मिलन मन का मिलन है। तीसरा आत्म-मिलन। मेरे भाई-बहन, आत्म-मिलन शांति का प्रतीक है। रामराज्य मानी शांति का शासन। कोई हडबड़ी नहीं। 'सीता रघुपति मिलन बहोरी।' मेरे बाबा भुशुंडि की आंखों में सीता के चार रूप है। एक है शक्ति। दूसरी है भक्ति। तीसरी है व्यक्ति। चौथी है शांति। 'मानस' क्या नहीं देता यारों!

कागभुशुंडि ने कथा सुनाई। गरुड वैकुंठ गये। याज्ञवल्क्य ने कथा को विराम दिया कि नहीं वह बिलकुल स्पष्ट नहीं है। गौरीशंकर भगवान महादेव भवानी को कथा सुना रहे थे। पार्वती से पूछते हैं, देवी, अब कुछ सुनना है? भवानी ने कहा, हे विश्वेश्वर, मैं कृतकृत्य हो गई। मेरे मन में रामभक्ति उपजी है। 'बीते सकल कलेस।' महादेव ने भवानी के सामने कथा को विराम दिया। मेरे कलिपावतार गोस्वामीजी ने अपने मन को कथा सुना रहे थे, संतों को कथा सुना रहे थे, उसके सामने कथा को विराम दिया। चारों परम आचार्यों ने अपनी संवादी कथा को अपने-अपने ढंग से विराम दिया। तुलसी विराम देते हुए तीन सूत्र देते हैं-

एहिं कालिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

पूरे 'रामचरितमानस' का अर्क, यह कलियुग में कोई साधन हम जैसों के लिए सुलभ नहीं है। तीन काम करो। राम को स्मरो। और अवसर मिले तब राम को ही गाओ। क्योंकि उसका नाम ही पतित पावन है। जिसका आश्रय करने से अधम से अधम भी कृतकृत्य होते हैं। हे मन, कुटिलाई तजकर उस राम को भज। जिसकी लवलेश कृपा हुई तो तुलसीदासजी कहते हैं, मेरे जैसा मतिमंद तुलसीदास परम का अनुभव करता है। राम के समान किसको कहूं?

चारों आचार्यों ने संवादी सूर में कथा को विराम दिया। और इन चारों आचार्यों की कृपा छाया में बैठकर हमने इस रमणीय भूमि पर नौ दिन के लिए स्वान्तः सुखाय 'रामायण' का प्रेमयज्ञ 'मानस-सीता' के नाम से किया। उसको विराम देने की घडियां बिलकुल करीब है तब ओर कुछ कहने को शेष नहीं है। फिर भी एकबार कहूं, तनुजा सेवा यह युवान भाईयों की; वित्त सेवा यह मार्गदर्शक वड़ीलों ने की; मानसिक सेवा अनगिनत आप सब श्रोताओं ने अपना भाव दिया। यह कथा सीतेशरण के मनोरथ की कथा, सुंदर कथा संपन्न हो रही है। तो यह मानसिक सेवा, तनुजा सेवा, वित्त सेवा जो-जो की उसके लिए बहुत प्रससन्नता व्यक्त करता हूं। और एक राम उपासक, सीता उपासक सीतेशरणजी का एक पावन मनोरथ सालों का वो पूरा हो रहा है।

तो समग्र आयोजन से मेरी पूरी प्रसन्नता व्यक्त कर रहा हूं। अब कुछ मुझे कहने को बचा नहीं है। केवल, केवल, केवल विराम के शब्द बोलूं, उससे पूर्व नौ तारीख त्रिभुवनीय दिवस है; त्रिभुवन का दिवस है। परम पावन व्यासपूर्णिमा, जिसको हम गुरुपूर्णिमा कहते हैं। एक सौ सत्रह देश सुन रहे हैं। इस कोलोराडो की कथा में सब से निवेदन करना चाहता हूं कि कुछ सालों पहले जरूर तलगाजरडा में गुरुपूर्णिमा का उत्सव होता था लेकिन कुछ सालों से हमने यह बंद कर दिया है। सबकी श्रद्धा और भाव है लेकिन मैं कहीं इन लोक मान्यता में फंस न जाऊं, इन लोक बाध्यता में बंध न जाऊं; क्योंकि मैंने कहा, मैं किसी का गुरु नहीं हूं, मेरा कोई शिष्य नहीं है। लेकिन फिर भी हमारे सब के सद्‌गुरु 'रामचरितमानस' है। और मुझे जहां से 'रामचरितमानस' मिला वो मेरे सद्‌गुरु भगवान, वो त्रिभुवनदास दादा, उसकी पादुका की पूजा करने के लिए व्यक्तिगत उत्सव है। इसलिए हम हर वक्त कहते हैं कि गुरुपूर्णिमा का कोई उत्सव तलगाजरडा में नहीं होता है।

तो कृपया कोई कष्ट न करे। फिर भी लोग आ जाते हैं भाव के कारण। सबको मिल लेता हूं चित्रकूट में तलगाजरडा में। आपकी जहां श्रद्धा है, जिस बुद्धपुरुष में आपकी आत्मा समर्पित है वो अपने-अपने स्थान में घर में बैठकर याद कर लें बस। त्रिभुवनीय गुरुपूर्णिमा की बुद्धीय चेतनाएं हम सबके अध्यात्म मार्ग में विशेष उजाला प्रदान करे। हमारा दूज का चांद पूर्णिमा तक गति करें। हम विकसते-विकसते पूर्णता की यात्रा करें। और तुलसी की तरह हम भी कह सके 'पायो परम विश्राम।' समस्त गुरुजनों की कृपा पूरे विश्व पर है। हम महसूस करें। आप सबको शुभ कामनाएं।

गुरु त्रिभुवन पर काम करता है। तीन शब्द है हमारे यहां; एक इन्ड, दूसरा पिन्ड और तीसरा ब्रह्मांड। गुरु तीनों पर काम करता है। यह तीन जीवन है। इन्ड मानी चेतन्य, आत्मा। गुरु हमारी आत्मा पर काम करता है। गुरु का लक्ष्य क्या है? आश्रित की आत्मा। उसको अन्डा सेवना है। कभी गुरु अपनी कृपादृष्टि से दूर से अन्डे को सेवित कर देते हैं। कभी गुरु स्पर्श से हमारे चैतन्य का ग्रहण करा देता है। कभी गुरु हमें चिंतन से कई माइलों हम दूर क्यों न हो हमारे चैतन्य को जागृत कर देता हैं। तो दृष्टि से, स्पर्श से, चिंतन से गुरु यह त्रिभुवनीय काम करता है। गुरु हमारे शरीर पर काम करता है। मतलब गलत अर्थ न करे। शरीर में इन्द्रियां है, कर्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय और सबसे जो श्रेष्ठ है वो है मन। गुरु क्या करता है? हमारे शरीर में जो इन्द्रियां है उस पर वो काम करता है। हमारी इन्द्रियों की दिशा बदलता है। आत्मा हमारे में है लेकिन खुश्बू नहीं आ रही है। जैसे कस्तुरी मृग खुश्बू तो आती है लेकिन वो बाहर ढूंढते हैं। और हमारी शारीरिक इन्द्रियां है। कान को यह दीक्षा दे; आंख को यह दीक्षा दे। पिन्ड का दान है। और तीसरा ब्रह्मांड में गुरुओं का ही साम्राज्य रहता है। तो त्रिभुवनीय काम गुरु करता है।

तो यह गुरु का स्मरण था। तो त्रिभुवनीय गुरु हमारे इन्ड पर, पिन्ड पर और ब्रह्मांड पर सदा-सदा काम करता है। गुरु के समान उदार ईश्वर भी नहीं होता है। गुरु के समान कृपालु परमात्मा भी नहीं होता है। गुरु के समान क्षमादाता परमात्मा भी नहीं होता। गुरु के समान वात्सल्य देनेवाले कोई नहीं। आप कल्पना करो, जिसके जो गुरु हो, हमारे गुरु ने हमें कितना दुलार दिया है? कभी श्लोक बोलकर, कभी लोकबोली बोलकर हमें हैया में झुलाता है। इन के प्रति आंसूओं का अभिषेक करने का गुरुपूर्णिमा का दिन है। ठीक है, जहां-जहां गुरु पूर्णिमा मनाई जाती हो। मैं तो इस दिन सुबह चार बजे मेरे गुरु की पादुका की पूजा कर लेता हूं उसी समय विश्व की समस्त बुद्ध चेतनाओं को प्रणाम करता हूं। मूल में तो मेरा त्रिभुवन गुरु होता है। 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना। आन जीव पांवर का जाना।' तो ऐसी गुरुपूर्णिमा जब आ रही है तब अपने-अपने गुरुओं के प्रति सद्‌भाव पेश करे। और मैं इतना ही कहूं कि मैं आप सबको उसी दिन याद करूंगा कैसे भी अपने ढंग से।

तो गुरुपूर्णिमा में इतना कहकर मैं नौं दिवसीय रामकथा को पूरा करूं पूरी प्रसन्नता के साथ। यह प्रेमयज्ञ माँ भगवती की कृपा से संपन्न होने जा रहा है चंद लम्हों में। और हनुमानजी महाराज को विदा दूं उससे पूर्व यह नव दिवसीय कथा 'मानस-सीता' हम सब मिलकर माँ सीता के चरणों में समर्पित कर दें; नव दिवसीय 'रामचरितमानस' का यह शुभ माँ सीता के चरणों में समर्पित कर दें। और माँ यदि पूछे, बच्चों, तुमने मेरे बारे में नव दिन गायन किया और यह फल मुझे दे रहे हो तो कुछ मांगो भी, तो हम इतना ही कहें-

जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।
हे माँ, हमारी बुद्धि निर्मल रखियो।
ताके जुग पद कमल मनावउँ।

माँ सीता के चरणों में यह फल रखता हूं। हनुमानजी को बिदा दूं उससे पूर्व आप सबको खूब-खूब शुभकानाएं, गुरु पूर्णिमा की बधाई। आशीर्वाद तो क्या लेकिन मेरे मन का भाव व्यक्त करूं। परमात्मा सबको खुश रखें। इन प्रेमयज्ञ में जिन-जिन ने आहुतियां डाली है; यहां के लोग, वहां के लोग, सब लोग और यह रमणीय भूमि, अमरिका के लोग सबको परमात्मा प्रसन्न रखे।

· मानस-मुशायरा ·

खुद को इतना भी मत बचाया कर।
बारिशे हो तो भीग जाया कर।

•

दर्द हीरा है दर्द मोती है।
दर्द आंखों से मत बहाया कर।

•

कौन कहता है दिल मिलाने को ?
कम से कम हाथ तो मिलाया कर।

– बशीर बद्र

मेरे दिल के कोने में एक मासूम सा बच्चा,
बड़ों की देखकर दुनिया बड़े होने से ड़रता है।

– राजेश रेड्डी

लाज़िम नही कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिये नाकामियों के साथ।

– दीक्षित दनकौरी

वो नहीं मेरा, मगर उससे मुहब्बत है तो है।
ये अगर रश्मों रिवाजों से बगावत है तो है।

– दीप्ति मिश्र

अगर नीचे उतर आऊं तो सबकुछ हाथ में है पर,
मैं नीचे आ नहीं सकता मेरा ऊंचा घराना है।

– राज कौशिक

कवचिदन्यतोऽपि

तपस्वीओं की पंचधूणी, साधुओं का पंचध्वनि और सर्जकों के पंचध्यान होते हैं

कागवंदना अवसर पर मोरारिबापू का प्रसंगोचित वक्तव्य

प्रतिवर्ष कागबापू के आंगन में हम मिलते हैं। कागबापू के पुण्यश्लोक नाम से एक अवोर्ड दिया जाता है, वंदना होती है लेकिन भगवत्कृपा से इस वर्ष तीन प्रवाह का संमिलन हुआ। एक तो सालों से यह धारा थी कि बापू के स्मरण में हम वंदना करते हैं। उसके साथ इस साल एक दूसरी धारा का मिलन हुआ। और पूज्य भगतबापू के प्रिय ग्रंथ 'रामचरितमानस' की नव दिवसीय कथा का आयोजन हुआ। और वह भी कागबापू का प्रांगण जिसको गुरुद्वार मानती है ऐसे अखेगढ के हमारे साधुकुल के परम पूज्य हरिवल्लभदासजी बापू की पावनी परंपरा में और अब श्री श्री १०८ महामंडलेश्वर वसंतदासजी बापू; दिनांक २ से १० आज करीब बारह-साड़े बारह बजे तक उन्हों ने रामकथा की धारा भी बहती की। और तीसरा प्रवाह भगवान का कागधाम में स्थापन हुआ। भगवान राम का पधारना, राधा-कृष्ण का पधारना; 'जन्म्यो जगतमां ज्यारथी काग हुं त्यारथी कृष्णनो पार लाग्यो।' वह राधा-कृष्ण का स्थापन। भगतबापू सावन मास में एक-एक मास ठहरते और शिव का अभिषेक करते। ऐसे एक ईष्ट शिव यह कागेश्वर महादेव की स्थापना। और भगतबापू का जो समाधिस्थान था, जहां उनकी पुष्पसमाधि थी वह समाधि को यथावत रखकर उसके उपर मंदिर निर्माण हुआ और वहां बापू की चरणपादुका को हमने स्थापित की। यह एक तीसरा प्रवाह। यह तीनों प्रवाह ने सबसे ज्यादा तलगाजरडा को प्रसन्न किया है। मैं बाबुभाई काग और उनके परिवार एवम् कागधाम-मजादर के सभी भाई-बहनों का आभार व्यक्त करता हूं कि आपने ऐसा सुंदर सत्कर्म का आयोजन किया। आखिर में मुझे तो कुछ कहना होता है। क्या कहना? लेकिन 'मानस' की चौपाई मदद करती है। उन्हें कहा नहीं जाता और फिर भी कहे बिना कोई रह भी नहीं सका।

तदपि कहें बिनु रहा न कोई।

कुछ कहना ही पड़ता है। फिर वाणी को पवित्र करनी है ऐसे शब्दों में कहे; 'स्वान्तः सुखाय' कहे या मेरे मन को कुछ बोध मिले इसलिए कहे। लेकिन कहे बिना रहा नहीं जाता। और कहा नहीं जाता तब एक ही बात शेष रहती है और

वह रोना। आदमी रोता है। उर्दू शायर का एक शे'र है-

कितना महफूज़ हूं इस कोने में,

मेरे घर के एक कोने में मैं कितना सुरक्षित हूं? शायर कहता हैं-

कितना महफूज़ हूं इस कोने में,
अब कोई डर नहीं है मुझे रोने में।

हम कोना ही पकड़ते आये हैं साहब! और कोने ने इस देश को बहुत मदद की है। त्रिकोण के तीन कोने; चतुष्कोण के चार कोने; पंचकोण के पांच कोने। छोड़ो! हमारे देहातों में जो मिट्टी के घर थे उसके कोने ने हमें जीवित रखा है। मुझे तो बहुत अनुभव है। तो बाप! कहे बिना रहा नहीं जाता। इसलिए कहता हूं।

मुझे तीन बात कहनी है। एक तपस्वी की बात कहनी है। एक साधु की बात कहनी है और एक सर्जक की बात कहनी है। तपस्वी किसको कहे? साधु किसको कहे? और सर्जक किसको कहे? तपस्वी की कई परिभाषाएं है। वैसे तो कोई पूरी साल तक उपवास करे वह भी तपस्वी है। दूसरों के ज़हर पी जाय वह भी तपस्वी है। कोई कितना भी कहे लेकिन कुछ बोले ही ना! और एक बात मुझे खास कहनी है। कुलीनता कभी मुखर नहीं होती। यह मेरा समाज लिख रखे कि कुलीनता कभी मुखर नहीं होती। उसे बोलना पड़े तब वह दो शब्द बोले। आदमी अनेकशः तप करता है। लेकिन सबका ध्यान केन्द्रित करे वह तपस्या है कि अयोध्या के और मुख्यतया वैष्णव तपस्वी साधुओं की है जो पंचधूणी तपता है। अब तो कोई ऐसे साधु नहीं आते। सभी के आश्रम बन चुके हैं। ठाकोरजी की कृपा से अक्सर सभी के पास इनोवा गाडी है। और शिष्यवृंद भी बहुत बड़े हैं। भगवद्कृपा है। इश्वर का भजन किया हो तो रिद्धि-सिद्धि क्यों न मिले? मिलनी चाहिए। इसलिए ऐसे साधु अब बहुत नहीं आते। लेकिन मैंने बचपन में रामजी मंदिर के चौतरे पर पंचधूणी तपते अयोध्या के साधुओं को देखा है। वह पंचधूणी कौन-सी? एक तो चारों ओर गोबर रख दे। एक यह अग्नि। दूसरा अग्नि, वह साधु भूखा रहे, जठराग्नि-देहाग्नि। तीसरा, वह सूर्य के ताप में बैठे और ताप के कारण पसीने से भीग जाय। वह तीसरा अग्नि। चौथा; पात्रता सिद्ध न हुई हो और तप में उतरा हो; गुरु ने उनके मस्तक पर हाथ न रखा हो और तपस्या में कूद पड़ा हो तब उनकी उर्जा वश में नहीं रहती वह चौथा अग्नि है। और पांचवां अग्नि; लक्ष्य पूरा न हुआ हो तो फिर शाप का अग्नि।

यह पांच अग्नि से तपस्वी तपे। अब पांच वस्तु साधु की। साधु यानी हम रामजी मंदिर के, कृष्ण मंदिर के, शिव मंदिर के पूजारी। वहां पंचधूणी है। हमारे पास पंचध्वनि है। तपस्वी पंचधूणी तपे। साधु पंचध्वनि तपे। वह पंचध्वनि कौन-सी? एक नगाड़ा। दूसरा ध्वनि झालर। तीसरी घंटड़ी। चौथा घंट। पांचवां शंख। हमारे साधुओं के यह पंचध्वनि में समग्र साधना हो जाय। शांति से विचार करो तो यह पांचों ध्वनि का पंचतत्त्वों के साथ प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष संबंध है। तपस्वी वह धूणी तपता है। देहातों में रहते मार्गी साधु यह पंचध्वनि साधता है। जिनको लोग बावा कहते हैं। और साधु ज्यादा राजी होते हैं। जितना उनको बावा कहे उनता वह ज्यादा आशीर्वाद देते हैं। वह पंचध्वनि का पंचतत्त्व के साथ संबंध है। शंख; शंख का संबंध जलतत्त्व के साथ है। शंख जल से निकलते हैं। और साधु शंख फूंके तब पानी भरकर शंख को साफ़ कर फिर शंख फूंके। शंख का सीधा संबंध जल तत्त्व के साथ है। झालर धातु है। यद्यपि घंटड़ी भी धातु है। घंट भी धातु है। लेकिन झालर को मुझे पृथ्वीतत्त्व के साथ जोड़ना है। वह धातु है। वह पृथ्वीतत्त्व से निकलती है। उसमें पृथ्वीतत्त्व है। अग्नितत्त्व है घंटड़ी। क्योंकि जब आरती हो तब घंटड़ी बजती है। वैसे घंटड़ी को सीधा अग्नितत्त्व कहना तो मुश्किल है। धूप-दीप करें और भगवान को भोजन करायें और घंटड़ी बजाकर परदा हटायें लेकिन घंटड़ी का मूल कार्य तो आरती के वक्त है। उसका अग्नितत्त्व साथ संबंध है।

वायुतत्त्व के साथ घंट का संबंध है। आप एक बार घंट बजाओ और मंदिर अगर बंधियार न हो तो घंट सुनाई दे। यह देश का दुर्भाग्य है कि यहां कई मंदिर-मस्जिद बंधियार हो गये हैं! जो मोक्ष के द्वार की बातें करते थे उसने हमारे जीवन में बंधन पैदा किये हैं। अगर मुक्तता हो मंदिर में तो घंट सुनाई दे। एक ही बार आप बजाओ फिर वायु उसका गुंजावर करता रहे। उसके अणु-परमाणु हमें सुनाई दे। और पवन की लहर भी घंट बजाती जाय साहब! और उसका गुंजारव धीरेधीरे विस्तरता रहे।

और नगाड़ा आकाशतत्त्व का उपासक है। वह कौन है? वह घटाकाश है; वह मठाकाश है; वह चिदाकाश है; वह निराकाश है। ये है नगाड़ा। अगर नगाड़े में पोलापन न हो तो नगाड़ा बजे नहीं। देशकाल में परिवर्तन हुआ। यह पांचों बजानेवालों में सिर्फ़ एक घंटड़ी बजानेवाला ही रहा। और सब बजानेवालों खो गये हैं! और इसलिए यंत्र लगाने पड़े हैं। यंत्रों से बजाना यह ठाकोरजी का अपमान है। वह आरती नहीं; वह उनकी पीड़ा है; उनकी वेदना है। तो नगाड़ा ये आकाशतत्त्व के साथ संबंध रखता है। साधु यह पांचों तत्त्व से साधते हैं। तपस्वी पांच-पांच अग्नि से तपता है। और तपस्वी को व्यक्तिगत फल मिलते हैं; सार्वजनिक फल कम मिलते हैं। साधु की साधना के फल पांचों तत्त्वों में विस्तरते है; चारों और उसका विस्तार होता है।

मुझे जो कहना है वह कागबापू को केन्द्र में रखकर कहना है। कागबापू सर्जक है। कागबापू दर्शक है। कागबापू चिंतक है। कागबापू विचारक है। कागबापू संस्कार और संस्कृति के रक्षक भी है। इसमें जरा भी अतिशयोक्ति अलंकार नहीं है। और जिस तरह मैंने कागबापू को देखा है। सर्जक, समर्थ सर्जक यह दाढ़ीवाला। और ये पंचधूणी तपे? नहीं तो। और पंचध्वनि? नहीं तो। वह पंचध्यानी होता है। जो सर्जक पंचध्यानी होता है उनके प्रांगण में ऐसी उज्जवल बातें होती है। भले ही समय बीत चुका हो। लेकिन पुराना नहीं होगा। मैं सुबह ही भीखुदानभाई को कहता था कि उपनिषद का सूत्र कहता है कि सत्य सुवर्ण से ढका हुआ है। सत्य सुवर्ण से ढक जाय वो मुझे पसंद है; मोरारिबापू को पसंद है। क्योंकि सुवर्ण भी सत्य है। उसे जंग नहीं लगता। लेकिन सांप्रत समय में तो सत्य कथीर और जंग से ढक जाता है! सत्य प्रपंच से ढकता है! सत्य जाता नहीं; ढक जाता है।

मुझे पीड़ा ये है साहब! मैं बहुत दर्द फील करता हूं कि क्या हो गया है जगत को? आज क्यों हम सब बिकते जा रहे हैं? क्यों बिक जाते हैं हम? सब बिकता जा रहा है साहब! हां, सरस्वती प्रसाद दिये बिना नहीं रहती। लेकिन सब बिकने लगा है! हमारा रमेश पारेख सच कह गया कि आज पयगंबरों की जीभ भी दो-दो पैसों में बिकती है! ऐसे समय में एक पीड़ा है। हमारा सत्य जंग लगे हुए लोहे से ढका है; प्रपंचों से ढका है; एक-दूसरे को काटने की वृत्ति से ढका है; कोई उंचे चढ़े तो उसको कैसे गिराया जाय, ऐसी प्रवृत्तियों से हमारा सत्य ढका हुआ है। सत्य का नाश नहीं होगा लेकिन सत्य ढक जाता है। सत्य सुवर्ण से ढका हुआ है, यह मुझे थोड़ा अच्छा लगता है। लेकिन आज कुछ ऐसी वस्तुओं से हमारा सत्य ढक जाता है तब सर्जक ने पांच ध्यान तपना होता है।

साधु की पंचध्वनि, तपस्वी की पंचधूणी और सर्जक का पंचध्यान। तो कौन-से पंचध्यान रखने हैं सर्जकों ने? एक, कविता के छंद के बंधारण का ध्यान रखना; छंद, प्रबंध; दोहे का बंधारण, छपैये का बंधारण, सवैये का बंधारण; वसंततिलका, मंदाक्रांता, शार्दूलविक्रीडित, पृथ्वी आदि जितने छंद है उसके बंधारण में ध्यान रखना चाहिए। यह भगतबापू का एक शब्द गलत न जाय। छंद, प्रबंध उसके अनेक प्रकार के नियम होते हैं। फिर अपना पिंगल हो, डिंगल हो, हमारा पूरा शास्त्र हो; उसमें मीटर होता है, ये सब उसके बंधारण में आना चाहिए। लेकिन किसीको हो कि मैं भी दोहे लिखने लगूं! ऐसा हो तो दूसरे लोग दाद देंगे, दोहा दाद नहीं देगा! और हमें दाद चाहिए दोहे की; दूसरों की नहीं। जिस दिन खुद दोहा दाद दे उस दिन आनंद आये। सर्जक ने, भगतबापू जैसे सर्जक ने किसका ध्यान रखना है? बंधारण का। और ऐसा बंधारण हमारे विद्वान, हमारे पूर्वसूरि चारणी साहित्य में देकर गये हैं कि अब तक उसमें से कोई कुछ परिवर्तन नहीं कर सके। पहला ध्यान ये है।

दूसरा ध्यान, जिनके चरित्र का वर्णन करो उनके चरित्र का ध्यान रखना। अगर मैं राम के चरित्र का वर्णन करूं तो मुझे राम के चरित्र का ध्यान रखना चाहिए। और मुझमें गुरुकृपा हो और रख सकूं इतना मुझे मेरे जीवन का भी ध्यान रखना चाहिए। यह दूसरा ध्यान है। चरित्रलेखन तो कोई भी करे। गांधी बापू ने बहुत अच्छा कहा। अपने जीवनवृत्तांत को उन्होंने आत्मकथा न कही; सत्य के प्रयोग कहे। आत्मा को कोई कथा होती ही नहीं! आप वेदांत लो। आत्मा को कथा नहीं होती; आत्मा को व्यथा नहीं होती; आत्मा को यथा नहीं होती; आत्म को तथा नहीं होती। आत्मा का निवेदन होता है। किसी के चरित्र

कवचिदन्यतोऽपि

काग अवोर्ड द्वारा आज एक बालक, एक कुमार, एक युवान,
एक वृद्ध और एक दिवंगत का सम्मान हुआ है

काग अवोर्ड अर्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रेरक उद्‌बोधन

सबसे पहले जिसके आंगन में हम प्रतिवर्ष मिलते हैं ऐसी एक बहुत बड़ी चेतना भगतबापू की, उसकी ज्योतिर्मय चेतना को मेरा प्रणाम। पूजनीया कंकुकेसर माँ, आई माँ बैठी है, उसको मेरा प्रणाम। जिसकी अवोर्ड द्वारा वंदना हुई वे पांचों व्यक्तित्व को मेरा प्रणाम। मेरी दृष्टि से यह पांच जो सम्मान हुए उसमें एक बालक का सम्मान हुआ है। एक कुमार का सम्मान हुआ है। एक युवान का सम्मान हुआ है। एक वृद्ध का सम्मान हुआ है और एक जो हाज़िर नहीं है उनका श्राद्धरूप सम्मान हुआ है। आप कहेंगे कि इसमें बालक कौन? कुमार कौन? युवान कौन? वृद्ध कौन? और जो दिवंगत है वह तो त्रापजकरदादा। एक बालक का सम्मान हुआ। मेरी दृष्टि से वह बालक हमारा कीर्ति है। मैंने उसको बालक के रूप में देखा है। उनकी प्रतिष्ठा, उनकी गायकी, उनके प्रति लोगों का आदर ये हम सब ने आंखों से देखा है। उनका आना ही पर्याप्त होता है। फिर भी जब भी मिलूं, कुछ भी बात हो, कुछ भी हो तो मैंने, यह मोरारिबापू ने देखा है, यह लड़का बालक जैसा है। वह रोता है मुसीबत में या हर्ष में। अब बालक का सम्मान कैसे किया जाय? हम पांव छूए तो उनको पसंद आये? न आये। उनको पसंद आये हमारे कंधे पर बिठाये तो। कीर्ति को कागबापू के आंगन में हम कंधे पर बिठाये। और यह अवोर्ड, यह राशि, यह शाल ये सब तो कीर्ति के लिए खिलौनें हैं। लेकिन कौन खिलौना देता है उस पर बहुत बड़ा आधार है। खिलौनें तो मेले में भी बिकते हैं। और शायद कोई ओफर भी करे कि दो खिलौनें लो तो तीसरा फ्री। ऐसा भी हो सकता है। लेकिन ऐसे एक भी खिलौने में बालक की रुचि नहीं होती। उनको अपने पिता या माता खिलौना दे उसमें रुचि होती है। और यह काग; यह भगतबापू सबकी माँ भी है और सबका बाप भी है। उससे कीर्ति को दुलार करने हम बैठे हैं; उन पर दुलार का हाथ फैरने बैठे हैं। चारणी समझ, चारणी चतुराई, चारणी स्पष्टता, चारणी ट्रान्सपरन्सी ये सब यह लड़के में मैंने देखा है। और इसलिए एक बालक को अवोर्ड प्रदान करते मोरारिबापू बहुत खुश होते हैं।

एक कुमार को अवोर्ड दिया जाता है। कुमार अवस्था में यज्ञोपवित दी जाती है।

के लिए काव्य लिखें तब उनके चरित्र का ध्यान रखना चाहिए। महाराणा प्रताप पर आप काव्य लिखो तब महाराणा का चारित्र्य कहीं खंडित न हो उसका ध्यान रखना चाहिए। अपनी झड़झमक के लिए चित्र में कहीं गलत रेखा खींची न जाय उसका हमें ध्यान रखना चाहिए। ब्ल्यू प्रिन्ट की अच्छी तरह से जांच करनी चाहिए। पशु हो, पक्षी हो, प्राणी इवन ज़हरीलें प्राणी हो, उसके चरित्र का ध्यान रखना चाहिए! और साथ ही हमें अपने जीवन का भी ध्यान रखना चाहिए। यह दूसरा ध्यान तपना पड़े।

तीसरा ध्यान; देश, काल, घटना और व्यक्ति- चारों के संदर्भ में कविता आनी चाहिए। यह गांधी चारों के संदर्भ में कागबापू को दिखाई दिया। देश मुताबिक; देश को आज़ादी की जरूरत थी। अहिंसा से ही आज़ादी प्राप्त करनी थी। और बापू ने काल को पकड़ा; वो समय को पकड़ा; यह देश को पकड़ा। और व्यक्ति एवम् घटना का संदर्भ भी देखना पड़े। क्योंकि कौन-सी व्यक्ति के साथ यह घटना घटी है या तो कौन-सी व्यक्ति को अकारण यह घटना में शरीक की गई है उसका सूक्ष्म निरीक्षण भी करना चाहिए। यह चारों का ख्याल रखना चाहिए। और फिर कोई सर्जक अपने हाथ में कलम ले।

चौथा ध्यान; जगत को जगाने के लिए निकले हो उन्हें कटाने की तैयारी रखनी चाहिए। हमारा जीवन एक्सप्रेस नहीं है। हमारे जीवन में अपमान के, बदनामी के, स्वीकार के, अस्वीकार के, निंदा के, कूथली के, गलतफ़हमी के ऐसे कई स्टेशन हमें लेना पड़ता है, तब बामुश्किल हम पहुंच सकते हैं। इसलिए सर्जक ने भी ऐसी तैयारी रखनी चाहिए। और पांचवां, उसे कोई जगदंबा का ध्यान होना चाहिए; कोई पराम्बा के साथ उसे अनुसंधान रखना चाहिए।

इस दाढ़ी का (कागबापू का) अब मूल्यांकन करो। उनकी कविताओं में उन्होंने छंद, प्रबंध, बंधारण का ध्यान रखा है कि नहीं ये विद्वानों तय करे। मैं कौन तय करनेवाला? यह कवि-सर्जक के मुख से जो कविता निकले वह बंधारणपूर्वक निकले साहब! उसका इस आदमी ने ध्यान रखा है। दूसरा ध्यान; यह प्रांगण के सर्जक ने दूसरा ध्यान रखा है चरित्र-चित्रण करते वक्त। जैसे कि गांधी का चरित्र-चित्रण करे तो गांधी की मूर्ति को खंडित न होने दे और खुद भी अपने जीवन का संपूर्ण ध्यान रखे। तीसरा ध्यान, देश-काल। गांधी का काल; गांधी के काव्य आये। विनोबा का काल; विनोबा के काव्य आये। योगी महाराज का काल; वह योगी के काव्य आये। ये सब देश-काल, व्यक्ति और घटना के संदर्भ में इस आदमी ने चित्रण किया हैं और तीसरा ध्यान रखा है। और चौथा, बदनामी कम नहीं मिली! उनके समकालीन लोग जानते हैं। उनके लिए कैसे-कैसे दोहे लिखे गये! कैसा-कैसा लिखा गया! और वो कहनेवाले उनके लोग ही थे! तो कागबापू ने बहुत सहन किया है। कितना ज़हर पीया होगा? फिर भी कई लोग उनके हाथों से अमृत झपटकर ले गये! ज़हर की तसली छोड़ गये और अमृत झपटकर ले गये! और इसलिए यह दाढी ने लिखना पड़ा-

झडपेलुं अमी अमर करशे,
पण अभय नहीं आपी शकशे।

पांचवां, जगदंबा का ध्यान रखना पड़ेगा। जगदंबा का ध्यान रखना पड़ेगा सर्जक ने। कोई भी विद्या प्रभु ने हमें दी हो तो यह पांच ध्यान रखना पड़ेगा। भगतबापू को शाम ढले तब धूपबत्ती जलाकर एक कमरे में एक घंटे चले जाते मैंने देखा है। दो बार मुझे यह अवसर मिला है। मैंने यहीं भी कहा है कि बापू भी बोले और फिर मुझे भी बोलना होता। लेकिन उनसे पहले वो कहे कि देवायत मुखी, मुझे धूपबत्ती दो। सर्जक को कहीं अनुसंधान रखना पड़ता है साहब!तो बाप! परमतत्त्व के साथ बहुत अनुसंधान रखना पड़ेगा।

साधुओं का पंचध्वनि, तपस्वी की पंचधूणी और मेरे कवि का पंचध्यान। यह प्रांगण में पंचध्यान ऋषि बैठा है और यह तपस्वी भी है। उनका वेश, उनके पद, उनकी बातें; उनमें साधुता भी भरी है। और यह आदमी सर्जक भी है। इसलिए पंचध्यानी भगतबापू के आंगन में प्रतिवर्ष ऐसा एक उत्सव- सात्त्विक उत्सव मनाया जाता है। भगतबापू के आंगन में आप सब आते हैं और हम सब मिलकर उनके पुण्यश्लोक नाम के साथ विभिन्न क्षेत्रों के विद्या के उपासकों की वंदना करते हैं उसका मुझे तो बहुत ही आनंद है।

(कागवंदना समारोह, कागधाम (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक: १०-३-२०१९)

भए कुमार जबहिं सब भ्राता।
दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता।।

चारों भाइयों ने कुमार अवस्था में प्रवेश किया तब उनको यज्ञोपवित दी गई। कुमार का जो सम्मान हुआ इस में आकाशवाणी के राजकोट केन्द्र को कागबापू ने यज्ञोपवित पहनाई है। उसको द्विजत्व दिया है कि यह अवोर्ड के बाद आपका एक नया जन्म होता है। अब कैसे-कैसे कार्यक्रम का निर्माण करना, देश-काल को क्या आवश्यक है उसके लिए कैसी खोज करनी? इसलिए कुमार के रूप में उसका यज्ञोपवित संस्कार है।

युवान के रूप में यह अवोर्ड हमारे सब के आदरणीय और मैं 'वडील' शब्द प्रयुक्त करता हूं लेकिन है युवान; यह अवोर्ड मैं वसंतभाई गढवी को प्रदान करता हूं। यह आदमी युवान है। वह निवृत्त हो तो भी युवान है। इतने समय से हम उनको सुनते हैं। उनके लेखों में युवानी है, वृद्धत्व नहीं। अब युवान को कैसे प्रसन्न करें? इनको तो यज्ञोपवित पहनाकर प्रसन्न किया; उसको खिलौना देकर खुश करें। लेकिन वसंतभाई को; यह अवोर्ड, प्रमाणपत्र, ये बस तो ठीक। मैं हरवक्त एक शे'र कहता हूं-

शायरी तो सिर्फ़ एक बहाना है,
असली मकसद तो तुझे रिझाना है।

वसंतभाई को मैं युवान कहता हूं। उनके प्रति व्यक्तिगत रूप में भी मेरा बहुत आदर है। वह विद्वान है; शालीन है; सच्चा चारण है। सभी आई माँ प्रसन्न हो ऐसा एक चारणत्व उनमें है। और यह युवानी माताजी कायम अखंड रखे ऐसी जगदंबा को प्रार्थना। और एक अवोर्ड वृद्ध को, हाडासाहब को दिया गया। वृद्ध आदमी को प्रसन्न करना बहुत कठिन है। आप उनके पांव छूओ; उनको वंदन करो कि बापा, मैं पग लागूं; तो उसमें वृद्ध खुश होते हैं। और उनको प्रणाम करके हम उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर रहे हैं। और मरणोत्तर त्रापजकरदादा। जैसे भगतबापू का मुझे परिचय हुआ लेकिन बहुत नहीं। मैं बहुत छोटा था। लेकिन त्रापजकरदादा के साथ मेरा बहुत परिचय रहा। वह उनकी उम्र होते हुए भी कभी भी तलगाजरडा आते। हम उनकी बातें सुनते। वह हमें आशीर्वाद देते। इस वर्ष का काग-अवोर्ड त्रापजकरदादा का श्राद्ध करता है। देर हुई होती तो हम अपराधी माने जाते। लेकिन यह उन्हें हम श्राद्ध करते हैं।

कर्मकांड में जो-जो वस्तु होनी चाहिए; जल चाहिए, आचमनी चाहिए; उस में एक है पंचपात्र। यह पंचपात्र है। हमारे यहां जब कोई बड़ा अतिथि आये; मानो हमारे यहां भगतबापू आये हो तो हम सबको ऐसा हो कि भगतबापू भोजन लेने बैठे हैं तो क्रमशः हम सब उनको परोसे। और कोई तसवीर खींच ले, ऐसा होता है। महात्मा गांधी किसी के घर भोजन करने जाय तो किसकी इच्छा नहीं होती कि हम परोसे? परोसने की इच्छा होती ही है। ऐसे जब कभी कोई विशिष्ट तत्त्व धरती पर आता है तब घूमती चेतनाओं को परोसने की ईच्छा होती है; मैं भी थोड़ा परोस आउं। मुझे ऐसा लगता है कि कीर्ति पंचपात्र का एक ऐसा पात्र है कि उसमें माँ जगदंबा ने कंठ परोस दिया; शब्द की समझ परोस दी। उनका विनोदी स्वभाव है लेकिन उन में मंच का गांभीर्य भी है। वह ऐसा एक पात्र है जिसको माँ ने कंठ दिया है। लोकसाहित्य, सुगम संगीत या शास्त्रीय संगीत और बीच में अपनी सहज कोमेन्ट ये सभी से समग्र श्रोतासमुदाय को लोहे की ज़ंज़ीर से नहीं, सोने की ज़ंज़ीर से थाम लेने का उनमें कौवत है। मुझे ऐसा लगता है कि भगवती शारदा ने यह पात्र में कंठ परोस दिया है।

आकाशवाणी राजकोट ये एक दूसरा पात्र है। जवाहरलाल नहेरु ने यह दिखाई दिया। हम बहुत खुश हुए। और राजनीतिवालों ने साहित्य की सेवा करनी ही चाहिए। जो राजनीति साहित्य की सेवा न करे; मैं साधु की सेवा का नहीं कहता। शायद किसीको ऐसा लगे कि ये तो अपनी सेवा कराने कहता है! और सच्चा साधु कभी किसी के पास सेवा की भीख मांगे ही ना। उसने तो पूरे जगत की सेवा करने के लिए जन्म लिया होता है। लेकिन पंडितजी को यह विचार आये और राजकोट को आकाशवाणी केन्द्र के लिए पसंद करे। साहित्य की बहुत ही आवश्यकता है। जवाहरलाल नेहरु और रामधारीसिंह 'दिनकर' दोनों प्लेन की सीढ़ी उतरते थे। और उसमें पंडितजी गिरते-गिरते रह गये तब रामधारीसिंह ने उनका हाथ थाम लिया। दोनों मित्र थे। उनके मार्कसवादी विचार थे। तो पंडितजी ने कहा, बहुत-बहुत धन्यवाद दिनकरजी। तो वो बोले, पंडितजी, राजनीति जब लड़खड़ाती है तब साहित्य ही उसको थाम लेता है। ऐसे शब्द उन्होंने कहे थे। तो आकाशवाणी राजकोट उनका

पात्र बन सका। और उसमें भगतबापू का कंठ; कितने-कितने नाम लूं? अभी पूरी नोंध दी गई कि इतने गायकों ने यह गाया, इतने गायकों ने यह गाया। उसको यह वस्तु का दान अस्तित्व ने किया।

तीसरा; मैं कहूं ये वसंतभाई को पसंद न आये; उनमें विद्वत्ता तो है ही लेकिन उनके पात्र में भगवती ने विवेक का दान दिया है; विवेक परोसा है। यह पात्र में समझ दी है; उसका दान किया है। चौथा पात्र हाडासाहब; उनमें जगदंबा ने कलम और विचारों का दान किया है। त्रापजकरदादा ब्राह्मण है; दान लेने का अधिकारी है। शास्त्र में ब्राह्मण के छः कर्म बताये हैं। दान लेना; दान देना; यज्ञ करना; यज्ञ कराना; विद्या पढ़ना; विद्या पढ़ाना। यह ब्राह्मण के कर्म है। 'भगवद्गीता' में ब्राह्मणों के स्वभाव और लक्षणों का वर्णन भी है। दादा के पात्र में नाटक, गीत काव्य, गज़ल, दोहा ये सब कितना-कितना अस्तित्व ने परोसा है! इसलिए मेरी दृष्टि से इस वर्ष का काग अवोर्ड पंचपात्र में जा रहा है। पंचपात्र में ये सब परोसा गया है। और बाबुभाई खुश हो; पूरा परिवार खुश हो। और यह परिवार मुझे अपना मानता है इसलिए मैं सबसे ज्यादा खुश होता हूं। खुश होने का मेरा यही ठिकाना है। मुझे आप कोई प्रमाणपत्र देकर खुश नहीं कर सकोगे। आप असफल होंगे। ये सब मेरा खुश होने का उत्सव है। अस्मितापर्व हो, संस्कृतपर्व हो, सद्भावनापर्व हो, केळवणीपर्व हो, ये सब मेरे लिए आनंद के उत्सव है। कथा करने का तो आनंद है ही। लेकिन श्रवण का भी ज्यादा आनंद है, अवश्य। ये मेरा अनुभव है।

युवानों, भाई-बहनों, किसी को भी सुनो। तुम्हारे जीवन में उपयोगी हो ऐसा कोई एक तत्त्व न मिले तो मोरारिबापू बावा नहीं! मुझे मिला है उसके आधार पर कह रहा हूं। कहीं से कविता की इच्छी पंक्ति मिले, कहीं से सूत्र मिले, कहीं से विचार मिले, यह श्रवण करें तो पता चले। श्रवण का आनंद होता है। आदमी को सुनना चाहिए। सुनकर जितना सीख सकते हैं उतना पढ़कर नहीं सीख सकते।

हरवक्त कहता हूं कि अवोर्ड किसको दिया जाय यह तय करने के लिए एक कमिटी बनती है। उसमें तीन-चार मेम्बर होते हैं। वह मेम्बर किसको रखे ये भी वे लोग निश्चित करते हैं। फिर वे लोग ही नाम निश्चित करते हैं। मुझे आखिर में बताया जाता है। इसमें मेरा सीधा या टेढ़ा कोई हाथ नहीं है! इसलिए मेरा चारण डायरा बुरा मत माने कि इसमें हमारा नाम क्यों नहीं आया? आएगा, आएगा, आएगा। कई लोग ऐसा ही मानते हैं कि बापू कहे फिर कौन ना बोले? लेकिन मैं बिलकुल हस्तक्षेप नहीं करता। यह एक उचित व्यवस्था है। रागद्वेषमुक्त निर्णय होते हैं। सुंदर योजनापूर्वक ये सब चलता है उसका मुझे आनंद है। फिर भी चारणी साहित्य के उपासक ज्यादा सम्मानित हो ऐसी उम्मीद मैं करता हूं। क्योंकि यह मशाल, यह दीप उन लोगों ने जलाये हैं और उसका जतन यह युवक पीढ़ी कर रही है।

मंत्रदृष्टा ऋषि हो उनको मंत्र उतरते दिखता है। पददृष्टा ऋषि हो उनको कविता की पंक्ति उतरती दिखती है। शब्ददृष्टा ऋषि को शब्दब्रह्म उसी को मूल टोन में उतरते दिखते हैं। और बीजदृष्टा गायक हो उसे पता भी न चले ऐसे वह स्टेज पर कोई भी पंक्ति अलग ही राग में कम्पोज़ कर दे क्योंकि उनको ये सब उतरता है। वैसे भगतबापू कभी मंत्रदृष्टा दिखते हैं; कभी काव्यदृष्टा दिखते हैं; कभी पददृष्टा दिखते हैं; कभी शब्ददृष्टा दिखते हैं; कभी बीजदृष्टा दिखते हैं। उनको ये सब उतरता है। और मैं ये सभी को खुश करने के लिए सुनता हूं। ये छोटे-बड़े सभी में कुछ उतरा है। चारण समाज ये मत भूले। उसमें तो ओलरेडी अवतार उतरे हैं। उनमें कुछ उतरा हैं। ये मरे मधुर पक्षपात है। हां, मुझे आनंद आता है। ये छोटे-छोटे बच्चों में कितना भरा हुआ है! यह संपदा व्यर्थ न हो ऐसी जगदंबा को प्राथना करूं। मैं प्रार्थना करूं कि यह संपदा का जतन हो और उसका विकास हो।

तलगाजरडा की आंख में एक मधुर सपना है। अल्लाह पूर्ण करे तो भी ठीक और न करे तो भी तेरी मर्ज़ी। तो तलगाजरडा का एक सपना है कि मेरे देश में कभी ऐसा न हो कि इसमें हाथ में कमल हो ऐसा एक निशान आये? यह मैंने सालों पहले गांधीनगर की कथा में कहा था। हमारे देश में ऐसा न हो कि हाथ रहे और उस हाथ में कमल हो और उसकी खुश्बू पूरे देश में फैलती रहे? खैर! ये सब तो बहुत मुश्किल है। उसमें कुछ हो सके ऐसा ही नहीं!

तो मेरे मन में आया कि यह राष्ट्र एक बने और नेक बने; हमारे पड़ोसी, हमारा समाज, हमारे भाईओं, हमारा परिवार एक बने और नेक बने। हम चलकर जाते

हो और रास्ते में पुराने अखबार में शिवजी या माताजी की तसवीर हो या तो कोई फटे हुए कागज़ में राम-कृष्ण का चित्र हो उस पर हम पैर नहीं रखते। तो फिर राम-कृष्ण ने जिनको जीवन दिया है उनके मुंह पर या उनके पेट पर लात मारने का हमें किसने सिखाया? इतनी हिफ़ाज़त करनेवाला आदमी जीवंत व्यक्ति की कद्र क्यों नहीं करता? ऐसे समय में सभी एक बने यह जरूरी है।

समाज तो जब दो गायक गाते हो उसमें एक गायक उन्हें पसंद हो तो उसमें ज्यादा तालियां बजायेगा और दूसरा जो नापसंद हो उसे गाते बंद करने के लिए ज्यादा तालियां बजायेगा! ऐसा भी हो सकता है। लेकिन हम आपस में एक-दूसरे को दाद देना सीखे कि वाह, वाह, वाह! हां, एक गायक गाता हो तब बाहर नहीं निकल जाना चाहिए! तू बैठ! ये तो अभी बालक है; उनकी पीठ पसार! तेरा हाथ घिस नहीं जाएगा! ऐसा हमें करना पड़ेगा। क्योंकि अब कोई अवतार नहीं आयेगा। हमारे बीच में से ही अवतार का निर्माण करना पड़ेगा। अब ग्रंथियां छोड़ दो। ये कार्य करने जैसा है। मैं तो साधुओं और बुद्धपुरुषों की प्रेम-परंपरा में कहता हूं कि जिसके पास ग्रंथ हो लेकिन ग्रंथि न हो ऐसे जीवंत नर का सेवन करो। चारण समाज के पास बहुत कुछ है! हां, बहुत कुछ है! माताजी ने कितना दिया है! यह जगदंबा ने पक्षपात किया है इसलिए कहता हूं। चारण समाज को कुछ विशेष दिया है। उसका जतन हो। विशेष कुछ न कहते हुए पुनः एक बार मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

पंचपात्रों को प्रणाम करता हूं। उनके उपर सरस्वती ने वह पात्र मों जो-जो परोसा है ये जगदंबा को प्रणाम करता हूं कि हे माँ, जहां-जहां पात्र मिले वहां ऐसा ही परोसते रहना। हम उसका आनंद ले सके। यह पांचों पात्रों को मैं वंदन करता हूं, अभिनंदन करता हूं। बाबुभाई और उनके पूरे परिवार को बहुत-बहुत साधुवाद देता हूं कि मौन रहकर यह आदमी कितना करता है! अच्छे मकान हो लेकिन अच्छी संतति हो तब जीने का आनंद आये साहब! और बाप को ऐसा हो कि मेरा पुत्र समझदार, तब बाप को ओर कुछ न चाहिए। उनका श्राद्ध न करो तो भी चले। उनको आप में श्रद्धा होनी चाहिए।

मुझे नये सप्तऋषिओं की खोज करनी है। यह मेरा एक दिव्य स्वप्न है। ऐसे तीन-चार मैंने निश्चित किया है। ऐसे तीन-चार खोजने बाकी है। और हां, अभी जीना है। हम जीते रहेंगे तब तक यह मंच से ऐसे दो-चार सितारे मिल जायेंगे और मेरा एक नया सप्तऋषि का मंडल होगा; जो तलगाजरडा के सप्तऋषि का मंडल होगा साहब! उनकी आरती उतारने का मनोरथ हुआ है साहब! उनका बहुत ही आनंद है। यह ज़िंदगी जीने जैसी है। और ये सभी मंचों ने नये कलेवर धारण किये हैं। ऐसा सुंदर वातावरण है उसमें श्वास भर लें; उस में जी लें; उसकी मौज कर लें। मैं तो मेरी मौज के लिए इन सब में साक्षी बनता हूं साहब! माताजी सब का भला करे। काठियावाडी बावा ने इसके सिवा कुछ मांगी ही नहीं। मैं तलगाजरडा में निकलूं; मेरे गांव की बहन-बेटियां बच्चे को लेकर पानी भरकर निकली हो तब मैं गाडी रुकूं। घुंघट खोलकर वह माताएं इतना ही कहे कि बापू, यह बच्चों का भला करना। इसके सिवा कुछ मांगते ही नहीं। मांगते है ये बड़े-बड़े लोग मांगते हैं! वही मांगते हैं। ऐसे समय में मुझे फिल्म के गीत की एक पंक्ति बहुत पसंद है साहब! और ये पंक्ति फिल्मगीत की है लेकिन बुद्धपुरुषों को लागू होती है। मैं दो साल से ये गीत सुनता हूं। बुद्धपुरुष का परिचय है उसी में-

सबकुछ सीखा हमने ना सीखी होशियारी।
जगत में सबकुछ सीख लेना; होशियारी न सीखना।
सच है दुनियावालों कि हम है अनाडी।
खुद को मर मिटने की ये जिद्द है हमारी।

यह बुद्धपुरुष को लागू होती पंक्तियां है। हीरा कीचड़ में गिरा हो तो कोई इसे छोड़कर चला जाय? अरे, कीचड़ में क्या, विष्टा में गिरा हो तो भी निकाल ले! कीमती चीज जहां पड़ी हो वहां से उठा लो साहब! और कई लोगों को ऐसा होता है कि बापू ये फिल्म के गाने गाते हैं! ऐसा तो बहुत कुछ नया-नया आयेगा! इस तरह इक्कीसवी सदी में बहुत आनंद करें। एक बालक का, एक कुमार का, एक युवान का, एक वृद्ध का सम्मान और एक मरणोत्तर श्राद्ध आज काग के आंगन में हुआ है उसकी बहुत खुशी है।

(काग अवोर्ड अर्पण समारोह में कागधाम (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्यः दिनांक १०-३-२०१९)

सांध्य-प्रस्तुति

कोई भी कन्या साधक है मेरी दृष्टि में। कन्यारूप में सीता साधक है। परिणीता के रूप में सीता विषयी है। ध्यान देना, समझकर सुनना। जिसका सुमिरन करने से दुनिया के सब विषय-विलास नष्ट हो जाते हैं ये रामप्रिया जगजननी है; उसको विषय आकृष्ट नहीं करता। लेकिन वन में रही तो भी आनंद में रही। कन्या सदैव साधक होती है। परिणीता सदैव विषयी होती है। होना चाहिए; उनका दायित्व है। लेकिन माँ सदैव सिद्ध होती है। कोई भी माँ सिद्ध होती है। माँ की अवस्था सिद्धावस्था है। यद्यपि सीता तो परम शुद्ध भी है।

•

'मानस' के सात सोपान में सीता के सात रूप है, ऐसा तलगाजरडा को दिखता है। 'बालकांड' में सीताजी का किशोरीरूप है। 'अयोध्याकांड' में सीता का कुलवधू का रूप है। कुलवधू को कैसे रहना चाहिए, एक ब्याही हुई स्त्री के आदर्श क्या होने चाहिए, ये 'अयोध्याकांड' में सीता ने दिखाया। 'अरण्यकांड' की सीता तपस्विनी सीता है। 'किष्किन्धाकांड' की सीता खोजी गई सीता का रूप है। इसके केन्द्र में सीता खोज का अभियान चला है। 'सुन्दरकांड' की सीता मेरी समझ में विरहिणी सीता है। 'लंकाकांड' की सीता है स्वर्णिम सीता, जो अग्निपरीक्षा से कनक पंकज की कली बनकर बाहर आई। 'उत्तरकांड' की सीता महाराणी है।

– मोरारिबापू

॥ जय सीयाराम ॥